संतबानी संग्रह

भाग २

(शब्द)

जिस मेँ

तो, साधोँ और परम भक्तौँ के चुने
शब्द मय टिप्पनी और संक्षिप्त जीवन-
रित्र उन महात्माओँ के जिन की
साखी भाग १ मेँ नहीँ दी है
छापे गये हैँ

"न भूतो न भविष्यति"—सुधाकर.

इलाहाबाद

लवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स मेँ प्रकाशित हुआ

सन् १९१५ ई०

[दाम १)

॥ संतबानी ॥

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्
बानी व उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी
हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो
सो प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से
कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्
दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल
मँगवाये। भर सक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं और फुटकर शब्दों
सर्व-साधारन के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्रायः कोई पुस्तक बिना दे
का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और क
अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्म
है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भ
महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के वृत्तांत और कौ
से फुट-नोट मे लिख दिये गये हैं।

दो अंतिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात संतबानी स
[साखी] और भाग २ [शब्द] छप चुकीं जिन का नमूना देख कर
पाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-वासी ने गद्गद होकर
"न भूतो न भविष्यति"।

अब कोई नई बानी किसी प्राचीन पुरुष की हमारे पास ... के
सिवाय कबीर साहिब और पलटू साहिब के विशेष पदों के ... उन की
नये छापे में बढ़ाये जा रहे हैं।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के ...
उन की दृष्टि में आवें उन्हें हम को कृपा करके लिख भेजें जिस से ...
छापे में दूर कर दिये जावें।

यद्यपि ऊपर लिखे हुए कारनों से इन पुस्तकों के छापने में बहुत ख
है तौ भी सर्व-साधारन के उपकार हेतु दाम आध आना फ़ी आठ पृष्ठ
से अधिक नहीं रक्खा गया है।

प्रोप्रैटर, बेलवेडियर छापाख़
इल

मई सन् १९१५ ई०

॥ सूचना ॥

यह संग्रह प्राचीन संतों और महात्माओं की बानी का जिन में से बहुतों ग्रंथ भारतवर्ष में प्रचलित हैं हमारे वैकुंठवासी मित्र, संतबानी के रसिक, रूप विद्या के सूर्य्य महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी के आग्रह से रूप हुए आरंभ किया गया था और थोड़े से महात्माओं की साखियाँ और ि उनके जीवन समय में चुने जा चुके थे उन को दिखलाये गये जिन को र वह गद्गद होकर बोले "न भूतो न भविष्यति"। इस पर महंत गुरुप्रसाद जो पास बैठे थे तर्क किया कि पंडित जी आप ने इस नमूने के विषय में जो "तो" कहा वह तो ठीक है पर "न भविष्यति" कैसे कहा, क्या आगे इस से संग्रह संतबानी-का नहीं रचा जा सकता? पंडित जी ने जवाब दिया कि इन संतों से बढ़कर महात्मा औतार धरैं या यही संत फिर देह धर कर उत्तम बानी कथैं तो हो सकता है क्योंकि इन महात्माओं की बानी का ग्रहकर्त्ता ने काढ़ कर धर दिया है।

पंडित जी के चोला छोड़ने पर इस संग्रह के पूरा करने का उत्साह भी ह का ढीला हो गया परन्तु अब कि संतबानी पुस्तक-माला के जितने ने को थे छप चुके अपने मित्र की इच्छानुसार इस संग्रह के पूरा करने र ध्यान गया और यथा शक्ति ठीक करके वह अब छापा जाता है।

इस ग्रंथ के दो भाग रक्खे गये हैं—पहिला साखी-संग्रह और दूसरा ग्रह। पहिले भाग में कुल ऐसे महात्मा जिनकी साखियाँ हम को मिलीं ई ह और उनका संक्षिप्त जीवन-चरित्र हर एक की बानी के सिरे पर या गया है। ऐसे महात्मा जिन के केवल पद मिले उनका संक्षिप्त -वृत्तान्त दूसरे भाग में इसी प्रकार से दिया गया है। सब मिला कर महात्माओं की चुनी हुई बानी इस ग्रंथ के दोनों भागों में छपी हैं जिन में २४ महा... वह ह जिन के ग्रंथ संतबानी पुस्तक-माला में छप चुके हैं— में ऐसी रोचक साखियाँ और पद बढ़ा दिये गये हैं जो पीछे से मिले। सिवाय १० ऐसे महात्मा जिनकी बानी पहिले इस कारन से नहीं छपी कि ा तो वह बहुत जगह छप चुकी है या उसके थोड़े ही पद मिले उनकी चुनी हुई बानी और शब्द भी इस संग्रह में छाप दिये गये ह चाहे वह एक ही पद हो। महात्माओं के नाम दूसरे पृष्ठ पर दिये हैं:—

संतबानी पुस्तक-माला वाले महात्मा

१ कबीर साहिब
२ रैदासजी
३ धनी धर्मदासजी
४ गुरु नानक
५ मीरा बाई
६ दादू दयाल
७ बाबा मलूक दास
८ सुन्दरदासजी
९ धरनीदासजी
१० जगजीवन साहिब
११ यारी साहिब
१२ दरिया साहिब (बिहार)
१३ दरिया साहिब (मारवाड़)
१४ दूलनदासजी
१५ बुल्ला साहिब
१६ केशवदासजी
१७ चरनदासजी
१८ सहजो बाई
१९ दया बाई
२० गरीबदासजी
२१ गुलाल साहिब
२२ भीखा साहिब
२३ पलटू साहिब
२४ तुलसी साहिब

[गुरु नानक साहिब के पद और सुंदरदासजी व पलटू साहिब की पहिले नहीं छपी थीं अब मिली हैं]

दूसरे महात्मा

१ पीपाजी
२ नामदेवजी
३ सदनाजी
४ सूरदासजी
५ स्वामी हरिदास
६ नरसी मेहता
७ गुसाईं तुलसीदासजी
८ नाभाजी
९ बुल्लेशाह।
१० काष्ठ जिह्वा स्वामी

बानियाँ महात्माओं की उनके जीवन समय के क्रम में रक्खी जिस से समय समय की परमार्थी उन्नति, विवेक, बिचार और दशा दरस जाय।

शब्दों की अक्षर-रचना और मात्रा प्रत्येक देश की बोली और अनुसार रक्खी गई है जिस में मूल न बदलै, सब को भाषा के एक में नहीं ढाला गया है—जैसे पंजाबी भाषा में "कुछ" को "कुज" को "बहु" कहते हैं; राजपूताना में "दाँव" को "डाँव", "दोला" को "सुना" को "सुएया", इत्यादि।

अन्य भाषाओं के पदों और शब्दों के अर्थ, और संकेतों या क़िस्सा-तलब बातों की कथा या भेद फुट-नोट में थोड़े में जता दिये गये हैं।

...नियाँ जो संतबानी पुस्तक-माला के मूल पाठ या नई ...पधार दी गई हैं और छापे की त्रुटियाँ जो ...प कर प्रेस के दवाव से मात्राओं के ...पत्र में दिखला दी गई हैं।

...म ६। अपने उन सहायकों को हृदय से धन्यवाद देते हैं जिन्होंने ...पद या साखियाँ भेज कर या पदों और साखियों के क्रम से बिठालने और छापे की त्रुटियों के शोधने में इस काम में सहायता की। संत सिंह जी ने तरनतारन ज़िला अमृतसर से गुरु नानक साहिब और ...ई की साखियाँ भेजीं, पंडित हरिनारायण जी पुरोहित बी० ए० (जयपुर एकौन्टन्ट-जेनरल) ने महात्मा सुन्दरदासजी की उत्तम साखियाँ, और ...गावख़्श सिंह (ज़मींदार मौज़ा टँडवा ज़िला फ़ैज़ाबाद) ने पलटू साहिब ...नदासजी की बहुत सी साखियाँ और पद भेजे, और लाला गिरधारी ...ईस धौलपुर) ने कबीर साहिब की साखियों की तर्तीब और नई ...के भेजने में सहायता की। बाबा अचिन्त सरन साधू राधास्वामी मत ...द। ने मूल पाठ के शोधने और संकेतों का भेद लिखने में असली और ...द दी, और बाबू वैष्णवदास बी० ए० (एकौन्टन्ट जेनरल रियासत ...और बाबू तेजसिंह बी० ए०, एल० एल० बी० (नत बख़्शी ...ह साहिब सी० एस० आई० इन्दौरवाले के पोते) से पदों को क्रम से ...रने और प्रूफ़ के शोधने में सहायता मिली। राव बहादुर लाला श्याम-...ल बी० ए०, सी० आई० ई० (मुरार, ग्वालियर) जो इस परोपकार के ...जीवन-चरित्र आदि का मसाला भेजने में मददगार रहे उनकी सहायता ...हम नहीं रही। इन सब महाशयों को हम पुनः पुनः धन्यवाद देते हैं॥

...ला कर २५४० चुनी हुई साखियाँ भाग १ में और ६०३ पद भाग २ ...। यदि कोई प्रेमी और रसिक जन इस सूचना के पृष्ठ २ वाले ...की उत्तम और मनोहर साखियाँ या पद जो संतबानी पुस्तक-माला ...थ में नहीं छपे हैं कृपा पूर्वक चुन कर भेज देंगे वह धन्यवाद सहित ...में शामिल किये जायँगे।

...लिपियाँ संतबानी की जो सम्पादक ने अनुमान बीस बरस के ...कट्ठा करके यथा शक्ति उन की त्रुटियों को ठीक किया था छप चुकीं ...वाय पलटू साहिब की थोड़ी सी मनोहर साखियों और बहुत से उत्तम पदों जो उन महात्मा की बानी छापने के पीछे हम को मिले। यह पुराने पदों के ...थ तीन भागों में इस क्रम से रक्खे गये हैं कि पहिले भाग में केवल कुंडलियाँ;

दूसरे भाग में रेख़ते, भूलने, अरिल, छंद और कवित्त; और तीसरे में रागों के पद वा भजन और साखियाँ। अनेक त्रुटियाँ भी जो पुराने छापे में गई थीं नई लिपि से मिलान करके सुधार दी गई हैं और नई टिप्पनि फुट-नोट में रख दी गई हैं ॥

१४ दूलनदासजी
१५ बुल्ला साहिब

इलाहाबाद, मई सन् १६१५. — अधम, संतबानीपुस्तक-माला सम्पादक।

सूचीपत्र

सूचीपत्र

कबीर साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ १ भाग १ संतबानी संग्रह]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

चल सतगुरु की हाट, ज्ञान बुधि लाइये।
कीजे साहिब से हेत, परम पद पाइये ॥१॥
सतगुरु सब कछु दीन्ह, देत कछु ना रह्यो।
हमहिं अभागिनि नारि, सुक्ख तजि दुख लह्यो ॥२॥
गई पिया के महल, पिया सँग ना रची।
हृदे कपट रह्यो छाय, मान लज्जा भरी ॥३॥
जहवाँ गैल सिलहली, चढ़ौं गिरि गिरि पड़ौं।
उठौं सम्हारि सम्हारि, चरन आगे धरौं ॥४॥
जो पिय मिलन की चाह, कौन तेरे लाज हो।
अधर मिलो ना जाय, भला दिन आज हो ॥५॥
भला बना संजोग, प्रेम का चोलना।
तन मन अरपैा सीस, साहिब हँस बोलना ॥६॥
जो गुरु रूठे होयँ, तो तुरत मनाइये।
हुइये दीन अधीन, चूक बकसाइये ॥७॥
जो गुरु होयँ दयाल, दया दिल हेरिहैं।
कोटि करम कटि जायँ, पलक छिन फेरिहैं ॥८॥
कहै कबीर समुझाय, समुझ हिरदे धरो।
जुगन जुगन करो राज, ऐसी दुर्मति परिहरो ॥९॥

(२)

तोहिं मोरी लगन लगाये रे फकिरवा ॥ टेक ॥
सोवत ही मैं अपने मँदिर मँ, सबदन मारि जगाये रे (फ०)१
बूड़त ही भव के सागर मैं, बहियाँ पकरि समुझाये रे (फ०)२
एकै बचन बचन नहिं दूजा, तुम मो से बंद छुड़ाये रे (फ०)३
कहै कबीर सुनो भइ साधो, सत्तनाम गुन गाये रे (फ०)४

(३)

सतगुरु हैं रँगरेज, चुनर मेरी रँगि डारी ॥टेक॥
स्याही रंग छुड़ाइ के रे, दियो मजीठा रंग।
धोये से छूटै नहीं रे, दिन दिन होत सुरंग ॥१॥
भाव के कुंड नेह के जल मँ, प्रेम रंग दइ बोर।
चसकी चास लगाइ के रे, खूब रँगी झकझोर ॥२॥
सतगुरु ने चुनरी रँगी रे, सतगुरु चतुर सुजान।
सब कछु उन पर वार दूँ रे, तन मन धन औ प्रान ॥३॥
कह कबीर रँगरेज गुरु रे, मुझ पर हुए दयाल।
सीतल चुनरी ओढ़ि के रे, भइहौं मगन निहाल ॥४॥

॥ नाम ॥

(१)

अजर अमर इक नाम है, सुमिरन जो आवै ॥ टेक ॥
बिनहीं मुख के जप करो, नहिं जीभ डुलावो।
उलटि सुरत ऊपर करो, नैनन दरसावो ॥१॥
जाहु हंस पच्छिम दिसा, खिरकी खुलवावो।
तिरबेनी के घाट पर, हंसा नहवावो ॥२॥

पानी पवन की गम नहीं, वोहि लोक मँझारा ।
ताही विच इक रूप है, वोहि ध्यान लगावो ॥३॥
जिमीं असमान उहाँ नहीं, वो अजर कहावै ।
कहै कबीर सोइ साध जन, वा लोक मँझावै ॥४॥

(२)

हंसा करो नाम नौकरी ॥ टेक ॥
नाम बिदेही निसि दिन सुमिरै, नहिं भूलै छिन घरी ॥१॥
नाम बिदेही जो जन पावै, कभुं न सुरति बिसरी ॥२॥
ऐसो सबद सतगुरु से पावै, आवा गवन हरो ॥३॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, पावै अमर नगरी ॥४॥

(३)

जो जन लेहिं खसम का नाउँ, तिन के सद बलिहारी जाउँ॥१
जो गुरु के निर्मल गुन गावै, सो भाई मेरे मन भावै ॥२॥
जेहिं घट नाम रह्यो भरपूर, तिन की पग पंकज हम धूर॥३
जाति जुलाहा मति का धीर, सहज सहज गुन रमे कबीर॥४

॥ चितावनी ॥

(१)

मन फूला फूला फिरै, जक्त मैं कैसा नाता रे ॥ टेक ॥
माता कहै यह पुत्र हमारा, बहिन कहै बिर[1] मेरा ।
भाई कहै यह भुजा हमारी, नारि कहै नर मेरा ॥१॥
पेट पकरि के माता रोवै, बाँहि पकरि के भाई ।
लपटि झपटि के तिरिया रोवै, हंस अकेला जाई ॥२॥

---

(१) बीर=भाई ।

जब लगि जोवै माता रोवै, बहिन रोवै दस मासा ।
तेरह दिन तक तिरिया रोवै, फेर करै घर बासा ॥३॥
चार गजी चरगजी मँगाया, चढ़ा काठ की घोड़ी ।
चारो कोने आग लगाया, फूँक दियो जस होरी ॥४॥
हाड़ जरै जस लाह कड़ी को, केस जरै जस घासा ।
सोना ऐसी काया जरि गइ, कोई न आयो पासा ॥५॥
घर की तिरिया ढूँढ़न लागी, ढूँढ़ि फिरी चहुँ देसा ।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, छाड़ौ जग की आसा ॥६॥

(२)

सुगवा पिँजरवा छोरि करि भागा ॥ टेक ॥
इस पिँजरे मैं दस दरवाजा,
दसो दरवाजे किवरवा लागा ॥१॥
अँखियन सेती नीर बहन लग्यो,
अब कस नाहिँ तू बोलत अभागा ॥२॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो,
उड़ि गे हंस टूटि गयो तागा ॥३॥

(३)

कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो ॥ टेक ॥
चंदन काठ कै बनल खटोलना, ता पर दुलहिन सूतल हो ॥१॥
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो, दुलहा मोसे रूसल हो ॥२॥
आये जमराज पलँग चढ़ि बैठे, नैनन आँसू टूटल हो ॥३॥
चारि जने मिलि खाट उठाइन, चहुँ दिसि धूधू उठल हो ॥४॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो, जग से नाता छूटल हो ॥५॥

(४)

बीती बहुत रहि थोरी सी ॥ टेक ॥
खाट पड़े नर झाँखन लागे, निकसि प्रान गयो चोरी सी॥१
भाई बंद कुटुँब सब आये, फूँक दियो मानो होरी सी ॥२
कहै कबीर सुनो भइ साधो, सिर पर देत हैँ झैाँरी सी ॥३॥

(५)

तोरी गठरी मेँ लागे चोर, बटोहिया का रे सोवै ॥टेक॥
पाँच पचीस तीन हैँ चुरवा, यह सब कीन्हा सोर–
बटोहिया का रे सोवै ॥१॥
जागु सबेरा बाट अनेड़ा, फिर नहिँ लागै जोर–
बटोहिया का रे सोवै ॥२॥
भवसागर इक नदी बहतु है, बिन उतरे जाव बोर[१]–
बटोहिया का रे सोवै ॥३॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, जागत कीजे भोर–
बटोहिया का रे सोवै ॥४॥

(६)

करम गति टारे नाहिँ टरी ॥ टेक ॥
मुनि बसिस्ट से पंडित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दसरथ को, बन मेँ बिपति परी[२]॥१॥
कहँ वह फंद कहाँ वह पारधि,[३] कहँ वह मिरग चरी[२] ।
सीता के हरि लेगयो रावन, सोने की लंक जरी[२] ॥२॥

(१) बूड़, डूब । (२) रामचन्द्र जी का वनवास, उनके पिता दसरथ का उनके वियोग में प्रान तजना, मारीच को मृगा बना कर रावन का सीताजी को चुरा ले जाना, और फिर रामचन्द्र का रावन को मारना और लंका को जलाना यह कथा प्रायः सब लोग जानते हैँ । (३) शिकारी ।

नीच हाथ हरिचन्द[१] बिकाने, बलि[२] पाताल धरी।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृग, गिरगिट जोनि परी[३]॥३॥
पाँडव जिन के आपु सारथी, तिन पर बिपति परी।
दुरजोधन को गर्ब घटायो, जदु कुल नास करी[४] ॥४॥
राहु केतु औ भानु चन्द्रमा, बिधि संजोग परी।
कहत कबीर सुनो भइ साधो, होनी हो के रही ॥५॥

(१) राजा हरिश्चन्द्र भारी दानी और सत्यवादी थे जिन्होंने विश्वामित्र को अपना सब राज पाट यज्ञ की दक्षिणा में दे दिया इस पर मुनिजी ने त... भार सोना दान-प्रतिष्ठा का अपना और निकाला। राजा हरिश्चन्द्र ने उसके लिये काशी में जाकर अपने को एक डोमड़े के हाथ और अपनी स्त्री और पुत्र को एक ब्राह्मण के हाथ बेच कर मुनि जी को संतुष्ट किया।

(२) राजा बलि बड़े प्रतापी और दानी थे जिन के द्वारे पर आप भगवान बौना का भेष धर कर तीन परग पृथ्वी माँगने गये। जब राजा बलि ने संकल्प कर दिया तब भगवान ने बैराट रूप धारन करके एक परग में स्वर्गादिक और एक में सारी पृथ्वी नाप ली और कहा कि अब बाकी तीसरा परग देव। राजा ने अपना शरीर भेंट किया जिसे तीसरे परग से नाप कर भगवान ने उन्हें अमर करके पाताल का राज्य दिया।

(३) राजा नृग रोज़ एक लाख गऊ दान दिया करते थे। एक बार कोई गऊ जो पहिले दिन दान हो चुकी थी नई गउवों में आ मिली और राजा ने उसे अनजान में दूसरे ब्राह्मण को संकल्प कर दिया। इस पर पहिले और दूसरे दिन के दान पानेवाले ब्राह्मणों में झगड़ा मचा और दोनों राजा के पास न्याव को गये। दोनों वही गऊ लेने पर हठ करते थे इस लिये राजा की बुद्धि चकराई और सोच में पड़ कर दोनों की दलील पर सिर हिला देते। इस पर उन ब्राह्मणों ने सराप दिया कि तुम गिरगिट की तरह सिर हिलाते हो वही बन जावगे। इस लिये राजा नृग मरने पर गिरगिट की जोनी पाकर एक अंधे कुए में पड़े हुए थे जब कृष्णावतार हुआ तब श्रीकृष्ण ने उनको तारा।

(४) पांडवों के रथ पर श्रीकृष्ण महाभारत की लड़ाई में आप सारथी बने और दुरजोधन का घमंड तोड़ा और कौरवों के कुल का और (परम धाम सिधारने के पहिले) अपने जदु कुल का नाश किया। पांडवों पर यह बिपति पड़ी थी कि अपना सब राज पाट अपनी स्त्री द्रोपदी सहित कौरवों के हाथ जुए में हार गये और मुद्दत तक बनोबास में कष्ट उठाया।

(७)

और मुए का सोग करीजे, तै। कीजै जो आपन जीजै ॥१॥
मैं नहिं मरौं मरै संसारा, अब मोहिं मिला जियावनहारा २
या देही परिमल महकंदा, ता सुख बिसरे परमानन्दा ॥३
कुअटा[1] एक पंच पनिहारी, टूटी लेजुरि[2] भरैं मतिहारी[3]॥४
कह कबीर इक बुद्धि बिचारी, ना वह कुअटा ना पनिहारी ॥५

(८)

टुक जिंदगी बँदगी कर लेना, क्या माया मद मस्ताना ॥टेक
रथ घोड़े सुखपाल पालकी, हाथी औ बाहन नाना।
तेरा ठाठ काठ की टाटी, यह चढ़ चलना समसाना[4] ॥१
रूम पाट[5] पाटम्बर अम्बर, जरी बफ़ का बाना।
तेरे काज गजी गज चारिक[6], भरा रहै तोशाखाना ॥२॥
खर्च की तदबीर करो तुम, मंजिल लंबी जाना।
पहिचन्ते का गाँव न मग में, चैाकी न हाट दुकाना ॥३॥
जीते जी ले जीति जनम को, यही गोय यहि मैदाना।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, नहिं कलि तरन जतन आना॥४

(६)

काया बैारी चलत प्रान काहे रोई ॥ टेक ॥
काया पाय बहुत सुख कीन्हो, नित उठि मलि मलि धोई।
सो तन छिया छार ह्वै जैहै, नाम न लैहै कोई ॥ १ ॥
कहत प्रान सुनु काया बैारी, मोर तोर संग न होई।
तोहि अस मित्र बहुत हम त्यागा, संग न लीन्हा कोई ॥२॥

---

(१) छोटा कुआँ। (२) रस्सी। (३) मतिहीन, अज्ञान। (४) समसान=मुरदा जलाने का घाट। (५) ऊनी कपड़ा। (६) चार एक।

ऊसर खेत के कुसा सँगाये, चाँचर चवर[१] के पानी।
जीवत ब्रह्म को कोई न पूजै, मुरदा के मिहमानी ॥३॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सेस सहस मुख होई।
जो जो जन्म लियो बसुधा[२] में, थिर न रह्यो है कोई॥४
पाप पुन्य हैं जन्म सँघाती, समुझि देख नर लोई।
कहत कबीर अभि अंतर की गति, जानत बिरला कोई ॥५॥

(१०)

उपजै निपजै निपजि समाई, नैनन देखि चल्यो जग जा। १
लाज न मरो कहो घर मेरा, अंत की बार नहीं कछु तेरा॥२
अनेक जतन करि काया पाली, मरती बेर अगिन सँग जाली३
चोवा चंदन मरदन अंगा, सो तन जरै काठ के संगा॥४॥
कहत कबीर सुनो रे गुनिया, बिनसै रूप देखैगी दुनियाँ॥५॥

(११)

यही घड़ी यह बेला साधो ॥ टेक ॥
लाख खरच फिर हाथ न आवै, मानुष जनम सुहेला ॥१॥
ना कोइ संगी ना कोइ साथी, जाता हंस अकेला ॥२॥
क्यों सोया उठि जागु सबेरे, काल मारँदा सेला[३] ॥३॥
कहत कबीर गुरू गुन गावो, झूठा है सब मेला ॥४॥

(१)

हटरी छोड़ि चलै बनिजारा ॥ टेक ॥
इस हटरी बिच मानिक मोती, कोइ बिरला परखनहारा ॥१
इस हटरी के नौ दरवाजे, दसवाँ ठाकुरद्वारा ॥ २ ॥
निकसि गइ थंभी ढहि परा मन्दिर, रलि गया चिक्कड़ गारा३
कहत कबीर सुनो भइ साधो, झूठा जगत पसारा ॥ ४ ॥

---

(१) परती ज़मीन की छिछली तलैया। (२) पृथ्वी। (३) तलवार।

(१३)

होली

आई गवनवाँ की सारी, उमिरि अबहीं मोरी बारी ॥टेक॥
साज समाज पिया लै आये, और कहरिया चारी।
बम्हना बेदरदी अचरा पकरि कै, जोरत गँठिया हमारी।
सखी सब पारत गारी ॥ १ ॥
बिधि[1] गति बाम कछु समझ परत ना, बैरी भई महतारी।
रोय रोय अँखियाँ मोर पोँछत, घरवाँ से देत निकारी।
भई सब कैा हम भारी ॥ २ ॥
गवन कराय पिया लै चाले, इत उत बाट निहारी।
छूटत गाँव नगर से नाता, छूटै महल अटारी।
करम गति टरै न टारी ॥ ३ ॥
नदिया किनारे बलम मोर रसिया, दीन्ह घुँघट पट टारी।
थरथराय तन काँपन लागे, काहू न देख हमारी।
पिया लै आये गोहारी ॥ ४ ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, यह पद लेहु बिचारी।
अब के गैाना बहुरि नहिँ औना, करिले भैँट अँकवारी।
एक बेर मिलि ले प्यारी ॥ ५ ॥

॥ लव ॥

जो कोइ या बिधि मन को लगावै, मन के लगाये प्रभु पावै॥१
जैसे नटवा चढ़त बाँस पर, ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरै सिर ऊपर, सुरति बरत[2] पर लावै ॥२॥
जैसे भुवंगम[3] चरत बनहिँ मेँ, ओस चाटने आवै।
कभी चाटै कभी मनि तन चितवै, मनि तजि प्रान गँवावै॥३

(१) ब्रह्मा। (२) डोरी। (३) साँप।

जैसे कामिनि भरे कूप जल, कर छोड़े बतरावै[१]।
अपना रँग सखियन सँग राचै, सुरति गगर पर लावै ॥४॥
जैसे सती चढ़ी सर[२] ऊपर, अपनी काया जरावै।
मातु पिता सब कुटुँब तियागै, सुरति पिया पर लावै ॥५॥
धूप दीप नैवेद अरगजा, ज्ञान की आरत लावै।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, फेर जनम नहिं पावै ॥६॥

॥ बिरह ॥

(१)

बालम आओ हमारे गेह रे, तुम बिन दुखिया देह रे॥टे०
सब कोइ कहै तुम्हारी नारी, मो को यह संदेह रे।
एकमेक ह्वै सेज न सोवै, तब लगि कैसो सनेह रे ॥ १ ॥
अन्न न भावै नींद न आवै, गृह बन धरै न धीर रे।
ज्यौं कामी को कामिनि प्यारी, ज्यौं प्यासे को नीर रे ॥२
है कोइ ऐसा परउपकारी, पिय से कहै सुनाय रे।
अब तो बेहाल कबीर भयो है, बिन देखे जिव जाय रे ॥३

(२)

प्रीति लगी तुम नाम की, पल बिसरै नाहीं।
नजर करो अब मिहर की, मोहिं मिलौ गुसाईं ॥ १ ॥
बिरह सतावै मोहिं को, जिव तड़पै मेरा।
तुम देखन की चाव है, प्रभु मिलौ सवेरा ॥ २ ॥
नैना तरसै दरस को, पल पलक न लागै।
दर्दवंद दीदार का, निसि बासर जागै ॥ ३ ॥
जो अब के प्रीतम मिलैं, करूँ निमिख[३] न न्यारा।
अब कबीर गुरु पाइया, मिला प्रान पियारा ॥ ४ ॥

---

(१) बात करती है। (२) आग, चिता। (३) छिन भर।

(३)

मिलना कठिन है, कैसे मिलैंगी पिय जाय ॥टेक॥
समझि सोचि पग धरौं जतन से, बार बार डिग जाय।
ऊँची गैल राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराय ॥१॥
लोक लाज कुल की मरजादा, देखत मन सकुचाय।
नैहर बास बसौं पीहर मैं, लाज तजी नहिं जाय ॥२॥
अधर भूमि जहँ महल पिया का, हम पै चढ़ो न जाय।
धन भइ बारी पुरुष भये भोला, सुरत झकोला खाय ॥३॥
दूतो सतगुरु मिले बीच मैं, दीन्हो भेद बताय।
दास कबीर पिया से भैंटे, सीतल कंठ लगाय ॥४॥

(४)

कौन मिलावै मोहिं जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥टेक॥
हौं[1] हिरनी पिय पारधी[2] हो, मारे सबद के बान।
जाहि लगी सो जानही हो, और दरद नहिं जान ॥१॥
मैं प्यासी हौं पीव की हो, रटत सदा पिव पीव।
पिया मिलै तो जीव है, ना तो सहजै त्यागौं जीव ॥२॥
पिय कारन पियरी भई हो, लोग कहै तन रोग।
छः छः लंघन मैं करौं रे, पिया मिलन के जोग ॥३॥
कह कबीर सुन जोगिनी हो, तन मैं मनहिं मिलाय।
तुम्हरी प्रीति के कारने हो, बहुरि मिलैंगे आय ॥४॥

(५)

होली

ये अँखियाँ अलसानी हो, पिय सेज चलो ॥ टेक ॥
खंभ पकरि पतंग अस डोलै, बोलै मधुरी बानी ॥१॥
फूलन सेज बिछाय जो राखंयो, पिया बिना कुम्हिलानी ॥२॥

---

(१) मैं। (२) शिकारी।

धीरे पाँव धरौ पलँगा पर, जागत ननद जिठानी ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, लोक लाज बिलछानी[१] ॥४॥

(६)

होली

नैहरवा हम काँ नहिं भावै ॥ टेक ॥
साईं की नगरी परम अति सुन्दर, जहँ कोइ जाय न आवै ।
चाँद सुरज जहँ पवन न पानी, को सँदेस पहुँचावै,
दरद यह साईं को सुनावै ॥ १ ॥
आगे चलौं पंथ नहिं सूझै, पीछे दोष लगावै ।
केहि बिधि ससुरे जावँ मोरी सजनी, बिरहा जोर जनावै,
बिषै रस नाच नचावै ॥ २ ॥
बिन सतगुरु अपनो नहिं कोई, जो यह राह बतावै ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सुपने न प्रीतम पावै,
तपन यह जिय की बुझावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बहुत दिनन मैं प्रीतम आये, भाग भले घर बैठे पाये ॥१॥
मंगलचार महा मन राखो, नाम रसायन रसना[२] चाखो ॥२॥
मंदिर महा भयो उँजियारा, लै सूती अपनो पिय प्यारा ॥३
मैं निरास जो नौनिधि पाई, कहा करौं पिय तुम्हरी बड़ाई४
कहतकबीरमैंकछुन हिंकीन्हा, सहज सुहाग पिया मोहिं दीन्हा ॥५

(२)

घूँघट का पट खोल रे, तो को पीव मिलैंगे ॥टेक
घट घट मैं वोहि साईं रमता, कटुकबचनमतबोलरे(तो को'
धन जोबन का गर्ब न कीजे, झूठा पचरँग चोल रे (तो को०)॥

(१) छोड़ी। (२) जीभ।

शून्य महल में दियना बारि ले, आसा से मत डोल रे (तो को०) ॥३
जोग जुगत से रंग महल में, पिय पाये अनमोल रे (तो को०) ॥४
कहै कबीर आनंद भयो है, बाजत अनहद ढोल रे (तो को०) ॥५॥

(३)

तो वा दिन फाग मचैहौं, जा दिन पिया मोरे द्वारे ऐहैं ॥ टेक ॥
रंग वही रँगरेजवा वाही, सुरँग चुनरिया रँगैहौं ॥१॥
जोगिन होइ के बन बन ढूँढ़ौं, वाही नगर में रहिहौं ॥२॥
बालपना गल सेल्हि बनैहौं, अंग भभूत लगैहौं ॥३॥
कह कबीर पिय द्वारे ऐहैं, केसर माथ रँगैहौं ॥४॥

(४)

पिया मेरा जागै मैं कैसे सोई री ॥ टेक ॥
पाँच सखी मेरे सँग की सहेली,
उन रँग रँगी पिया रँग न मिली री ॥ १ ॥
सास सयानी ननद बौरानी,
उन डर डरी पिय सार न जानी री ॥ २ ॥
द्वादस ऊपर सेज बिछानी,
चढ़ न सकौं मारी लाज लजानी री ॥ ३ ॥
रात दिवस मोहिं कूका मारै,
मैं न सुना रचि रहि सँग जार री ॥ ४ ॥
कह कबीर सुनु सखी सयानी,
बिन सतगुरु पिय मिले न मिलानो री ॥ ५ ॥

(५)

खंरे लगि गये बान सुरंगी हो ॥ टेक ॥
फूल सतगुरु उपदेस दियो है, होइ गयो चित्त भिरंगी हो ॥१
[illegible]न पुरुष की बनी है तिरिया, घायल पाँचो संगी हो ॥२

घायल की गति घायल जानै, क्या जानै जाति पतंगी हो ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, निसि दिन प्रेम उमंगी हो ॥४॥

(६)

हमन हैं इस्क मस्ताना, हमन को होसियारी क्या ।
रहैं आजाद या जग से, हमन दुनिया से यारी क्या ॥१॥
जो बिछुड़े हैं पियारे से, भटकते दर बदर फिरते ।
हमारा यार है हम में, हमन को इन्तिजारी क्या ॥२॥
खलक सब नाम अपने को, बहुत कर सिर पटकता है ।
हमन गुरु नाम साचा है, हमन दुनिया से यारी क्या ॥३॥
न पल बिछुड़ पिया हम से, न हम बिछुड़ें पियारे से ।
उन्हीं से नेह लागी है, हमन को बेकरारी क्या ॥४॥
कबीरा इस्क का माता, दुई को दूर कर दिल से ।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सिर बोझ भारी क्या ॥५॥

(७)

मन लागो मेरो यार फकीरी में ॥ टेक ॥
जो सुख पावो नाम भजन में, सो सुख नाहिं अमीरी में ॥१
भला बुरा सब को सुनि लीजै, कर गुजरान गरीबी में ॥२॥
प्रेम नगर में रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरी में ॥३॥
हाथ में कूँड़ी बगल में सोंटा, चारो दिसि जागीरी में ॥४॥
आखिर यह तन खाक मिलैगा, कहा फिरत मगरूरी में ॥५
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिलै सबूरी में ॥६॥

(८)

साधो सहज समाधि भली ।
गुरु प्रताप जा दिन से जागी, दिन दिन अधिक चली ॥१
जहँ जहँ डोलौं सो परिकरमा, जो कछु करौं सो सेवा ।
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा ॥२॥

जहँ सो नाम सुनौं सो सुमिरन, खावँ पियौं सो पूजा।
गिरह उजाड़ एक सम लेखौं, भाव मिटावौं दूजा ॥३॥
आँख न मूँदौं कान न रूँधौं, तनिक कष्ट नहिं धारौं।
खुले नैन पहिचानौं हँसि हँसि, सुंदर रूप निहारौं ॥४॥
सबद निरन्तर से मन लागा, मलिन वासना त्यागी।
ऊठत बैठत कबहुँ न छूटै, ऐसी तारी लागी ॥ ५ ॥
कह कबीर यह उनमुनि रहनी, सो परगट करि गाई।
दुख सुख से कोइ परे परम पद, तेहि पद रहा समाई ॥६

(९)

गुरु ने मोहिं दीन्ही अजब जड़ी ॥ टेक ॥
सोई जड़ी मोहिं प्यारी लगतु है, अमृत रसन भरी ॥१॥
काया नगर अजब इक बँगला, ता में गुप्त धरी ॥ २ ॥
पाँचो नाग पचीसो नागिन, सूँघत तुरत मरी ॥ ३ ॥
या कारे ने सब जग खायो, सतगुरु देख डरी ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, लै परिवार तरी ॥ ५ ॥

(१०)

होली

ऋतु फागुन नियरानी, कोइ पिया से मिलावै ॥ टेक ॥
सोइ तो सुँदर जाको पियको ध्यान है, सोइ पियके मनमानी।
खेलत फाग अंग नहिं मोड़ै, सतगुरु से लिपटानी ॥१॥
इक इक सखियाँ खेल घर पहुँचीं, इक इक कुल अरुझानी।
इक इक नाम बिना बहकानी, हो रहि ऐंचा तानी ॥२॥
पिय को रूप कहाँ लग बरनौं, रूपहि माहिं समानी।
जो रँग रँगे सकल छबि छाके, तन मन सभी भुलानी ॥३॥
यों मत जाने यहि रे फाग है, यह कछु अकथ कहानी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, यह गति बिरले जानी ॥४॥

(१)

॥ विनय ॥

(चौपाई)

दरसन दीजे नाम सनेही। तुम बिन दुख पावै मेरी देही॥

(छंद)

दुखित तुम बिन रटत निसि दिन, प्रगट दरसन दीजिये।
बिनती सुन प्रिय स्वामियाँ, बलि जाउँ बिलँब न कीजिये॥१

(चौपाई)

अन्न न भावै नींद न आवै। बार बार मोहिं बिरह सतावै॥

(छंद)

बिबिध बिधि हम भईं ब्याकुल, बिन देखे जिव ना रहै।
तपत तन जिव उठत झाला, कठिन दुख अब को सहै॥२

(चौपाई)

नैनन चलत सजल जल धारा। निसि दिन पंथ निहारौं तुम्हारा॥

(छंद)

गुन औगुन अपराध छिमा करि, औगन कछु न बिचारिये।
पतित-पावन राखु परमति[१], अपना पन न बिसारिये॥३॥

(चौपाई)

गृह आँगन मोहिं कछु न सुहाई, बज्र भई और फिरयो न जाई॥

(छंद)

नैन भरि भरि रहे निरखत, निमिख नेह न तुड़ाइये।
बाँह दीजे बंदी-छोड़ा, अब के बंद छुड़ाइये॥४॥

(चौपाई)

मीन मरै जैसे बिन नीरा। ऐसे तुम बिन दुखित सरीरा॥

(छंद)

दास कबीर यह करत बिनती, महा पुरुष अब मानिये।
दया कीजे दरस दीजे, अपना करि मोहिं जानिये॥५॥

---

(१) उच्च मत या भाव।

(२)

दरमाँदे ठाढ़े दरबार ॥टेक॥

तुम बिन सुरत करै को मेरी, दरसन दीजै खोलि किवार ॥१॥
तुम हौ धनी उदार दयालू, स्रवनन सुनियत सुजस तुम्हार॥२
माँगौं कौन रंक सब देखौं, तुमहीं तें मेरो निस्तार ॥३॥
जैदेव नामा बिप्र सुदामा[१], तिन पर किरपा भई अपार॥४
कह कबीर तुम समरथ दाता, चार पदारथ देत न बार ॥५॥

॥ साधु ॥

नारद साध से अंतर नाहीं ।
जो कोइ साध से अंतर राखै, सो नर नरकै जाहीं॥१॥
जागै साध तो मैं हूँ जागूँ, सोवै साध तो सोऊँ ।
जो कोइ मेरे साध दुखावै, जरा मूल से खोऊँ ॥२॥
जहाँ साध मेरो जस गावै, तहाँ करूँ मैं बासा ।
साध चलै आगे उठ धाऊँ, मोहिं साध की आसा ॥३॥
माया मेरी अर्ध-सरीरी, औ भक्तन की दासी ।
अठसठ तीरथ साध के चरनन, कोटि गया औ कासी ॥४
अंतरध्यान नाम निज केरा, जिन भजिया तिन पाई ।
कहत कबीर साध की महिमा, हरि अपने मुख गाई ॥५॥

॥ सार गहनी ॥

मन मस्त हुआ तब क्यौं बोलै ॥ टेक ॥
हीरा पायो गाँठ गठियायो, बार बार वा को क्यौं खोलै॥१
हलकी थी जब चढ़ी तराजू, पूरी भई तब क्यौं तोलै ॥२
सुरत कलारी भइ मतवारी, मदवा पी गइ बिन तोले ॥३॥
हंसा पाये मानसरोवर, ताल तलैया क्यौं डोलै ॥४॥

(१) जैदेव और नामदेव परम भक्त और सुदामा श्रीकृष्ण के सहपाठी महा दरिद्र थे जिन की गाढ़ में भारी सहायता हुई।

तेरा साहिब है घट माहीं, बाहर नैना क्यौं खोलै ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिल गये तिल ओलै[1]॥६

॥ सतसंग ॥

मैं तो आन पड़ी चोरन के नगर, सतसंग बिना जिय तरसे॥१
इस सतसँग मैं लाभ बहुत है, तुरत मिलावै गुरु से ॥२॥
मूरख जन कोइ सार न जानै, सतसँग मैं अमृत बरसे ॥३॥
सबद सा हीरा पटकि हाथ से, मुट्ठी भरी कंकर से ॥४॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, सुरत करो वहि घर से ॥

॥ भेद बानी ॥

(१)

सार सबद गहि बाचिहै[2], मानौ इतबारा ॥ १ ॥
सत्त पुरुष अच्छै बिरिछ, निरंजन डारा ॥ २ ॥
तीन देव साखा भये, पाती संसारा ॥ ३ ॥
ब्रह्मा बेद सही किया, सिव जोग पसारा ॥ ४ ॥
बिस्नु माया परगट किया, उरले[3] ब्योहारा ॥ ५ ॥
तिरदेवा ब्याधा[4] भये, लिये बिष का चारा ॥ ६ ॥
कर्म की बंसी डारि के, फाँसा संसारा ॥ ७ ॥
जोति सरूपी हाकिमा, जिन अमल पसारा ॥ ८ ॥
तीन लोक दसहूँ दिसा, जम रोके द्वारा ॥ ९ ॥
अमल मिटावौं तासु का, पठवौं भव पारा ॥१०॥
कह कबीर अम्मर करौं, जो होय हमारा ॥११॥

(२)

सहरम होय सो जानै साधो, ऐसा देस हमारा ॥टेक॥
बेद कतेब पार नहिं पावत, कहन सुनन से न्यारा।
जाति बरन कुल किरिया नाहीं, संध्या नेम अचारा ॥१॥

(१) ओट। (२) बचोगे। (३) इधर का अर्थात पिंड देश का। (४) चिड़ीमार।

बिन जल बूँद परत जहँ भारी, नहिँ मीठा नहिँ खारा।
सुन्न-महल मेँ नौबत बाजै, किँगरी बीन सितारा ॥२॥
बिन बादर जहँ बिजुरी चमकै, बिन सूरज उँजियारा।
बिना सीप जहँ मोती उपजै, बिन सुर सबद उचारा ॥३॥
जोति लजाय ब्रह्म जहँ दरसै, आगे अगम अपारा।
कह कबीर वहँ रहनि हमारी, बूझै गुरुमुख प्यारा ॥४॥

(३)

रेख़ता

गंग औ जमुन के घाट को खोजि ले,
भँवर गुंजार तहँ करत भाई।
सरसुती नीर तहँ देखु निर्मल बहै,
तासु के नीर पिये प्यास जाई ॥ १ ॥
पाँच की प्यास तहँ देखि पूरी भई,
तीन की ताप तहँ लगै नाहीं।
कहै कब्बीर यह अगम का खेल है,
गैब का चाँदना देख माहीं ॥ २ ॥

(४)

रेख़ता

करत कलोल दरियाव के बीच मेँ,
ब्रह्म की छौल मेँ हंस झूलै।
अर्ध औ उर्ध की पैँग बाढ़ी तहाँ,
पलटि मन पवन को कँवल फूलै ॥ १ ॥
गगन गरजै तहाँ सदा पावस झरै,
होत झनकार नित बजत तूरा।
बेद कत्तेब की गम्म नाहीँ तहाँ,
कहै कब्बीर कोइ रमै सूरा ॥ २ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ि दे मन बौरा डगमग ॥ टेक ॥
अब तो जरे मरे बनि आवै, लीन्हो हाथ सिंधोरा ;
प्रीत प्रतीत करो दृढ़ गुरु की, सुनो सबद घनघोरा ॥१॥
होइ निसंक मगन ह्वै नाचै, लोभ मोह भ्रम छाड़ै ।
सूरा कहा मरन से डरपै, सती न संचय भाँड़े ॥ २ ॥
लोक लाज कुल की मरजादा, यही गले में फाँसी[१] ।
आगे ह्वै पग पाछे धरिहो, होय जक्त में हाँसी ॥३॥
अगिन जरे ना सती कहावै, रन जूझे नहिं सूरा ।
बिरह अगिन अंतर में जारै, तब पावै पद पूरा ॥ ४ ॥
यह संसार सकल जग मैला, नाम गहे तेहि सूँचा ।
कहै कबीर भक्ति मत छाड़ो, गिरत परत चढ़ु ऊँचा ॥५॥

(२)

अवधू भूले को घर लावै, सो जन हम को भावै ॥टेक॥
घर में जोग भोग घर ही में, घर तजि बन नहिं जावै ।
बन के गये कलपना उपजै, तब धौं कहाँ समावै ॥१॥
घर में जुक्ति मुक्ति घर ही में, जो गुरु अलख लखावै ।
सहज सुन्न में रहै समाना, सहज समाधि लगावै ॥ २ ॥
उनमुनि रहै ब्रह्म को चीन्है, परम तत्त को ध्यावै ।
सुरत निरत से मेला करिके, अनहद नाद बजावै ॥३॥
घर में बसत बस्तु भी घर है, घर ही बस्तु मिलावै ।
कहै कबीर सुनो हो अवधू, ज्यों का त्यों ठहरावै ॥४॥

(३)

भजि ले सिरजनहार, सुघर तन पाय के ॥ टेक ॥
काहे रहौ अचेत, कहाँ यह औसर पैहौ ।
फिर नहिं ऐसी दैंह, बहुरि पाछे पछितैहौ ॥

---

(१) घरतन ।

लख चौरासी जोनि मेँ, मानुष जन्म अनूप ।
ताहि पाय नर चेतत नाहीँ, कहा रंक कहा भूप ॥ १ ॥
गर्भ वास मेँ रह्यो, कह्यो मैँ भजिहैँ तोहीँ ।
निस दिन सुमिरैँ नाम, कष्ट से काढ़ो मोहीँ ॥
चरनन ध्यान लगाइ के, रहैँ नाम लौ लाय ।
तनिक न तोहि बिसारिहैँ, यह तन रहै कि जाय ॥ २॥
इतना किये करार, काढ़ि गुरु बाहर कीन्हा ।
भूलि गयौ वह बात, भयौ माया आधीना ॥
भूली बातैँ उद्र की, आन पड़ी सुधि एत ।
बारह बरस बीति गे या बिधि, खेलत फिरत अचेत ॥३॥
बिषया बान समान, दैँह जोबन मद माती ।
चलत निहारत छाँह, तमक के बोलत बाती ॥
चोवा चंदन लाइ के, पहिरे बसन रँगाय ।
गलियाँ गलियाँ झाँकी मारै, पर तिरिया लख मुसकाय ॥४
तरुनापन गइ बीत, बुढ़ापा आनि तुलाने ।
काँपन लागे सीस, चलत दोउ चरन पिराने ॥
नैन नासिका चूवन लागे, मुख तैँ आवत बास ।
कफ पित कंठै घेर लियो है, छुटि गइ घर की आस ॥५॥
मातु पिता सुत नारि, कहौ का के सँग जाई ।
तन धन घर औ काम धाम, सबही छुटि जाई ॥
आखिर काल घसीटिहै, पड़िहौ जम के फन्द ।
बिन सतगुरु नहिँ बाचिहौ, समुझ देख मति मन्द ॥६॥
सुफल होत यह दैँह, नेह सतगुरु से कीजै ।
मुक्ती मारग जानि, चरन सतगुरु चित दीजै ॥

नाम गहै निरभय रहै, तनिक न ब्यापै पीर।
यह लीला है मुक्ति की, गावत दास कबीर ॥ ७ ॥

(४)

करो जतन सखि साईं मिलन की ॥ टेक ॥
गुड़िया गुड़वा सूप सुपलिया।
तजि दे बुधि लरिकैयाँ खेलन की॥१॥
देवता पित्तर भुइयाँ भवानी।
यह मारग चौरासी चलन की ॥२॥
ऊँचा महल अजब रँग बँगला।
साईं की सेज जहाँ लगी फूलन की ॥३॥
तन मन धन सब अर्पन करि वहाँ।
सुरत सम्हार परु पइयाँ सजन की ॥४॥
कहै कबीर निर्भय होय हंसा।
कुंजी बता द्यौं ताला खुलन की ॥५॥

(५)

जाग पियारी अब का सोवै।
रैन गई दिन काहे को खोवै ॥१॥
जिन जागा तिन मानिक पाया।
तैं बौरी सब सोय गँवाया ॥२॥
पिय तेरे चतुर तू मूरख नारी।
कबहुँ न पिय की सेज सँवारी ॥३॥
तैं बौरी बौरापन कीन्हो।
भर जोबन पिय अपन न चीन्हो ॥४॥
जाग देख पिय सेज न तेरे।
तोहि छाड़ि उठि गये सबेरे ॥५॥

कहै कबीर सोई घन जागै ।
सबद बान उर अन्तर लागै ॥६॥

(६)

अँधियरवा मेँ ठाढ़ि गोरी का करलू ॥ टेक ॥
जब लगि तेल दिया मेँ बाती, येहि अँजोरवा बिछाय घलतू।
मन का पलँग सँतोष बिछौना, ज्ञान के तकिया लगाय रखतू
जरि गया तेल बुझाय गइ बाती, सुरत मेँ मुरत समाय रखतू
कहै कबीर सुनो भाई साधो, जोतिया मेँ जोतिया मिलाय रखतू

(७)

उठो सोहंगम नारि, प्रीति पिय से करो ।
यह उरले ब्योहार, दूर दुरमति धरो ॥१॥
पाँच चोर बड़ जोर, संगि एते घने ।
इन ठगियन के साथ, मुसै घर निसु दिने ॥२॥
सोवत जागत चोर, करै चोरी घनी ।
आपु भये कुतवाल, भली बिधि लूटहीँ ॥३॥
द्वादस नगर मँझार, पुरुष इक देखिये ।
सोभा अगम अपार, सुरति छबि पेखिये ॥४॥
होत सबद घनघोर, संख धुनि अति घनी ।
तंतन की झनकार, बजत झीनी झिनी ॥५॥
है कोइ महरम साध, भले पहिचानिये ।
सतगुरु कहै कबीर, संत को बानि ये ॥६॥

(८)

राग जँतसार

सुरति मकरिया गाड़हु हे सजनी—अहे सजनी ।
दूनोँ रे नयनवाँ जोतिया लावहु रे की ॥१॥

मन धरु मन धरु मन धरु हे सजनी–अहे सजनी ।
अइसन समइया फिरि नहिँ पावहु रे की ॥२॥
दिन दस रजनी सुख करु हे सजनी–अहे सजनी ।
इक दिन चाँद छपाइल रे की ॥३॥
सँगहिँ अछल पिया भरम भुलइली हे सजनी–अहे सजनी।
मोरे लेखे पिया परदेसहिँ रे की ॥४॥
नव दस नदिया अगम बहे सोतिया हे सजनी–अहे सजनी।
बिचहिँ पुरइनि दह[१] लागल रे की ॥५॥
फुल इक फुलले अनुप फुल सजनी–अहे सजनी ।
तेहि फुल भँवरा लुभाइल रे की ॥६॥
सब सखि हिलिमिलि निज घर जाइब हे सजनी–अहे सजनी।
समुँद लहरिया समाइब रे की ॥७॥
दास कबीर यह गवलैँ लगनियाँ हे सजनी–अहे सजनी ।
अब तो पिया घर जाइब रे की ॥८॥

(६)

रेख़ता

सुख सिंध की सैर का स्वाद तब पाइहै,
चाह का चैातरा भूलि जावै ।
बीज के माहिँ ज्यौँ बृच्छ बिस्तार,
योँ चाह के माहिँ सब रोग आवै ॥१॥
दृढ़ बैराग मेँ होय आरूढ़ मन,
चाह के चौतरे आग दीजै ।
कहै कब्बीर यौँ होय निरबासना,
तत्त से रत्त ह्वै काज कीजै ॥२॥

(१) कोईं का तलाव ।

॥ मिश्रित ॥

तन मन धन बाजी लागी हो ॥ टेक ॥
चौपड़ खेलूँ पीव से रे, तन मन बाजी लगाय।
हारी तो पिय की भई रे, जीती तो पिय मोर हो ॥१॥
चौसरिया के खेल में रे, जुग्ग मिलन की आस।
नर्द अकेली रहि गई रे, नहिं जीवन की आस हो ॥२॥
चार बरन घर एक है रे, भाँति भाँति के लोग।
मनसा बाचा कर्मना, कोइ प्रीति निबाहै ओर हो ॥३॥
लख चौरासी भरमत भरमत, पौ पै अटकी आय।
जो अब के पौ ना पड़ी रे, फिर चौरासी जाय हो ॥४॥
कहै कबीर धर्मदास से रे, जीती बाजी मत हार।
अब के सुरत चढ़ाइ दे रे, सोई सुहागिन नारि हो ॥५॥

(२)

या जग अंधा मैं केहि समुझावौं ॥ टेक ॥
इक दुइ होयँ उन्हैं समझावौं।
सबहि भुलाना पेट के धन्धा, मैं केहि० ॥१॥
पानी कै घोड़ा पवन असवरवा।
ढरकि परै जस ओस कै बुन्दा, मैं केहि० ॥२॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा।
खेवनहारा पड़िगा फन्दा, मैं केहि० ॥३॥
घर की बस्तु निकट नहिं आवत।
दियना बारि के ढूँढ़त अंधा, मैं केहि० ॥४॥
लागी आग सकल बन जरिगा।
बिन गुरज्ञान भटकिगा बन्दा, मैं केहि० ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो।
इक दिन जाय लँगोटी झार बन्दा, मैं केहि० ॥६

(३)

पिया मिलन की आस, रहौं कब लौं खड़ी।
ऊँचे चढ़ि नहिं जाय, मनैं लज्जा भरी ॥ १ ॥
पाँव नहीं ठहराय, चढ़ूँ गिरि गिरि पड़ूँ।
फिरि फिरि चढ़हुँ सम्हारि, तो पग आगे धरूँ ॥ २ ॥
अंग अंग थहराय, तो बहु बिधि डरि रहूँ।
कर्म कपट मग घेरि, तो भ्रम मेँ भुलि रहूँ ॥ ३ ॥
निपट अनारी बारि, तो झीनी गैल है।
अटपट चाल तुम्हारि, मिलन कस होइ है ॥४॥
तेजो[१] कुमति बिकार, सुमति गहि लीजिये।
सतगुरु सबद सम्हारि, चरन चित दीजिये ॥ ५ ॥
अंतर पट दे खोलि, सबद उर लाव री।
दिल बिच दास कबीर, मिलैं तोहि बावरी ॥ ६ ॥

(४)

ऐसो है रे भाई हरि रस ऐसो है रे भाई, जा के पिये अमर है जाई ॥१
ध्रुव पीया प्रहलादहु पीया, पीया मीराबाई।
बलख बुखारे के मीयाँ पीया, छोड़ी है बादसाही ॥२॥
हरि रस महँगा मोल का रे, पीयै बिरला कोय।
हरि रस महँगा सो पिये, जा के घर पै सीस न होय॥३॥
आगे आगे दौं जलै रे, पीछे हरिया होय।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, हरि भज निर्मल होय ॥४॥

(५)

जहँ सतगुरु खेलत ऋतु बसंत। परम जोत जहँ साध संत ॥१
तीन लोक से भिन्न राज। जहँ अनहद बाजा बजै बाज ॥२
चहुँ दिसि जोति की बहै धार। बिरला जन कोइ उतरै पार ॥३

(१) तजो।

कोटि कृस्न जहँ जोरैं हाथ। कोटि विस्नु जहँ नवैं माथ॥४
कोटिन ब्रह्मा पढ़ैं पुरान। कोटि महेस जहँ धरैं ध्यान॥५
कोटि सरस्वति धारैं राग। कोटि इन्द्र जहँ गगन लाग॥६
सुर गन्धर्व मुनि गने नजायँ। जहँ साहिब प्रगटेआपआय॥७
चोवा चंदन औ अबीर। पुहुप बास रस रह्यो गँभीर॥८
सिरजत हिये निवास लीन्ह। सो यहि लोक से रहत भिन्न॥९
जब बसंत गहि राग लीन्ह। सतगुरु सब्द उचार कीन्ह॥१०
कह कबीर मन हृदय लाय। नरक-उधारन नाम आहि॥११

(६)
रेख़ता

सूर संग्राम को देखि भागै नहीं,
देखि भागै सोई सूर नाहीं।
काम औ क्रोध मद लोभ से जूझना,
मँडा घमसान तहँ खेत माहीं॥
सील औ साच संतोष साही भये,
नाम समसेर तहँ खूब बाजै।
कहै कब्बीर कोइ जूझिहै सूरमा,
कायराँ भीड़ तहँ तुरत भाजै॥

(७)
रेख़ता

बिना बैराग कहु ज्ञान केहि काम का,
पुरुष बिनु नारि नहिँ सोभ पावै।
स्वाँग तो साहु का काम है चोर का,
कपट की झपट मैँ बहुत धावै॥
बात बहुते कहै झूठ छूटै नहीं,
मुख के कहे कहा खाँड़ खावै।

कहै कबीर जब काल गढ़ घेरिहै,
बात बहु बकै सब भूलि जावै ॥

पीपाजी

जीवन समय—पंद्रहवाँ शतक। जनम स्थान—गागरौनगढ़। अश्रम—भेष। गुरू—स्वामी रामानंद।

यह गागरौनगढ़ के राजा और आदि में दुर्गा उपासक थे फिर स्वामी रामानंद के चेले हुए और राजपाट छोड़ कर साधु भेष में अपनी छोटी रानी सीता सहित गुरू के साथ द्वारिका गये। भक्तमाल की कथा के अनुसार कृष्ण का साक्षात दर्शन पाने की अभिलाषा में पीपाजी समुद्र में कूद पड़े और सात दिन तक भगवत चरणों में रहकर बाहर निकले और वहाँ से जो छाप लाये थे वह यह कह कर पुजारियों के सपुर्द की कि जो इस छाप को लगावैगा उसे भगवान मिलेंगे। द्वारिका से लौटते हुए रास्ते में पठानों ने पीपाजी की स्त्री को सुंदर देख कर छीन लेना चाहा परंतु भगवान ने आप रक्षा की।

॥ घट मठ ॥

काया देवा काया देवल, काया जंगम जाती।
काया धूप दीप नैवेदा, काया पूजौं पाती ॥ १ ॥
काया बहु खँड खोजते, नव निद्धी पाई।
ना कछु आइबो ना कछु जाइबो, राम की दुहाई ॥२॥
जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे, जो खोजै सो पावै।
पीपा प्रनवै परम तत्त्व ही, सतगुरु होय लखावै ॥ ३ ॥

नामदेवजी

जीवन समय—पंद्रहवें शतक का दूसरा हिस्सा। कविता काल—१४८०। जन्म और सतसंग स्थान—पांडरपुर। जाति और आश्रम—छीपी, गृहस्थ। गुरू—ज्ञानदेवजी।

भक्तमाल में इन का जन्म एक बाल-विधवा के गर्भ से बिना पुरुष प्रसंग के ईश्वरेच्छा से होना लिखा है जैसा कि हज़रत ईसा का क्वारी कन्या के उदर से हुआ था। इन की प्रचंड भक्ति और बाल अवस्था ही से दृढ़ विश्वास की

बहुत सी कथाओँ मेँ तीन दिन उपास करके ठाकुर जी को दूध पिलाने की कथा प्रसिद्ध है।

॥ नाम महिमा ॥

तत्त गहन को नाम है, भजि लीजे सोई।
लीला सिंध अगाध है, गति लखै न कोई ॥ १ ॥
कंचन मेरु सुमेरु, हय गज[1] दीजे दाना।
कोटि गऊ जो दान दे, नहिँ नाम समाना ॥ २ ॥
जोग जग्य तेँ कहा सरै, तीरथ व्रत दाना।
ओसे प्यास न भागिहै, भजिये भगवाना ॥ ३ ॥
पूजा करि साधू जनहिँ, हरि को प्रन धारी।
उन तेँ गोविँद पाइये, वे परउपकारी ॥ ४ ॥
एकै मन एकै दसा, एकै व्रत धरिये।
नामदेव नाम जहाज है, भवसागर तरिये ॥ ५ ॥

॥ समरथ ॥

बदौ क्योँ ना होइ[2] माधो मो सोँ।
ठाकुर तेँ जन जन तेँ ठाकुर, खेल पर्‌यो है तो सोँ ॥१॥
आपन देव देहरा आपन, आप लगावै पूजा।
जल तेँ तरँग तरँग तेँ है जल, कहन सुनन को दूजा ॥२॥
आपहिँ गावै आपहिँ नाचै, आप बजावै तूरा।
कहत नामदेव तूँ मेरो ठाकुर, जन ऊरा[3] तूँ पूरा ॥३॥

॥ लव ॥

अस मन लाव राम रसना। तेरो बहुरि न होइ जरा मरना ॥१
जैसे मृगा नाद लव लावै। बान लगे वहि ध्यान लगावै ॥२
जैसे कीट भृंग मन दीन्ह। आपु सरीखे वा को कीन्ह ॥३॥
नामदेव भन[4] दासनदास। अब न तजौँ हरि चरन निवास ॥४

(१) घोड़ा और हाथी। (२) शर्त। (३) अधूरा। (४) कहता है।

॥ विरह ॥

होली

मोर पिया बिलम्यो परदेस, होरी मैं का सों खेलौं।
घरी पहर मोहिं कल न परतु है, कहत न कोउ उपदेस ॥१॥
झरयो पात बन फूलन लाग्यो, मधुकर करत गुँजार।
हाहा करौं कंथ घर नाहीं, को मोरि सुनै पुकार ॥ २ ॥
जा दिन तें पिय गवन कियो है, सिँदुरा न पहिरौं मंग[१]।
पान फुलेल सबै सुख त्याग्यो, तेल न लावौं अंग ॥ ३ ॥
निसु बासर मोहिं नींद न आवै, नैन रहै भरपूर।
अति दारुन मोहिं सवति सतावै, पिय मारग बड़ि दूर ॥४॥
दामिनि दमकि घटा घहरानी, बिरह उठै घनघोर।
चित चातक ह्वै दादुर बोलै, वहि बन बोलत मोर ॥ ५ ॥
प्रीतम को पतियाँ लिखि भेजौं, प्रेम प्रीति मसि[२]लाय।
बेगि मिलो जन नामदेव को, जनम अकारथ जाय ॥६॥

॥ प्रेम ॥

भाई रे इन नैनन हरि पेखो।
हरि की भक्ति साधु की संगति, सोई यह दिल लेखो ॥१॥
चरन सोई जो नचत प्रेम से, कर सोई जो पूजा।
सीस सोई जो नवै साधु को, रसना और न दूजा ॥२॥
यह संसार हाट को लेखा, सब कोउ बनिजहिं आया।
जिन जस लादा तिन तस पाया, मूरख मूल गँवाया ॥३॥
आतम राम देँह धरि आयो, ता मैं हरि को देखो।
कहत नामदेव बलि बलि जैहौं, हरि भजि और न लेखो ॥४॥

---

(१) माँग में। (२) सियाही।

॥ भेद ॥

एक अनेक बियापक पूरक, जित देखौं तित सोई।
माया चित्र बिचित्र बिमोहत, बिरला बूझै कोई ॥१॥
सब गोबिंद है सब गोबिंद है, गोबिंद बिन नहिं कोई।
सूत एक मनि सत्तसहस जस, ओत पोत प्रभु सोई ॥२॥
जल-तरंग अरु फेन बुदबुदा, जल तें भिन्न न होई।
यह प्रपंच परब्रह्म को लीला, बिचरत आन न होई ॥३॥
मिथ्या भ्रम अरु स्वपन मनोरथ, सत्य पदारथ जाना।
सुकिरत मनसा गुरु उपदेसी, जागत ही मन माना ॥४॥
कहत नामदेव हरि की रचना, देखो हृदय बिचारी।
घट घट अंतर सर्व निरंतर, केवल एक मुरारी ॥५॥

॥ उपदेश ॥

(१)

परधन परदारा परिहरी[1]। ता के निकट बसहि नरहरी[2] १
जो न भजंते नारायना। तिन का मैं न करौं दर्सना ॥२॥
जिन के भीतर है अन्तरा। जैसे पसु तैसे वह नरा ॥३॥
प्रनवत नामदेव नाकहिं बिना। ना सोहै बत्तीस लच्छना[3]॥४

(२)

काहे मन बिषया बन जाय। भूलो रे ठगमूरी[4] खाय ॥१
जैसे मीन पानी मैं रहै। काल जाल की सुधि नहिं लहै ॥२
जिभ्या स्वादी लीलत लोह। ऐसे कनिक कामिनी मोह ॥३॥
ज्यों मधुमाखी संचि अपार। मधु[5] लीन्हो मुख दीन्हो छार ४
गऊ बाछ को संचै छीर। गला बाँधि दुहि लेहि अहीर ॥५॥

(१) त्याग करै। (२) नरसिंह अर्थात ईश्वर। (३) आभरन, भूषन। (४) ठगाई, धोका। (५) मधुआ चिड़िया जो मधुमक्खी के बटोरे हुए शहद को खा जाती है।

माया कारन स्रम अति करै। सो माया लै गाड़ै ...॥६॥
अति संचै समझै नहिं मूढ़। धन धरती तन ह्वै गयो धूड़[१]॥७
काम क्रोध त्रिस्ना अति जरै। साधु सँगत कबहूँ नहिं करै ॥८
कहत नामदेव ता चीआन[२], निरभय ह्वै भजिये भगवान ॥९

रैदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ६५ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ चितावनी ॥

कहु मन राम नाम सँभारि।
माया के भ्रम कहाँ भूल्यो, जाहुगे कर झारि ॥ टेक
देखि धौं इहाँ कौन तेरो, सगा सुत नहिं नारि।
तोर उतँग सब दूरि करिहैं, देहिंगे तन जारि ॥१॥
प्रान गये कहो कौन तेरा, देखि सोच बिचारि।
बहुरि येहि कलि काल नाहीं, जीति भावै हारि ॥२॥
यहु माया सब थोथरी रे, भगति दिस प्रतिहारि।
कह रैदास सत बचन गुरु के, सो जिव तें न बिसारि ॥३

॥ बिनय ॥

(१)

नरहरि[३] चंचल है मति मेरी, कैसे भगति करूँ मैं तेरी ॥ टेक
तूँ मोहिं देखै हौं तोहि देखूँ, प्रीति परस्पर होई।
तूँ मोहिं देखै तोहि न देखूँ, यह मति सब बुधि खोई ॥१॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर, मैं देखन नहिं जाना।
गुन सब तोर मोर सब औगुन, कृत उपकार न माना ॥२॥
मैं तैं तोरि मोरि असमझि सौं, कैसे करि निस्तारा।
कह रैदास कृष्ण करुनामय, जै जै जगत अधारा ॥३॥

(१) धूल। (२) चिल्ला कर, पुकार कर। (३) नरसिंह ईश्वर का एक अवतार।

(२)

रामा हो जग-जीवन मोरा ।
तूँ न बिसारी मैं जन तोरा ॥ टेक ॥
संकट सोच पोच दिन राती ।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥१॥
हरहु बिपति भावै करहु सो भाव ।
चरन न छाड़ौँ जाव सो जाव ॥२॥
कह रैदास कछु देहु अलंबन ।
बेगि मिलो जनि करो बिलंबन ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

देहु कलाली एक पियाला, ऐसा अवधू है मतवाला ॥ टेक
हे रे कलाली तैँ क्या किया, सिरका सा तैं प्याला दिया ॥१
कहै कलाली प्याला देऊँ, पीवनहारे का सिर लेऊँ ॥२॥
चंद सूर दोउ सनमुख होई, पीवै प्याला मरै न कोई ॥३॥
सहज सुन्न मैं भाठी सरवै, पीवै रैदास गुरुमुख दरवै ॥४॥

(२)

जो तुम तोरैा राम मैं नहिँ तोरूँ ।
तुम सोँ तोरि कवन सोँ जोरूँ ॥ टेक ॥
तीरथ बरत न करूँ अँदेसा ।
तुम्हरे चरन कमल क भरोसा ॥१॥
जहँ जहँ जाऊँ तुम्हरी पूजा ।
तुम सा देव और नहिँ दूजा ॥२॥
मैं अपनो मन हरि सोँ जोर्याँ ।
हरि सोँ जोरि सबन से तोर्याँ ॥३॥
सबही पहर तुम्हारी आसा ।
मन क्रम बचन कहै रैदासा ॥४॥

(३)

अब कैसे छुटै नाम रट लागी ॥ टेक ॥
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी ।
जा की अँग अँग बास समानी ॥१॥
प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा ।
जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती ।
जा की जोति बरै दिन राती ॥३॥
प्रभु जी तुम मोती हम धागा ।
जैसे सोनहिं मिलत सुहागा ॥४॥
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा ।
ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥५॥

(४)

साची प्रीति हम तुम सँग जोड़ी। तुम सँग जोड़ि अवर सँग तोड़ी१
जो तुम बादर तो हम मोरा। जो तुम चंद हम भये चकोरा२
जो तुम दीवा तो हम बाती। जो तुम तीरथ तो हम जात्री३
जहाँ जाउँ तहँ तुम्हरी सेवा। तुम सा ठाकुर और न देवा४
तुम्हरे भजन कटै भय फाँसा। भक्ति हेतु गावै रैदासा ॥५॥

॥ साधु ॥

आज दिवस[१] लेऊँ बलिहारा ।
मेरे गृह आया राम का प्यारा ॥ टेक ॥
आँगन बँगला भवन भयो पावन ।
हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥ १ ॥
करूँ डंडवत चरन पखारूँ ।
तन मन धन उन ऊपरि वारूँ ॥ २ ॥

(१) दिन।

कथा कहैँ अरु अर्थ बिचारैँ ।
आप तरैँ औरन को तारैँ ॥ ३ ॥
कह रैदास मिलैँ निज दास ।
जनम जनम कै काटैँ पास[1] ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

परिचै राम रमै जो कोई। या रस परसे दुबिधि न होई ॥टेक
जे दीसे ते सकल बिनास । अनदीठे नाहीं बिसवास ॥१॥
बरन कहंत कहैँ जे राम । सो भगता केवल निःकाम ॥२॥
फल कारन फूलै बनराई । उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥३
ज्ञानहिं कारन करम कराई। उपजै ज्ञान तो करम नसाई॥४
बट क बीज जैसा आकार । पसर्‍यो तीन लोक पासार ॥५
जहाँ क उपजा तहाँ बिलाइ । सहज सुन्नि मैँ रह्यो लुकाइ ६
जे मन बिंदै सोई बिंद। अमा[2] समय ज्योँ दीसै चंद ॥७॥
जल मैँ जैसे तूँबा तिरै। परिचै[3] पिंड जीव नहिँ मरै ॥८
सो मन कौन जो मन को खाइ। बिन छोरे तिरलोक समाइ ९
मन की महिमा सब कोइ कहै। पंडित सो जो अनतै रहै १०
कहरैदासयहपरमबैराग। रामनाम किन[4] जपहु सभाग ११
घृत कारन दधि मथैँ सयान। जीवन मुक्ति सदा निरबान ॥१२

(१) फाँसी। (२) अमावस। (३) परिचय हो जाने से पिंड का भेद जान ले तो जीवन मुक्ति हो जाय। (४) क्योँ न।

सदनाजी

जीवन समय—पंद्रहवें शतक का पिछला हिस्सा। जाति और आश्रम—कसाई, भेष।

यह यद्यपि जाति के कसाई थे। परंतु जीवहिंसा नहीं करते थे माँस इकट्ठा मोल लेकर फुटकल बेचते थे, बटखरे की जगह शालग्राम की एक बटिया थी उसी से तौला करते थे चाहे कोई पावभर ले चाहे पाँच सेर। एक दिन एक वैष्णव ने उस बटिया में शालग्राम के पूरे आकार देखकर उन से माँगा उन्होंने तुर्त देदिया। वैष्णव ने उसे घर पर लाकर और पंचामृत से स्नान करा कर सिंहासन पर विराजमान किया और उत्तम भोग आगे धरे पर रातको उसे स्वप्न हुआ कि हमें तू हमारे उसी परम भक्त के घर पहुँचादे जहाँ तराज़ू पर बैठ कर हम को पालना भूलने का आनंद आता है। वैष्णव ने सदनाजी को सब हाल आ सुनाया और बटिया लौटादी। सदनाजी ने उसी दिन से वैराग ले [illegible] और उस बटिया को सिर पर धर कर जगन्नाथपुरी को चले गये। रास्ते [illegible] एक स्त्री के मोहित होने और इन के साथ भाग निकलने के अभिप्राय से अपने पति का सिर काट डालने और फिर सदनाजी के इनकार पर हाकिम के सामने उन पर अपने पति के घात का झूठा दोष लगाने और सदनाजी के उस दोष को स्वीकार कर लेने पर उनके दोनों हाथों के काटे जाने और जगन्नाथजी के सन्मुख होते ही हाथ ज्यों के त्यों निकल आने की कथा भक्तमाल में लिखी है।

॥ विनय ॥

नृप कन्या के कारने, एक भयो भेष धारी।
कामारथी सुवारथी, वा की पैज[1] सँवारी ॥ १ ॥
तब गुन कहा जगत-गुरा, जो कर्म न नासै।
सिंह सरन कत जाइये, जो जंबुक[2] ग्रासै ॥ २ ॥
एक बूँद जल कारने, चातक दुख पावै।
प्रान गये सागर मिलै, पुनि काम न आवै ॥ ३ ॥
प्रान जो थाके थिर नहीं, कैसे बिरमावो।
बूड़ि मुए नौका मिलै, कहु काहि चढ़ावो ॥ ४ ॥
मैं नाहीं कछु हैाँ नहीं, कछु आहि न मोरा।
औसर लज्जा राख लेहु, सदना जन तोरा ॥ ५ ॥

---

(१) प्रण। (२) स्यार।

धनी धर्म्मदास

जीवन समय—पंद्रहवें शतक के आख़िर हिस्से और सोलहवें शतक के दर्मियान। जन्म स्थान—बांधोगढ़। सतसंग स्थान—काशी। जाति और आश्रम—कसौंधन बनिया, गृहस्थ। गुरू—कबीर साहिब।

यह बड़े साहूकार थे पर कबीर साहिब की शरण में आने के पीछे यह काशी ही में उन के चरनों में रहे और उन के गुप्त होने पर उन की गद्दी पर बैठे। यह और इन के बड़े बेटे चूड़ामणि जी देनों प्रचंड भक्त हुए और पूरी संत गति को प्राप्त हुए।

॥ गुरुदेव ॥

(१)

बाजा बाजा रहित[१] का, पड़ा नगर में सोर।
(मेरे) सतगुरु संत कबीर हैं, नजर न आवै और ॥१॥
सूमी पर पग धरत है, सुनो संत मतधीर।
माथ नाय बिनती करौं, दरसन देव कबीर ॥२॥
घाट बाट औघट महीं, मोहिं कबीर की आस।
धर्मनि सुमिरै नाम गुरु, कभी न होय बिनास ॥३॥

(२)

गुरु मिले अगम के बासी ॥ टेक ॥
उनके चरन कमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी ॥१॥
उनकी सीत प्रसादी लीजे, छूटि जाय चैारासी ॥२॥
अमृत बुंद झरै घट भीतर, साध संत जन लासी[२] ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सार सबद मन बासी ॥४॥

॥ नाम महिमा ॥

हम सत्त नाम के बैपारी ॥ टेक ॥
कोइ कोइ लादै काँसा पीतल, कोइ कोइ लैाँग सुपारी।
हम तो लाद्यो नाम धनी को, पूरन खेप हमारी ॥१॥

(१) मुक्ति, उद्धार। (२) चाशनी।

पूँजी न टूटै नफा चैागुना, बनिज किया हम [illegible]री ।
हाट जगाती रोक न सकिहै, निर्भय गैल हमारी ॥२॥
मोति बुंद घट ही मैं उपजै, सुकिरत भरत कोठारी[१] ।
नाम पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी ॥३॥

॥ चितावनी ॥

(१)

सोहर

कहँवाँ से जिव आइल, कहँवाँ समाइल हो ।
कहँवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो ॥ १ ॥
निरगुन से जिव आइल, सगुन समाइल हो ।
काया गढ़ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो ॥ २ ॥
एक बुंद से काया महल, उठावल हो ।
बुंद परे गलि जाय, पाछे पछितावल हो ॥ ३ ॥
हंस कहै भाई सरवर, हम उड़ि जाइब हो ।
मोर तोर इतन दिदार, बहुरि नहिं पाइब हो ॥ ४ ॥

(२)

कहो केते दिन जियबैा हो, का करत गुमान ॥ टेक ॥
कच्चे बासन का पिंजरा हो, जा मैं पवन समान ।
पंछी का कैान भरोसा हो, छिन मैं उड़ि जान ॥१॥
कच्ची माटी कै घड़ुवा हो, रस बूँदन सान ।
पानी बीच बतासा हो, छिन मैं गलि जान ॥२॥
कागद की नइया बनी, डोरी साहिब हाथ ।
जौने नाच नचैहैं हो, नाचब वोहि नाच ॥३॥
धरमदास इक बनिया हो, करै झूठी बजार ।
साहिब कबीर बनिजारा हो, करैं सत बैपार ॥४॥

---

(१) भंडार ।

॥ विरह ॥

(१)

सतगुरु आवो हमरे देस, निहारौँ बाट खड़ी ॥ टेक ॥
वाहि देस की बतियाँ रे, लावैं संत सुजान ।
उन संतन के चरन पखारौँ, तन मन करौँ कुरबान ॥१॥
वाहि देस की बतियाँ हम से, सतगुरु आन कही ।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥ २ ॥
भूलि गई तन मन धन सारा, व्याकुल भया सरीर ।
विरह पुकारै विरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥ ३ ॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल मैं किये निहाल ।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जंजाल ॥४॥

(२)

कहौँ बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से ।
किधौँ मिटै जब मिलहुँ पीव से ॥ १ ॥
तन तलफै हिय कछु न सुहाय ।
तोहि बिन पिय मो से रहल न जाय ॥ २ ॥
धरमदास की अरज गुसाईं ।
साहिब कबीर रहौँ तुम छाँहीं ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥
तुमहीं छाड़ि भजूँ नहिं औरै, नाहिं दूसरी आसा ॥ १ ॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥२॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिं बिस्वासा ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, द्यो निज लोक निवासा ॥४॥

(२)

साहिब चितवो हमरी ओर ॥ टेक ॥
हम चितवैं तुम चितवो नाहीं, तुम्हरो हृदय कठोर ॥१॥
औरन को तो और भरोसो, हमैं भरोसो तोर ॥ २ ॥
सुखमनि सेज बिछावौं गगन मैं, नित उठि करौं निहोर ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, साहिब कबीर बंदी-छोर ॥४॥

(३)

हमरे का करै हाँसी लोग ॥ टेक ॥
मेरा मन लागा सतगुरु से, भला होय कै खोर[१] ।
जब से सतगुरु ज्ञान भयो है, चलै न केहु कै जोर ॥१॥
मात रिसाई पिता रिसाई, रिसाय बटोहिया लोग ।
ज्ञान खड़ग तिरगुन को मारौं, पाँच पचीसो चोर ॥२॥
अब तो मोहिं ऐसी बनि आवै, सतगुरु रचा सँजोग ।
आवत साध बहुत सुख लागै, जात बियापै रोग ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनु हो बंदी-छोर ।
जा को पद तिरलोक से न्यारा, सो साहिब कस[२] होय ॥४॥

(४)

बधावा

सतगुरु आये घर, मन मैं बजत बधाइया ॥ टेक ॥
सतगुरु साहिब दीन-दयाला, द्वारे मोरे आइया ।
जुगन जुगन के करम मिटत भे, सतगुरु दरस दिखाइया ॥१
प्रेम सुरत की करी रसोई, व्यंजन[३] आसन लाइया ।
जैंवन बैठे सतगुरु साहिब, अधर से चौंर डोलाइया ॥२॥
दया भाव के पलँग बिछाये, प्रेम दुलीचा लाइया ।
ता पर सोये सतगुरु साहिब, सुरति कै तेल लगाइया ॥३

(१) बुरा । (२) कैसा । (३) भोजन ।

धरमदास विनवे कर जोरी, सुनिये समरथ साँइयाँ।
साहिब कबीर प्रभु मिले बिदेही, झीना दरस दिखाइया ॥४॥

(५)
होली

हमरी उमिरिया होरी खेलन की।
पिय मो सों मिलि के बिछुरि गयो हो ॥ १ ॥
पिय हमरे हम पिय की पियारी।
पिय बिच अंतर परि गयो हो ॥ २ ॥
पिया मिलें तब जियों मोरी सजनी।
पिय बिन जियरा निकरि गयो हो ॥ ३ ॥
इत गोकुल उत मथुरा नगरी।
बीच डगर पिय मिलि गयो हो ॥ ४ ॥
धरमदास बिरहिन पिय पाये।
चरन कँवल चित गहि रहो हो ॥ ५ ॥

॥ कपट भक्ति ॥

साहिब यहि बिधि ना मिलै, चित चंचल भाई ॥ टेक ॥
माला तिलक उरमाइ कै, नाचै अरु गावै।
अपना मरम जानै नहीं, औरन समुझावै ॥ १ ॥
देखे को बक ऊजला, मन मैला भाई।
आँखि मूँदि मौनी भया, मछरी धरि खाई ॥ २ ॥
कपट कतरनी पेट मैं, मुख बचन उचारी।
अंतर-गति साहिब लखै, उन कहा छिपाई ॥ ३ ॥
आदि अंत की बारता, सतगुरु से पावो।
कह कबीर धर्मदास से, मूरख समझावो ॥ ४ ॥

॥ भेद ॥

झरि लागै महलिया, गगन घहराय ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजुली चमकै।
लहर उठै सोभा बरनि न जाय ॥ १ ॥
सुन्न महल से अमृत बरसै।
प्रेम अनँद ह्वै साध नहाय ॥ २ ॥
खुली किवरिया मिटी अँधियरिया।
धन सतगुरु जिन दिया है लखाय ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी।
सतगुरु चरन मेँ रहत समाय ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

गुरु पैयाँ लागौँ नाम लखा दीजो रे ॥ टेक ॥
जनम जनम का सोया मनुवाँ, सबदन मार जगा दीजो रे ॥१
घट अँधियार नैन नहिँ सूझै, ज्ञान का दीप जगा दीजो रे २
बिष की लहर उठत घट अंतर, अमृत बूँद चुवा दीजो रे ॥३
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे ४
धरमदास की अरज गुसाईँ, अब के खेप निभा दीजो रे ॥५॥

(२)

भक्ति दान गुरु दीजिये, देवन के देवा हो।
चरन कँवल बिसरैँ नहीँ, करिहैँ पद सेवा हो ॥ १ ॥
तीरथ ब्रत मैँ ना करौँ, ना देवल पूजा हो।
तुमहिँ ओर निरखत रहौँ, मेरे और न दूजा हो ॥ २ ॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि हैँ, बैकुंठ निवासा हो।
सो मैँ ना कछु माँगहूँ, मेरे समरथ दाता हो ॥ ३ ॥
सुख सम्पति परिवार धन, सुन्दर बर नारी हो।
सुपनेहु इच्छा ना उठै, गुरु आन तुम्हारी हो ॥ ४ ॥

धरमदास की बीनती, साहिब सुनि लीजै हो।
दरस देहु पट खोलि कै, अपना करि लीजै हो ॥ ५ ॥

(३)

साहिब बूड़त नाव अब मोरी ॥ टेक ॥

काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ॥ १ ॥
कपट की भँवर परतु है बहुतै, वा मेँ बेड़ा अटको।
फाँसी काल लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥ २ ॥
धरमदास पर दाया कीन्हो, काटि फंद जिव तारी।
कहै कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरन उबारी ॥ ३ ॥

(४)

चरन छाड़ि प्रभु जावँ कहाँ, मेरे और न कोई।
जग में आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥ १ ॥
मात पिता हित बंधु तुम, का से दुख रोई।
सब कछु तुम्हरे हाथ है, तुम्हरै मुख जोही ॥ २ ॥
गुन तो मोरे है नहीं, औगुन बहुतेरे।
ओट लई तुम नाम की, राखो पत सोई ॥ ३ ॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिँ कोई ॥ ४ ॥
मैं गरजी अरजी करौँ, मरजी जस होई।
अरज विपति लिखौँ आपनी, राखौँ नहिँ गोई[1] ॥ ५ ॥
धरमदास सत साहिबी, घट घटहिँ समोई।
साहिब कबीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥ ६ ॥

(१) छिपी।

॥ मिश्रित ॥

(१)

मितऊ मड़ैया सूनी करि गैलो ॥ टेक ॥
अपन बलम परदेस निकरि गैलो।
हमरा के कछुवो न गुन दै गैलो ॥ १ ॥
जोगिन होइ के मैं बन बन ढूँढ़ौं।
हमरा के बिरह बैराग दै गैलो ॥ २ ॥
सँग की सखी सब पार उतरि गैलीं।
हम धन ठाढ़ी अकेली रहि गैलो ॥ ३ ॥
धरमदास यह अरज करतु है।
सार सबद सुमिरन दै गैलो ॥ ४ ॥

(२)

मोरा पिया बसै कौने देस हो ॥ टेक ॥
अपने पिया के ढूँढ़न हम निकसी,
कोई न कहत सनेस हो ॥ १ ॥
पिय कारन हम भई हैं बावरी,
धस्यो जोगिनिया के भेस हो ॥ २ ॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस न जाने,
का जानै सारद सेस हो ॥ ३ ॥
धनि जो अगम अगोचर पइलन,
हम सब सहत कलेस हो ॥ ४ ॥
उहाँ कै हाल कबीर गुरु जानैं,
आवत जात हमेस हो ॥ ५ ॥

(३)

गाँठ परी पिय बोले न हम से ॥ टेक ॥
माल मुलुक कछु संग न जैहै।
नाहक बैर कियो है जग से ॥ १ ॥

जो मैं जनितिउँ पिया रिसियै है ।
नाहक प्रीति लगाती न जग से ॥ २ ॥
निसु वासर पिय सँग मैं सूतिउँ ।
नैन अलसानी निकरि गये घर से ॥ ३ ॥
जस पनिहारि धरे सिर गागर ।
सुरति न टरै बतरावत[1] सब से ॥ ४ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी ।
साहिब कबीर को पावै सुभग[2] से ॥ ५ ॥

(४)

कैसे आरत करौं तिहारी । महा मलिन गति देँह हमारी ॥
मैलहिं तें उपज्यो संसारा । मैं कैसे गुन गावोँ तुम्हारा ॥
झरना झरै दसो दिसि द्वारे। कस ढिँग आवोँ साहिब तुम्हारे॥
जो प्रभु देहु अगर की देँही । तब होवोँ मैं सबद सनेही ॥
मलयागिरि मेँ बसत भुवंगा । विष अमृत रहै एकै संगा ॥
तिनुका तोड़ दिया परवाना । तब हम पाया पद निर्बाना ॥
धरमदास कबीर बल गाजै । गुरु परताप आरती साजै ॥

(१) बात चीत करती है । (२) अच्छे भाग ।

गुरु नानक

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ६७ संतबानी संग्रह, भाग १]

(१)

राम सुमिर राम सुमिर एही तेरो काज है ॥टेक॥
माया को संग त्याग, हरि जू की सरन लाग।
जगत सुख मान मिथ्या, झूठो सब साज है ॥ १ ॥
सुपने ज्यों धन पिछान, काहे पर करत मान।
बारू की भीत तैसे, बसुधा को राज है ॥ २ ॥
नानक जन कहत बात, बिनसि जैहै तेरो गात।
छिन छिन करि गयो काल्ह, तैसे जात आज है ॥ ३ ॥

(२)

इस दम दा मैनूँ की बे भरोसा,
आया आया न आया न आया ॥ १ ॥
सोच बिचार करै मत मन मैं,
जिस ने ढूँढा उसने पाया ॥ २ ॥
या संसार रैन दा सुपना,
कहिं दीखा कहिं नाहिं दिखाया ॥ ३ ॥
नानक भक्तन के पद परसे,
निस दिन राम चरन चित लाया ॥ ४ ॥

(३)

सब कछु जीवत को ब्यौहार।
मात पिता भाई सुत बांधव, अरु पुनि गृह की नार ॥१॥
तन तें प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार।
आध घरी कोऊ नहिं राखै, घर तें देत निकार ॥२॥

मृग-तृस्ना ज्यौं जग रचना यह, देखो हृदे बिचार।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तैं होत उधार ॥३॥

(४)

साधो यह तन मिथ्या जानो।
या भीतर जो राम बसत है, साचो ताहि पिछानो ॥१॥
यह जग है संपति सुपने की, देख कहा ऐड़ानो।
संग तिहारे कछू न चालै, ताहि कहा लपटानो ॥२॥
अस्तुति निंदा दोऊ परिहरि, हरि कीरति उर आनो।
जन नानक सबही मैं पूरन, एक पुरुष भगवानो ॥३॥

(५)

चेतना है तो चेत ले, निसि दिन में प्रानी।
छिन छिन अवधि बिहात है, फूटै घट ज्यौं पानी ॥१॥
हरि गुन काहे न गावही, मूरख अज्ञाना।
झूठे लालच लागि के, नहिं मर्म पिछाना ॥२॥
अजहूँ कछु बिगस्यो नहीं, जो प्रभु गुन गावै।
कहु नानक तेहिं भजन तैं, निरभय पद पावै ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

हैाँ कुरबाने जाउँ पियारे, हैाँ कुरबाने जाउँ ॥टेक॥
हैाँ कुरबाने जाउँ तिन्हाँ दे, लैन जो तेरा नाउँ।
लैन जो तेरा नाउँ तिन्हाँ दे, हैाँ सद कुरबाने जाउँ ॥१॥
काया रंगन जे थिये प्यारे, पाइये नाउँ मजीठ[१]।
रंगन वाला जे रँगे साहिब, ऐसा रंग न डीठ ॥२॥
जिन के चोलड़े रत्तड़े[२] प्यारे, कंत तिन्हाँ के पास।
धूड़[३] तिन्हाँ को जे मिले जी को, नानक की अरदास ॥३॥

(१) काया तब रँगी जायगी जब नाम रूपी लाल रंग (त्रिकुटी के धनी का) मिलै। (२) रँगे हुए। (३) धूल।

(२)

बिसरत नाहिँ मन तेँ हरी।
अब यह प्रीति महा प्रबल भइ, आन बिषय जरी ॥१॥
बूँद कँहा तियागि चातक, मीन रहत न घरी।
गुन गोपाल उचारत रसना, टेँव[१] एह परी ॥२॥
महा नाद कुरंग मोह्यो, बेध तीच्छन सरी।
प्रभु चरन कमल रसाल नानक, गाँठ बाँधि परी ॥३॥

(३)

गोबिँद जी तूँ मेरे प्रान-अधार।
साजन मीत सहाई तुमहीँ, तूँ मेरो परिवार ॥१॥
कर बिसाल धास्यो मेरे माथे, साधु संग गुन गाये।
तुम्हरी कृपा तेँ सब फल पाये, रसिक नाम धियाये ॥२॥
अबिचल नीँव धराई सतगुरु, कबहूँ डोलत नाहीँ।
गुर नानक जब भये दयाला, सर्ब सुखाँ निधि पाहीँ ॥३॥

(४)

प्रभु जी तूँ मेरे प्रान-अधारे।
नमसूकार डंडौत बंदना, अनिक वार जाऊँ बलिहारे ॥१॥
ऊठत बैठत सोवत जागत, इहु मन तुझे चितारे।
सूख दूख इस मन की बिरथा, तुझ ही आगे सारे ॥२॥
तूँ मेरी ओट बल बुधि धन तुमहीँ, तुमहिँ मेरे परिवारे।
जो तुम करो सोई भल हमरे, पेख नानक सुख चरना रे ॥३॥

॥ घट मठ ॥

(१)

मुरसिद मेरा महरमी, जिन मरम बताया।
दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन पाया ॥ १ ॥

(१) आदत।

तसबी एक अजूब है, जा मैं हर दम दाना।
कुंज किनारे बैठि के, फेरा तिन्ह जाना ॥ २ ॥
क्या बकरी क्या गाय है, क्या अपनो जाया।
सब को लोहू एक है, साहिब फरमाया ॥ ३ ॥
पीर पैगंबर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषन को काया ॥ ४ ॥
हिरिस हिये हैवान है, बसि करिले भाई।
दादू[1] इलाही नानका, जिसे देवे खुदाई ॥ ५ ॥

(२)

काहे रे बन खोजन जाई।
सर्व निवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई ॥ १ ॥
पुष्प मध्य ज्यौं बास बसत है, मुकर माहिं जस छाईं।
तैसेही हरि बसै निरंतर, घट ही खोजो भाई ॥ २ ॥
बाहर भीतर एकै जानो, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई ॥३।

॥ विनय ॥

(१)

प्रब[2] मेरे प्रीतम प्रान पियारे।
प्रेम भक्ति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे ॥१॥
सुमिरौं चरन तिहारे प्रीतम, रिदे तिहारी आसा।
संत जनाँ पै करौं बेनती, मन दरसन को प्यासा ॥ २ ॥
बिछुरत मरन जीवन हरि मिलते, जन को दरसन दीजै।
नाम अधार जीवन धन नानक, प्रब मेरे किरपा कीजै ॥३॥

(२)

माई मैं केहि बिधि लखौं गुसाईं।
महा मोह अज्ञान तिमिर मैं, मन रहियो उरझाई ॥१॥

(१) दात, बख़्शिश। (२) प्रभु।

सकल जनम भ्रम ही भ्रम खोयो, नहिँ इस्थिर मति ... ।
विषयासक्त रह्यो निसि बासर, नहिँ छूटी अधमाई ॥२॥
साधु संग कबहूँ नहिँ कीन्हा, नहिँ कीरति प्रभ[१] गाई ।
जन नानक मैँ नाहीँ कोउ गुन, राखि लेहु सरनाई ॥३॥

(३)

प्रभ जी यही मनोरथ मेरा ।
कृपा-निधान दयाल मोहिँ दीजै, करि संतन का चेरा ॥१॥
प्रात काल लागौँ जन चरनी, निसि बासर दरसन पावौँ ।
तन मन अरप करौँ जन सेवा, रसना हरि गुन ... ॥२॥
साँस साँस सुमिरौँ प्रभु अपना, संत संग नित रहिये ।
एक अधार नाम धन मेरा, आनँद नानक यह लहिये ॥३॥

(४)

अब हम चली ठाकुर पहिँ हार ।
जब हम सरन प्रभू की आईँ, राख प्रभु भावे मार ॥१॥
लोगन की चतुराई उपमा, ते बैसंदर[२] जार ।
कोई भला कहु भावे बुरा कहु, हम तन दियो है ढार ॥२॥
जो आवत सरन ठाकुर प्रभु तुम्हरी, तिस राखो किरपाधार।
जन नानक सरन तुम्हारी हरिजी, राखो लाज मुरार ॥३॥

(५)

अब मैँ कैान उपाय करूँ ॥ टेक ॥
जेहि बिधि मन को संसय छूटै, भव-निधि[३] पार परूँ ॥१॥
जनम पाय कछु भलो न कीन्हो, ता तैँ अधिक डरूँ ॥२॥
गुरु मत सुन कछु ज्ञान न उपज्यो, पसुवत उदर भरूँ ॥३॥
कहु नानक प्रभु बिरद पिछानो, तब हैाँ पतित तरूँ ॥४॥

(१) प्रभु। (२) आग। (३) भवसागर।

(६)

हरि जू राख लेहु पत मेरो ॥ टेक ॥
काल को त्रास भयो उर अंतर, सरन गह्यो प्रब तेरो ।
भय मरने को बिसरत नाहीं, तेहिं चिंता तन जारो ॥१॥
किये उपाय मुक्ति के कारन, दह दिसि को उठि धाया ।
घट ही भीतर बसै निरंतर, ता को मर्म न पाया ॥२॥
नाहीं गुन नाहीं कछु जप तप, कौन करम अब कीजै ।
नानक हार पर्यौ सरनागत, अभय दान प्रब दीजै ॥३॥

(७)

या जग मीत न देख्यो कोई ।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो, दुख मैं संग न होई ॥१॥
दारा मीत पूत संबंधी, सगरे धन सौं लागे ।
जबहीं निरधन देख्यो नर को, संग छाड़ि सब भागे ॥२॥
कहा कहूँ या मन बौरे को, इन सौं नेह लगाया ।
दीनानाथ सकल भय-भंजन, जस[१] ता को बिसराया ॥३॥
स्वान पूँछ ज्यौं भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हो ।
नानक लाज बिरद की राखो, नाम तिहारो लीन्हो ॥४॥

(८)

जीव जंतु सब ता के हाथ, दीनदयाल अनाथ को नाथ ॥१॥
जिस राखै तिस कोइ न मारै, सो मूआ जिस मनों बिसारै २
तिस तजि अवर कहाँ को जाय, सब सिर एक निरंजनराय ३
जिय की जुगत जा के सब हाथ, अंतर बाहर जानो साथ ॥४
गुन-निधान बेअंत अपार, नानक दास सदा बलिहार ॥५॥

(१) इहसान ।

॥ साध महिमा ॥

जो नर दुख मैं दुख नहिं मानै ।
सुख सनेह अरु भय नहिं जा के, कंचन माटी जानै ॥१॥
नहिं निन्दा नहिं अस्तुति जा के, लोभ मोह अभिमाना ।
हर्ष सोक तें रहै नियारो, नाहिं मान अपमाना ॥२॥
आसा मनसा सकल त्यागि कै, जग तें रहै निरासा ।
काम क्रोध जेहि परसै नाहिन, तेहिं घट ब्रह्म निवासा ॥३॥
गुरु किरपा जेहिं नर पै कीन्ही, तिन यह जुगति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोबिंद सोँ, ज्यों पानी सँग पानी ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

जा मैं भजन राम को नाहीं ।
तेहि नर जनम अकारथ खोये, यह राखो मन माहीं ॥१॥
तीरथ करै बर्त पुनि राखै, नहिं मनुवाँ बस जा को ।
निफल धर्म ताहि तुम माना, साच कहत मैं या को ॥२॥
जैसे पाहन जल मैं राख्यो, भेदै नहिं तेहि पानी ।
तैसेही तुम ताहि पिछानो, भगतिहीन जो प्रानी ॥३॥
कलि मैं मुक्ति नाम तें पावत, गुरु यह भेद बतावै ।
कहु नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभु के गुन गावै ॥४॥

(२)

साधो मन का मान तियागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, ता तें अहि निसि भागो ॥१॥
सुख दुख दोनोँ सम कर जानै, और मान अपमाना ।
हर्ष सोक तें रहै अतीता, तिन जग तत्व पिछाना ॥२॥
अस्तुति निंदा दोऊ त्यागै, खोजै पद निरबाना ।
जन नानक यह खेल कठिन है, किनहूँ गुरमुख जाना ॥३

(३)

यह मन नेक न कह्यो करै।
सीख सिखाय रह्यो अपनी सी, दुरमति तें न टरै ॥१॥
मद माया बस भयो बावरो, हरिजस नहिं उचरै।
करि परपंच जगत को डहकै, अपनो उदर भरै ॥ २ ॥
स्वान पूँछ ज्यौं होय न सूधो, कह्यो न कान धरै।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तें काज सरै ॥३॥

(४)

माई मैं मन को मान न त्यागो।
माया के मद जनम सिरायो, राम भजन नहिं लाग्यो ॥१॥
जम को दंड पर्यो सिर ऊपर, तब सोवत तें जाग्यो।
कहा होत अब के पछिताये, छूटत नाहिन भाग्यो ॥ २ ॥
यह चिंता उपजी घट में जब, गुरु चरनन अनुराग्यो।
सुफल जनम नानक तब हूआ, जो प्रभु जस में पाग्यो ॥३॥

(५)

मन की मनहीं माहिं रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही ॥ १ ॥
दारा मीत पूत रथ संपति, धन जन पूर्न मही।
और सकल मिथ्या यह जानो, भजन राम सही ॥ २ ॥
फिरत फिरत बहुते जुग हार्‍यो, मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बिरिया, सुमिरत कहा[१] नहीं ॥३॥

(६)

मन मूरख काहे बिल्लावै, पूर्ब लिखे का लेखा पावै ॥१॥
दुक्ख सुक्ख प्रब देवनहार, अवर त्यागि तूँ तिसै चितार ॥२
जो कछु करै सोई सुख मान, भूला काहे फिरै अयान ॥३॥

(१) क्यों।

कौन बस्तु आई तेरे संग, लपट रह्यो रस लोभि ५. ॥४
राम नाम जप हिरदे माहीं, नानक पत सेती घर जाहो ॥५

(७)

रे मन कौन गति होइ है तेरी ॥ टेक ॥
एहि जग मैं राम नाम, सो तो नहिं सुन्यो कान ।
बिषयन सोँ अति लुभान, मति नाहिन फेरी ॥ १ ॥
मानस को जनम लीन्ह, सिमरन नहिं निमिष कीन्ह ।
दारा सुख भयो दीन, पगहुँ परी बेरी ॥ २ ॥
नानक जन कह पुकार, सुपने ज्यौं जग पसार ।
सिमरत नहिं क्यौं मुरार, माया जा की चेरी ॥ ३ ॥

(८)

साधो रचना राम बनाई ।
इक बिनसै इक इस्थिर मानै, अचरज लख्यौ न जाई ॥१॥
काम क्रोध मोह बस प्रानी, हरि मूरति बिसराई ।
झूठा तन साचा करि मान्यो, ज्यौं सुपना रैनाई ॥२॥
जो दीसै सो सकल बिनासै, ज्यौं बादर की छाँई ।
जन नानक जग जानो मिथ्या, रहै राम सरनाई ॥३॥

सूरदासजी

जीवन समय—अनुमान १५४० से १६२० तक। जनम स्थान—सीहो गाँव दिल्ली के पास। जाति और आश्रम—सारस्वत ब्राह्मण, भेष। गुरू—वल्लभाचार्य्य महाप्रभु।

यह एक गहरे कृष्णभक्त और साधु शिरोमणि १६ वें शतक में हुए जो ३१ बरस तक गु० तुलसीदासजी के समकालीन थे। इन को उद्धवजी का अवतार कहते हैं और यह बाल-साधु थे। आठ बरस की अवस्था में अपने माता पिता के साथ मथुरा को गये और फिर वहीं एक साधू के पास रह गये। मथुरा से वह गऊघाट आये जो आगरा और मथुरा के बीच में है, यहाँ वल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य हुए और उन के साथ श्रीनाथद्वारा को गये और वहीं रह कर अस्सी बरस की अवस्था में शरीर त्याग किया। बीच २ में और स्थानों की भी यात्रा करते रहे और एक रामत में गु० तुलसीदासजी से मेला हुआ और कुछ दिनों तक दोनों का संग रहा। कितने लोग इन को जन्म का अंधा बतलाते हैं परंतु इन की कविता की अनेक दृष्टान्तों और वर्णनों से जान पड़ता है कि पीछे से उन की आँखें गईं। कहते हैं कि एक बार एक सुंदरी स्त्री को देख कर वह मोह गये जिस पर उन्हें ऐसी ग्लानि आई कि अपनी आँखों का दोष समझकर उन को फोड़ डाला। सूरदास जी ने तीन ग्रंथ रचे-सूरसागर, सूरावली और साहित्य-लहरी (दृष्टकूट)। कृष्णभक्तों का विश्वास है कि इन्हों ने प्रण किया था कि सवालाख पद लिखेंगे परंतु केवल ७५००० तक बनाये थे कि चोला छूट गया फिर इन के पीछे श्रीकृष्ण ने आप अपने भक्त के बचन का पालन करने को शेष ५०००० बनाकर सवालाख की संख्या पूरी करदी, इन पदों में सूरश्याम की छाप है। शरीर त्यागते समय आप ने प्रेम में गद्गद हो कर यह पद कहा था—

"खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसै चारु चपल अनियारे, पल पिंजरा न समाते।
चलि चलि जात निकट स्रवनन के, उलटि उलटि ताटंक[१] फँदाते॥
सूरदास अंजन गुन अटके, नातरु अब उड़ि जाते॥"

(१) तटक=नदी का किनारा, तड़ाक=तालाव।

॥ चितावनी ॥

(१)

रे मन जन्म पदारथ जात ।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वै है, ज्यौं तरवर के पात ॥१॥
सन्निपात कफ कंठ बिरोधी, रसना टूटी बात ।
प्रान लिये जम जात मूढ़ मति, देखत जननी तात ॥२॥
छिन इक माहिँ कोटि जुग बीतत, पीछे नर्क की बात ।
यह जग प्रीति सुआ सेमर की, चाखत ही उड़ि जात ॥३॥
जम के फंद नहीं पड़ु बौरे, चरनन चित्त लगात ।
कहत सूर बिरथा यह देही, अंतर क्यौं ० रात ॥४॥

(२)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैँ ।
ता दिन तेरे तन तरुवर के, सबै पात झरि जैहैँ ॥ १ ॥
घर के कहैँ बेग ही काढ़ो, भूत भये कोउ खैहैँ ।
जा प्रीतम से प्रीति घनेरी, सोऊ देखि डरैहैँ ॥ २ ॥
कहँ वह ताल कहाँ वह सोभा, देखत धूर उड़ैहैँ ।
भाई बंधु कुटुम्ब कबीला, सुमिरि सुमिरि पछितैहैँ ॥३॥
बिना गुपाल कोऊ नहिँ अपना, जस कीरति रहि जैहैँ।
सो तो सूर दुर्लभ देवन को, सतसंगति मेँ पैहैँ ॥ ४ ॥

(३)

रे मन मूरख जनम गँवायो ॥ टेक ॥
कर अभिमान बिषय सोँ राच्यो, नाम सरन नहिँ आयो ॥१
यह संसार फूल सेमर को, सुंदर देखि लुभायो ।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिँ आयो ॥२
कहा भयो अब के मन सोचे, पहिले नाहिँ कमायो ।
सूरदास सतनाम भजन बिनु, सिर धुनि धुनि पछितायो ॥३

॥ विरह ॥

(१)

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ।
देख्यो चाहत कमलनैन को, निसि दिन रहत उदासी ॥१॥
केसर तिलक मोतिन की माला, वृन्दावन के वासी ।
नेह लगाय त्यागि गये तृन सम, डारि गये गल फाँसी ॥२॥
काहू के मन की को जानत, लोगन के मन हाँसी ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिन, लैहौं करवत कासी ॥३॥

(२)

बिन गोपाल बैरन भईं कुंजैं ॥ टेक ॥
तब ये लता लगत अति सीतल,
अब भईं विषम ज्वाल की पुंजैं[१] ॥ १ ॥
वृथा बहत जमुना खग बोलत,
वृथा कमल फूलत अलि[२] गुंजैं ॥ २ ॥
सूरदास प्रभु को मग जोवत,
अँखियाँ भईं अरुन[३] ज्यों गुंजैं[४] ॥ ३ ॥

(३)

निसि दिन बरसत नैन हमारे ।
सदा रहत पावस ऋतु हम पर, जब से स्याम सिधारे ॥१॥
अंजन थिर न रहत अँखियन मैं, कर कपोल भये कारे ।
कंचुकि[५] पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे ॥२॥
आँसू सलिल[६] भये पग थाके, बहे जात सित[७] तारे ।
सूरदास अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे ॥३॥

(१) समूह । (२) भँवरा । (३) लाल । (४) घुँघची । (५) चोली । (६) नदी । (७) बँधे या जड़े हुए ।

(४)

हरि के सँग मैं क्यौं न गई री ॥ टेक ॥
हरि सँग जाती कंचन बन आती,
अब माटी के मोल भई री ॥ १ ॥
बरज्यो न कोई इन दूतिन को,
जाती बेर मोहिँ रोक लई री ॥ २ ॥
हरि बिछुरन इक मरन हमारा,
नइ दासी सँग प्रीति भई री ॥ ३ ॥
छल गयो कान्ह बहुरि नहिँ आयो,
अपने हाथ से मैं बिदा दई री ॥ ४ ॥
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस के,
पिछली प्रीति अब नई भई री ॥ ५ ॥

(५)
राग बिलावल

ऊधो इतनी कहियो जाय।
अति कृस-गात[१] भई हैं तुम बिन, बहुत दुखारी गाय॥१॥
जल समूह बरसत अँखियन तैं, हूँकत लै लै नाँव।
जहाँ जहाँ गउ दोहन करते, ढूँढ़त सोइ सोइ ठाँव॥२॥
परत पछार खाय तेही छिन, अति ब्याकुल ह्वै दीन।
मानो सूर काढ़ि डारी हैं, बारि मध्य तैं मीन॥३॥

(६)
होली

सखी री मोहन मुसकाने, लागी सोई पै जाने ॥टेक॥
रात मोहन सुपने मैं देखे, सिथिल भये मोरे प्राने।
बिरहा हूक लगी पसुरी मैं, नैन नीर बरसाने,
सखी जिउरा घबराने ॥ १ ॥

(१) दुबली।

हौं जो चढ़ी थी अपनी अटा पर, वह झट निकस्यो आने
मंद हँसन सुख देखि कृस्न को, क्या हौं कहौं बखाने,
सखी कोइ पीर न जाने ॥२॥
हौं घायल मिरगी ज्यौं घूमत, परी धरनि पर आने।
मंत्र जंत्र औषधि घिस लाये, बिसरे सभी[१] उपाव,
सखी कोइ लोग सियाने ॥३॥
और उपाव नहीं कोउ दूजो, स्याम मिलावो आने।
जानत हैं पिय पीर हमारी, सूरदास के प्रान,
सखी कोइ और न जाने ॥ ४ ॥

(७)
होली

साँवरे सौं कहियो मेरी ॥ टेक ॥
सीस नवाय चरन गहि लीजो, करि बिनती कर जोरी
ऐसी चूक कहा परी मो सोँ, प्रीति पाछली तोरी,
सुरति ना लीन्हि बहोरी ॥ १ ॥
भूषन बसन सभी तजि दीन्हे, खान पान बिसरो री।
बिभुति रमाय जोगिन ह्वै बैठीं, तेरो ही ध्यान धरो री,
अब मैं कैसी करौं री ॥ २ ॥
निसि दिन व्याकुल फिरत राधिका, बिरह बिथा तन घेरी।
बारि[२] करेजा जारि दियो है, अब मैं कैसी करौं री।
बेग चलि आवो किसोरी ॥ ३ ॥
रोम रोम बिष छाय रहो है, मधु मेरे बैर परो री।
स्याम तुम्हें ढूँढ़त कुंजन में, सीस लटा गहि झोरी,
कहों हरि हो हरि हो री ॥ ४ ॥

(१) सब लोग। (२) बाल अवस्था का अर्थात कोमल।

जा दिन गमन कियो मथुरा मैं, गोपिन सुधि बिसरे री।
हम को जोग भोग कुबजा को, का तकसीर है मोर,
कहा कछु कीन्ही चोरी ॥ ५ ॥
सूरदास प्रभु सोँ जा कहियो, आवँ अवधि रही थोरी।
प्रान दान दीजो नँद नन्दन, गावत कीरति तोरी।
प्रीति अब कीजै बहोरी ॥ ६ ॥

(८)

कुबजा ने जादू डारा, जिन मोह्यो स्याम हमारा री॥टेक
निसि दिन चलत रहत नहिं राखे, इन नैनन जलधारा री॥१
अब यह प्रान कैसे हम राखैं, बिछुरे प्रान-अ[illegible]रा री॥२॥
ऊधो तब तैं कल न परत है, जब तैं स्याम सिधारा री ॥३॥
अब तो मधुवन जाय ले आवो, सुन्दर नन्द दुलारा री ॥४॥
सूरदास प्रभु आन मिलावो, तन मन धन सब वारा री ॥५॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नाहिंन रह्यो मन मैं ठैार।
नन्द नन्दन अछत[१] कैसे, आनिये उर और ॥ १ ॥
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदय तैं वह स्याम सूरत, छिन न इत उत जात ॥ २ ॥
कहत कथा अनेक ऊधो, लोक लाज दिखात।
कहा करैं तन प्रेम पूरन, घट न सिंधु समात ॥ ३ ॥
स्याम गात सरोज आनन[२], ललित गति मृदु हाँस।
सूर ऐसे रूप कारन, मरत लोचन प्यास ॥ ४ ॥

(२)

या ऋतु रूस रहन की नाहीं।
बरसत मेघ मेदिनी के हितु, प्रीतम हरष बढ़ाहीं ॥ १ ॥

(१) के होते। (२) कमल जैसा मुख।

जे बेली ग्रीपम ऋतु जरहीं, ते तरवर लपटाहीं।
उमड़ी नदी प्रेम रस माती, सिंधु मिलन को जाहीं ॥ २॥
यह संपदा दिवस चारक की, सोच समझ मन माहीं।
सूर सुनत उठि चली राधिका, दै दूती गल बाहीं ॥ ३ ॥

(३)

भींजत कुंजन से दोउ आवत।
ज्यों ज्यों बूँद परत चूनर पर, त्यों त्यों हरि उर लावत ॥१
अधिक झकोर होत मेघन की, द्रुम तर छिन बिलमावत।
वे हँसि ओट करत पीतांबर, वे चूनरहिँ उढ़ावत ॥ २॥
तैसेहिँ मोर कोकिला बोलत, पवन बीच घन धावत।
ले मुरली कर मन्द घोर स्वर, राग मलार बजावत ॥३॥
भींजे राग रागिनी दोऊ, भींजे तन छबि पावत।
सूरदास हरि मिलत परस्पर, प्रीति अधिक उपजावत ॥४॥

(४)

आज हौं एक के ले कै टरि हौं।
मोहिँ कहा डरपावत हौ प्रभु, अपने पूरे[१] परि लरिहौं ॥१॥
हौं तो पतित सात पीढ़ी को, जो जिय ऐसी धरिहौं।
हौं तो फिरि वैसो ही ह्वै हौं, तुमहिँ बिरद बिनु करिहौं ॥२
अब तो तुम परतीत नसाई, क्यों मानै मम हियरा।
सूरदास साचो तब थपिहौं, जब हँसि दै हौ बीरा ॥३॥

(५)

अब तौ प्रगट भई जग जानी।
वा मोहन सों प्रीति निरंतर, क्यों निबहैगी छानी[२] ॥१॥
कहा करौं सुंदर मूरति इन, नैनन माँझि समानी।
निकसत नाहिँ बहुत पचि हारी, रोम रोम अरुझानी ॥२॥

(१) पूरा यानी ख़ानदानी, सात पीढ़ी का पतित—देखो आगे की कड़ी।
(२) छिपी हुई।

अब कैसे निर्वारि[१] जात है, मिले दुग्ध ज्यौं पानी
सूरदास प्रभु अंतरजामी, उर अंतर की जानी ॥ ३ ॥

(६)

नेक नहीं मन घर सौं लागत ।
पिता मात गुरुजन परमोधत[२],
नीके बचन बान सम लागत ॥ १ ॥
तिन को धृग धृग कहति मनहिं मन,
इन कौं बनै भले ही त्यागत ।
स्याम-बिमुख नर नारि बृथा सब,
कैसे मन इन सौं अनुरागत ॥ २ ॥
इन को बदन[३] प्रात दरसौ जिनि,
बार बार बिधि[४] सौं यह माँगत ।
यह तन सूर स्याम को अर्प्यौ,
नेक टरत नहिं सोवत जागत ॥ ३ ॥

॥ विनय ॥

(१)

तुम मेरी राखो लाज हरी ।
तुम जानत सब अन्तरजामी, करनी कछु न करी ॥१॥
औगुन मोसे बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी ।
सब प्रपंच की पोट बाँध करि, अपने सीस धरी ॥२॥
दारा सुत धन मोह लिये हौं, सुधि बुधि सब बिसरी ।
सूर पतित को बेग उधारो, अब मेरी नाव भरी ॥३॥

(२)

हमारे प्रभु औगुन चित न धरो ।
सम-दरसी है नाम तिहारो, अब मोहिं पार करो ॥१॥

---

(१) सुलझाई या अलग की जा सकती है। (२) समझाते हैं। (३) मुँह।
(४) ब्रह्मा।

इक नदिया इक नार[1] कहावत, मैलो नीर भरो ।
जब दोनौं मिलि एक बरन भये, सुरसरि नाम परो ॥२॥
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो ।
पारस गुन अवगुन नहिं चितवै, कंचन करत खरो ॥३॥
यह माया भ्रम जाल निवारो, सूरदास सगरो ।
अबकी बेर मोहिं पार उतारो, नहिं प्रन जात टरो ॥४॥

(३)

हरि हौं बड़ी बेर को ठाढ़ो ।
जैसे श्रौर पतित तुम तारे, तिनहीं मैं लिखि काढ़ो ॥१॥
जुग जुग बिरद यही चलि आयो, टेर कहत हौं ता तैं ।
मरियत लाज पंच पतितन मैं, हौं घट कहो कहाँ तैं ॥२॥
कै अब हार मान करि बैठो, कै कर बिरद सही ।
सूर पतित जो झूठ कहत है, देखो खोलि बही ॥ ३ ॥

(४)

अबकी राखि लेहु भगवान ।
हम अनाथ बैठी द्रुम डरियाँ, पारधि[2] साध्यो बान ॥१
ता के डर निकसन चाहत हौं, उपर रह्यो सचान[3] ।
दोऊ भाँति दुख भयो क्रिपानिधि, कैान उबारै प्रान ॥२॥
सुमिरत ही अहि[4] डस्यो पारधी, लाग्यो तोर सचान[3]।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, जै जै कृपानिधान ॥३

(५)

जो जन ऊधो मोहिं न बिसारै,
तेहि न बिसारौं छिन एक घरी ॥टेक॥
जो मोहिं भजै भजौं मैं वा को, कल न परत मोहिं एक घरी॥
काटौं जनम जनम के फंदा, राखौं सुख आनन्द करी ॥१

(१) नाला। (२) शिकारी। (३) बाज़। (४) साँप।

चतुर सुजान सभा में बैठे, दुःशासन अनरीति क ।
सुमिरन किये द्रौपदी जबहीं, खैंचत चीर उबारि घ ॥२
ध्रुव प्रहलाद रैनि दिन ध्यावै, प्रगट भये बैकुंठ पुरी ।
भारत में भरुही के अंडा, ता पर गज के घंट ढुरी ॥३॥
अंबरीष गृह आये दुर्वासा, चक्र सुदर्सन छाँहि करी[1] ।
सूर के स्वामी गजराज उबारे, कृपा करी जगदीस हरी ॥४॥

(६)

दीनानाथ अब बार तुम्हारी ।
पतित-उधारन बिरद[2] जानि के, बिगरी लेहु सँवारी ॥१॥
बालापन खेलत ही खोयो, जुवा विषय रस माते ।
वृद्ध भये सुधि प्रगटी मो को, दुखित पुकारत ता तें ॥२॥
सुतन तज्यो त्रियभ्रात तज्यो सब, तन तें तुचा भइ न्यारी ।
स्रवन न सुनत चरन गति थाकी, नैन बहे जल धारी ॥३॥
पलित[3] केस कफ कन्ठ अब रूँध्यो[4], कल न परै दिन राती ।
माया मोह न छाड़ै तृस्ना, यह दोऊ दुखदाती ॥ ४ ॥
अब यह व्यथा दूर करिबे को, और न समरथ कोई ।
सूरदास प्रभु करुना-सागर, तुम तें होय सो होई ॥ ५ ॥

(७)

नाथ मोहिं अबकी बेर उबारो ॥ टेक ॥
तुम नाथन के नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो ।
करमहीन जनम को अंधो, मो तें कैान नकारो ॥ १ ॥

(१) कथा है कि परम भक्त राजा अंबरीष को बिना अपराध दुर्वासा ऋषि ने स्राप देना चाहा जिस पर विष्णु के सुदर्शन चक्र ने दुर्वासा को खदेरा । मुनि जी भागते २ विष्णु की शरण में पहुँचे पर उन्होंने अपने भक्त के अपराधी की रक्षा करने में अपनी असमरत्थता प्रगट की और अंत को राजा अंबरीष के शरणागत होने पर वह बचे । (२) प्रण । (३) पके । (४) घरघराना ।

तीन लोक के तुम प्रति-पालक, मैं तो दास तिहारो ।
तारी जाति कुजाति प्रभू जी, मो पर किरपा धारो ॥२॥
पतितन मैं इक नायक कहिये, नीचन मैं सरदारो ।
कोटि पापी इक पासँग मेरे, अजामिल कैान बिचारो ॥३॥
नाठो धरम नाम सुनि मेरो, नरक कियो हठ तारो ।[1]
मो को ठैार नहीं अब कोऊ, अपनो बिरद सम्हारो ॥४॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारो ।
सूरदास साचो तब माने, जो हूँ मम निस्तारो ॥ ५ ॥

(८)

चूक परी मो तेँ मैं जानी, मिलैँ स्याम बकसाऊँ री ।
हा हा करि दसननि तृन धरिधरि, लोचन जलनि ढराऊँरी[2]१
चरन गहौं गाढ़े करि कर सौं, पुनि पुनि सीस छुआऊँ री ।
मुख चितऊँ फिरि धरनि निहारौं, ऐसे रुचि उपजाऊँ री ॥२
मिलैँ धाय अकुलाय भुजनि भरि, उर की तपनि जनाऊँरी ।
सूरस्याम अपराध छमहु अब, यह कहि कहि जु सुनाऊँरी ३

(९)

माधो जू जो जन तेँ बिगरै ।
सुन कृपालु करुनामय कबहूँ, प्रभु नहिँ चित्त धरै ॥ १ ॥
ज्योँ सिसु[3] जननि[4] जठर[5] अंतरगत, सत अपराध करै ।
तऊ तनय[6] तनु तोष पोष चित, बिहँसत अंक भरै ॥२॥
जदपि बिटप[7] जर हतन[8] हेत करि, कर कुठार पकरै ।
तदपि सुभाव सुसील सुसीतल, रिपु तनु ताप हरै ॥३॥

(१) धर्मराय ने मेरा नाम सुनकर मुझे ग्रहण करने से इनकार किया और नर्क बोला कि हमारे यहाँ रहने के यह योग्य नहीं है-इस को तार कर हटाओ । (२) दाँतौं के नीचे तिनका धर कर (जोकि निशान आधीनता का है) आँखोँ से जल धारा बहाती हूँ । (३) बालक । (४) माता । (५) पेट । (६) बेटा । (७) पेड़ । (८) काटने के लिये ।

कारन करन अनन्त अजित कहँ, केहिँ बिधि चरन ारै।
यह कलिकाल चलत नहिँ मो पै, सूर सरन उबरै ।। ॥

(१०)

अब हैाँ नाच्यो बहुत गोपाल ॥ टेक ॥
काम क्रोध को पहिरि चोलना, कंठ बिषय की माल।
महा मोह के नूपुर बाजत, निन्दा सबद रसाल ॥ १ ॥
तृस्ना नाद करत घट भीतर, नाना बिधि की ताल।
माया को कटि[1] फेंटा बाँध्यो, लोभ तिलक दियो भाल[2]।।२
कोटिक कला नाच दिखराई, जल थल सुधि नहिँ काल।
सूरदास की सभी अबिद्या, दूर करो नँदलाल ॥ ३ ॥

(११)

मो सम कैान कुटिल खल कामी।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो, ऐसो निमक-हरामी ॥१॥
भरि भरि उदर बिषय को धावैाँ, जैसे सूकर ग्रामी[3]।
हरि-जन छाड़ हरी-बिमुखन की, निसिदिन करत गुलामी॥२
पापी कौन बड़ो है मो तैं, सब पतितन मैं नामी।
सूर पतित को ठैार कहाँ है, सुनिये श्रीपति[4] स्वामी ॥३॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाडु मन हरि बिमुखन को संग।
कहा भयो पय पान कराये, बिष नहिँ तजत भुवंग ॥१॥
जा के संग कुबुद्धी उपजै, परत भजन मैं भंग।
काम क्रोध मद लोभ मोह मैं, निस दिन रहत उमंग ॥२॥
कागहि कहा कपूर खवाये, स्वान न्हवाये गंग।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषन अंग ॥ ३ ॥

(१) कमर। (२) सिर। (३) गाँव का सुअर। (४) लक्ष्मी के पति अर्थात विष्णु।

पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतो[१] करत निषंग[२]।
सूरदास खल कारी कामरि, चढ़त न दूजो रंग ॥ ४ ॥

(२)

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥
इक दिन राजा हरीचंद गृह, संपति मेरु समान।
इक दिन जाय स्वपच गृह सेवत, अंबर हरत मसान ॥१॥
इक दिन दूलह बनत बराती, चहुँ दिसि गड़त निसान।
इक दिन डेरा होत जँगल मेँ, कर सूधे पग तान ॥२॥
इक दिन सीता रुदन करत है, महा विषम उद्यान[३]।
इक दिन रामचन्द्र मिलि दोऊ, बिचरत पुष्प बिमान ॥३॥
इक दिन राजा राज जुधिष्ठिर, अनुचर श्रीभगवान।
इक दिन द्रोपदि नग्न होत है, चीर दुसासन तान ॥४॥
प्रगटत है पूरब की करनी, तजु मन सोच अजान।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, बिधि के अंक[४] प्रमान ॥५॥

स्वामी हरिदास

यह एक भारी कृष्ण भक्त हुए जो सोलहवेँ शतक के पिछले हिस्से से सत्रहवेँ शतक के अगले हिस्से तक बिराजमान थे। ललिता सखी के अवतार समझे जाते हैँ। गान विद्या मेँ यह बड़े निपुन प्रसिद्ध तानसेन के गुरू थे। अकबर बादशाह जो इन का समकालीन था एक बार तानसेन के साथ इन के दर्शन को आया था। इन के कई एक ग्रंथ हैँ जिन मेँ से भरथरी-वैराग्य और रस के पद प्रसिद्ध हैँ। भरथरी-वैराग्य संबत १६०७ मेँ और पद १६१७ मेँ बनाये गये।

(१)

गायो न गोपाल मन लाइ के निवारि लाज।
पायो न प्रसाद साधु मन्डली मेँ जाइ के ॥ १ ॥

(१) खाली। (२) तरकश। (३) भारी जंगल मेँ। (४) ब्रह्मा का कर्म लेख।

धायो न धमक वृन्दाबिपिन की कुंजन मैं।
रह्यो न सरन जाइ बिट्ठलेसराइ के ॥ २ ॥
नाथ जू न देखि छक्यो छिनहूँ छबीली छाँव।
सिंह पौंरि पर्यो नाहिं सीसहूँ नवाइ के ॥ ३ ॥
कहै हरिदास तोहिं लाज हू न आवै नेक।
जनम गँवाये ना कमायो कछु आइ के ॥ ४ ॥

(२)

गहौ मन, सब रस को रस सार ॥ टेक ॥
लोक वेद कुल करमै तजिये, भजिये नित्य बिहार ॥१॥
गृह कामिनि कंचन-धन त्यागौ, सुमिरौ स्याम उदार ॥२
गहि हरिदास रीति सन्तन को, गादी को अधिकार ॥३॥

मीरा बाई

जीवन समय—१५७३ से १६३० तक। जन्म स्थान—मौ० कुकड़ी (मेरता. मारवाड़)। जाति और आश्रम—राठोर, गृहस्थ। गुरू—रैदासजी।

इन की अनूठी भक्ति जक्त-प्रसिद्ध है। यह जोधपुर के राठोर राव रंजीतसिंह की एकलौती बेटी थीं और उदयपुर के युवराज कुँवर भोजराज से व्याही गईं जो राजगद्दी पर बैठने के पहिले ही मर गये। पति के देहान्त होने पर मीरा बाई के देवर ने जो गद्दी पर बैठे इन को निरंतर भक्ति और साधु सेवा करने के कारन बहुत सताया यहाँ तक कि बाई जी को घर से भाग जाना पड़ा। कहते हैं कि मीरा बाई अंत समय द्वारका में रनछोर जी की मूर्त्ति में समा कर अलोप होगईं।

॥ चितावनी ॥

(१)

मनखा[१] जनम पदारथ पायो, ऐसो बहुर न आती ॥टेक॥
अब के मोसर[२] ज्ञान बिचारो, राम राम मुख गाती।
सतगुर मिलिया सुंज[३] पिछानी, ऐसा ब्रह्म मैं पाती ॥१॥

(१) मनुष्य का। (२) अवसर। (३) सूझ।

सगुरा सूरा अमृत पीवे, निगुरा प्यासा जाती।
मगन भया मेरा मन सुख मैं, गोविंद का गुन गाती ॥२॥
साहिब पाया आदि अनादी, नातर[1] भव मैं जाती।
मीरा कहै इक आस आप की, औराँ[2] सूँ सकुचाती ॥३॥

(२)

भज मन चरन कँवल अविनासी ॥ टेक ॥
जेताइ दीसे धरनि गगन बिच, तेताइ सब उठि जासी।
कहा भयो तीरथ व्रत कीन्हे, कहा लिये करवत कासी ॥१॥
इस देही का गरब न करना, माटी मैं मिल जासी।
यो संसार चहर[3] की बाजी, साँझ पड्याँ उठि जासी ॥२॥
कहा भयो है भगवा पहर्याँ, घर तज भये सन्यासी।
जोगी होय जुगति नहिं जानी, उलटि जनम फिर आसी ॥३॥
अरज करौं अबला कर जोरे, स्याम तुम्हारी दासी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, काटो जम की फाँसी ॥४॥

॥ विरह ॥

(१)

हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय ॥टेक॥
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना होय।
गगन मँडल पै सेज पिया की, किस बिध मिलना होय ॥१॥
घायल की गति घायल जानै, की जिन लाई होय।
जौहरी को गत जौहरी जानै, की जिन जौहर होय ॥२॥
दरद की मारी बन बन डोलूँ, बैद मिल्या नहिं कोय।
मीरा की प्रभु पीर मिटैगी, जब बैद सँवलिया होय ॥३॥

(१) नहीं तो। (२) दूसरों। (३) चिड़ियों का सा तमाशा जो साँझ होते ही बसेरे को उड़ जाती हैं।

(२)

नींदलड़ी नहिं आवै सारी रात, किस बिध होइ परभात[१]॥टेक
चमक[२] उठी सुपने सुध भूली, चंद्र कला न सुहात।
तलफ तलफ जिव जाय हमारो, कब रे मिलै दीना-नाथ॥
भइ हूँ दिवानी तन सुध भूली, कोई न जानी म्हाँरी बात।
मीरा कहै बीती सोइ जानै, मरन जीवन उन हाथ॥२॥

(३)

नैना म्हारे बान पड़ी, साईं मोहिं दरस दिखाई॥ टेक॥
चित्त चढ़ी मेरे माधुरि मूरत, उर बिच आन अड़ी॥१॥
कैसे प्रान पिया बिनु राखूँ, जीवन मूर जड़ी[३]॥ २॥
कब की ठाढ़ी पंथ निहारूँ, अपने भवन खड़ी॥ ३॥
मीरा प्रभु के हाथ बिकानी, लोक कहे बिगड़ी॥ ४॥

(४)

साईं म्हाँरी हरि न बूझी बात।
पिंड में से प्राण पापी, निकस क्यूँ नहिं जात॥ १॥
रैन अँधेरी बिरह घेरी, तारा गिणत निस जात।
ले कटारी कंठ चीरूँ, करूँगी अपघात॥ २॥
पाट[४] न खोल्या मुखाँ न बोल्या, साँझ लग परभात।
अबोलना में अवध बीती, काहे की कुसलात॥ ३॥
सुपन में हरि दरस दीन्हाँ, मैं न जाण्यो हरि जात।
नैन म्हाँरा उघड़[५] आया, रही मन पछतात॥ ४॥
आवन आवन होय रह्यो रे, नहिं आवन की बात।
मीरा ब्याकुल बिरहनी रे, बाल ज्यौं बिल्लात॥ ५॥

(५)

घड़ी एक नहिं आवड़े[६], तुम दरसन बिन मोय।
तुम ही मेरे प्राण जी, का सूँ जीवन होय॥ १॥

(१) सबेरा। (२) चौंक। (३) बूटी। (४) परदा। (५) खुल गया। (६) सुहावै।

धान[1] न भावे नींद न आवे, बिरह सतावे मोय।
घायल सी घूमत फिरूँ रे, मेरा दरद न जाने कोय ॥२॥
दिवस तो खाय गमाइयो रे, रैन गमाई सोय।
प्राण गमायो झूरताँ[2] रे, नैन गमाई रोय ॥ ३ ॥
जो मैं ऐसा जानती रे, प्रीत किये दुख होय।
नगर ढँढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोय ॥ ४ ॥
पंथ निहारूँ डगर बुहारूँ, ऊभी[3] मारग जोय।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिलियाँ सुख होय ॥५॥

(६)

मैं अपने सैयाँ सँग साची।
अब काहे की लाज सजनी, प्रगट ह्वै नाची ॥ १ ॥
दिवस भूख न चैन कबहिन, नींद निसु नासी।
बेध वार को पार होइगो, ज्ञान गुह[4] गाँसी ॥ २ ॥
कुल कुटुँब सब आनि बैठे, जैसे मधु मासी[5]।
दास मीरा लाल गिरधर, मिटी जग हाँसी ॥ ३ ॥

(७)

नातो[6] नाम को मो सूँ, तनक न तोड़यो जाय ॥ टेक ॥
पानाँ ज्यूँ पीली पड़ी रे, लोग कहै पिंड रोग।
छाने[7] लाँघन[8] मैं किया रे, राम मिलन के जोग ॥१॥
बावल[9] बैद बुलाइया रे, पकड़ दिखाई म्हाँरी बाँह[10]।
मूरख बैद मरम नहिं जाने, करक[11] कलेजे माँह ॥२॥
जाओ बैद घर आपने रे, म्हाँरो नाँव न लेय।
मैं तो दाधी[12] बिरह की रे, काहे कूँ औषद[13] देय ॥३॥

(१) अन्न। (२) बिलक बिलक कर। (३) खड़ी। (४) गुप्त। (५) शहद की मक्खी। (६) रिश्ता। (७) छिप कर। (८) फ़ाक़ा। (९) बाप। (१०) नाड़ी। (११) दर्द। (१२) जली हुई। (१३) दवा।

माँस-गलि गलि छीजिया रे, करक रह्या गल आहि[१]।
आँगुलियाँ की मूँदड़ी, म्हाँरे आवन लागी बाँहि ॥ ४ ॥
रहु रहु पापी पपीहा रे, पिव को नाम न लेय।
जे कोइ बिरहन साम्हले[२], तो पिव कारन जिव देय ॥५॥
खिन मन्दिर खिन आँगने रे, खिन खिन ठाढ़ी होय।
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी, म्हाँरी बिथा न बूझे कोय ॥ ६ ॥
काढ़ि कलेजो मैं धरूँ रे, कौवा तू ले जाय।
ज्याँ देसाँ म्हाँरो पिव बसै रे, वे देखत तू खाय ॥ ७ ॥
म्हाँरे नातो नाम को रे, और न नातो कोय।
मीरा व्याकुल बिरहनी रे, पिय दरसन दीज्यो मोय ॥८॥

(८)

दरस बिन दूखन लागे नैन ॥ टेक ॥
जब से तुम बिछरे मेरे प्रभुजी, कबहुँ न पायौं चैन ॥१॥
सबद सुनत मेरी छतिया कंपै, मीठे लगे तुम्र बैन ॥२॥
एक टकटकी पंथ निहारूँ, भई छमासी रैन ॥३॥
बिरह बिथा कासूँ कहूँ सजनी, बह गइ करवत अैन ॥४॥
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, दुख मेटन सुख देन ॥५॥

(९)

मतवारो बादल आयो रे,
हरि को सँदेसो कुछ नहिं लायो रे ॥ टेक ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनायो रे।
कारी अँधियारी बिजली चमके, बिरहन अति डरपायो रे ॥१
गाजे बाजे पवन मधुरिया, मेहा अति झड़ लायो रे।
फूँके[३] काली नाग बिरह की जारी, मीरा मन हरि भायो रे ॥२

(१) हाड़। (२) सुन पावै। (३) साँप फुपकार मारता है।

(१०)
होली

रमैया बिन नींद न आवे।
नींद न आवे बिरह सतावे, प्रेम की आँच ढुलावे[1] ॥टेक॥
बिन पिया जोत मँदिर अँधियारो, दीपक दाय[2] न आवे।
पिया बिना मेरी सेज अलूनी[3], जागत रैन बिहावे[4],
पिया कब रे घर आवे ॥ १ ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनावे।
घुमँड़ घटा ऊलर[5] होइ आई, दामिनि दमक डरावे,
नैन झर लावे ॥ २ ॥
कहा करूँ कित जाउँ मोरी सजनी, बेदन कून बुतावे[6]।
बिरह नागिन मोरी काया डसी है, लहर लहर जिव जावे,
जड़ी घस लावे ॥ ३ ॥
को है सखी सहेली सजनी, पिया कूँ आन मिलावे।
मीरा कूँ प्रभु कब रे मिलोगे, मनमोहन मोहिँ भावे,
कबै हँस करि बतलावे[7] ॥ ४ ॥

(११)
होली

होली पिया बिन मोहिँ न भावै, घर आँगन न सुहावे ॥टेक॥
दीपक जोय कहा करूँ हेली, पिय परदेस रहावे।
सूनी सेज जहर ज्यूँ लागे, सुसक सुसक जिय जावे,
नींद नैन नहिं आवे ॥ १ ॥
कब की ठाढ़ी मैं मग जोऊँ, निस दिन बिरह सतावे।
कहा कहूँ कछु कहत न आवे, हिवड़ो अति अकुलावे,
पिया कब दरस दिखावे ॥ २ ॥

---

(१) झुलगाना। (२) पसंद। (३) फीकी। (४) बीते। (५) चढ़ना। (६) बुझावे, शांत करे। (७) बोले।

ऐसा है कोइ परम सनेही, तुरत सँदेसो लावे ।
वा बिरियाँ कब होसी मो कूँ, हँस करि निकट बुलावे
मीरा मिल होरी गावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

आली साँवरो कि दृष्टि, मानो प्रेम की कटारी है ॥टेक।
लागत बेहाल भई, तन की सुधि बुद्धि गई ।
तन मन व्यापो प्रेम मानो मतवारी है ॥ १ ॥
सखियाँ मिलि दोइ चारी, बावरी सी भई न्यारी ।
हौं[1] तो वा को नीके जानौं, कुंज को बिहारी है ॥२॥
चंद को चकोर चाहै, दीपक पतंग दाहै ।
जल बिना मीन जैसे, तैसे प्रीत प्यारी है ॥३॥
बिनती करौं हे स्याम, लागौं मैं तुम्हारे पाम[2] ।
मीरा प्रभु ऐसे जानो, दासी तुम्हारी है ॥ ४ ॥

(२)

जावो हरि निरमोहड़ा[3] रे, जानी थाँरी प्रीत ॥ टेक ॥
लगन लगी जब और प्रीत छी[4], अब कुछ अँवलो[5] रीत ॥१॥
अमृत पाय बिषै क्यूँ दीजे, कौन गाँव की रीत ॥२॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, आप गरज के मीत ॥३॥

(३)

जब से मोहिं नंद नँदन दृष्टि पड़्यो माई ।
तब से परलोक लोक कछू ना सुहाई ॥ १ ॥
मोरन की चंद्र कला सीस मुकुट सोहै ।
केसर को तिलक भाल तीन लोक मोहै ॥ २ ॥

(१) मैं । (२) पाँव । (३) निर्मोही । (४) थी । (५) उलटा ।

कुंडल की अलक झलक कपोलन पर छाई ।
मनो[१] मीन सरवर तजि मकर[२] मिलन आई ॥ ३ ॥
कुटिल भृकुटि[३] तिलक भाल चितवन मैं टौना ।
खंजन[४] अरु मधुप[५] मीन भूले मृग छौना[६] ॥ ४ ॥
सुंदर अति नासिका सुग्रीव[७] तीन रेखा ।
नटवर[८] प्रभु भेष धरे रूप अति विसेषा ॥ ५ ॥
अधर बिंब अरुन नैन मधुर मंद हाँसी ।
दसन[९] दमक दाड़िम[१०] दुति[११] चमके चपला[१२] सी ॥ ६ ॥
छुद्र घंट किंकिनी[१३] अनूप धुनि सुहाई ।
गिरधर के अंग अंग मीरा बलि जाई ॥ ७ ॥

(४)

या मोहन के मैं रूप लुभानी ॥ टेक ॥
हाट बाट मोहिं रोकत टोकत,
या रसिया की मैं सार न जानी ॥ १ ॥
सुंदर बदन कमल-दल लोचन,
बाँकी चितवन मंद मुसकानी ॥ २ ॥
जमुना के नीरे तीरे धेनु चरावत,
बंसी मैं गावत मीठी बानी ॥ ३ ॥
तन मन धन गिरधर पर वारूँ,
चरन कमल मीरा लपटानी ॥ ४ ॥

---

(१) मानो, गोया कि । (२) मगर । (३) भौं । (४) खेड़रिच चिड़या । (५) भौंरा । (६) बच्चा । (७) सुंदर गला । (८) नट के समान काछनी काछे । (९) दाँत । (१०) अनार । (११) प्रकाश । (१२) बिजली । (१३) छोटी छोटी घंटियाँ जो करधनी में पोह देते हैं ।

(५)

निपट बंकट[१] छबि, अटके मेरे नैना ॥ टेक ॥
देखत रूप मदन मोहन को, पियत पियूष[२] न मटके[३] ॥१॥
बारिजं[४] भँवाँ अलक[५] टेढ़ी मनो, अति सुगंधि रस अटके ॥२॥
टेढ़ी कटि[६] टेढ़ी कर मुरली, टेढ़ी पाग लर[७] लटके ॥३॥
मीरा प्रभु के रूप लुभानी, गिरधर नागर नट के ॥४॥

(६)

बरसे बदरिया सावन की, सावन की मन भावन की ॥टेक॥
सावन में उमग्यो मेरो मनवा, भनक सुनी हरि आवन की ॥१॥
उमड़ घुमड़ चहुँ दिस से आयो, दामिन दमके झरलावन की ॥२॥
नन्ही नन्ही बूँदन मेहा बरसे, सीतल पवन सुहावन की ॥३॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, आनँद मंगल गावन की ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

पिया मोहिँ आरत तेरी हो ।
आरत तेरे नाम की मोहिँ साँझ सबेरी हो ॥ १ ॥
या तन को दियना करोँ मनसा करोँ बाती हो ।
तेल भरावोँ प्रेम का बारोँ दिन राती हो ॥ २ ॥
पटियाँ पारोँ गुर ज्ञान की सुमति माँग सवारोँ हो ।
पिया तेरे कारने धन जोबन वारोँ हो ॥ ३ ॥
सेजड़िया बहु-रंगिया चंगा फूल बिछाया हो ।
रैन गई तारा गिणत प्रभु अजहुँ न आया हो ॥ ४ ॥
सावन भादोँ ऊमड़ो बरखा रितु छाई हो ।
भौँह घटा घन घेरि के नैनन झरि लाई हो ॥ ५ ॥

(१) बाँकी। (२) अमृत। (३) मुड़े। (४) कँवल। (५) बाल की लट। (६) कमर। (७) पेँच।

मात पिता तुम को दियो तुम हीं भल जानो हो[१]।
तुम तजि और भतार को मन मैं नहिं आनौं हो ॥ ६॥
तुम हो पूरे साइयाँ पूरन पद दीजै हो।
मीरा ब्याकुल बिरहनी अपनी करि लीजै हो ॥ ७ ॥

(२)

तुम पलक उघाड़ो दीनानाथ, हूँ हाजिर नाजिर कब की खड़ी ॥टेक
साऊ[२] थे दुसमन होइ लागे, सब ने लगूँ कड़ी[३]।
तुम बिन साऊ कोऊ नहीं है, डिगी[४] नाव मेरी समँद अड़ी १
दिन नहिं चैन रात नहिं निदरा, सूखूँ खड़ी खड़ी।
बान बिरह के लगे हिये मैं, भूलूँ न एक घड़ी ॥२।
पत्थर की तो अहिल्या तारी, बन के बीच पड़ी।
कहा बोझ मीरा मैं कहिये, सौ ऊपर एक धड़ी[५] ॥३॥
गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे, धुर से कलम भिड़ी।
सतगुरु सैन दई जब आ के, जोत मैं जोत रली ॥४॥

॥ उपदेश ॥

राम नाम रस पीजे मनुआँ, राम नाम रस पीजे ॥टेक॥
तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चरचा सुण लीजे ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह कूँ, चित से बहाय दीजे ॥२॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ताहि के रँग मैं भींजे ॥३॥

(१) देखो जीवन-चरित्र मीरा बाई का उनकी शब्दावली के ग्रंथ मैं।
(२) रक्षक। (३) कड़वी। (४) झकोला खाती है। (५) पसेरी।

नरसी मेहता जी

जीवन समय—सत्रहवाँ शतक। रचना काल—१६३०। जन्म स्थान—जूनागढ़ [गुजरात]। जाति और आश्रम—गुजराती ब्राह्मण, गृहस्थ।

इन के मा बाप बचपन ही में मर गये थे इसलिये भाई भावज के साथ रहने लगे। फिर भावज के कुटिल वचन के कारन उसका घर भी छोड़ दिया और एक शिवाले में सात दिन तक भूखे प्यासे पड़े रहे; शिवजी की कृपा से वृंदावन आकर साक्षात दर्शन श्रीकृष्ण का पाया। वृंदावन से जूनागढ़ लौट आये और वहाँ एक घर अलग बनाकर अपना ब्याह कर लिया जिस से एक बेटा और दो बेटी उत्पन्न हुए। इन की ईश्वर-भक्ति जगत-विख्यात है और इन की हुंडी की कथा जो साधुओं की एक जमात के आग्रह वस इन्होंने साँवल साह पर द्वारका को लिख दी और जिस का दाम श्रीकृष्ण ने आप साहूकार का रूप धारण करके चुकाया भक्तमाल में दी है।

(१)

म्हाँने पार उतारो जी, थाँने निज भक्तन की आन।
हमरे अवगुन नेक न चितवो, अपनो ही करि जान ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह बस, भूल्यो पद निर्बान।
अब तो सरन गही चरनन की, मत दीजो मोहिं जान ॥२॥
लख चौरासी भरमत भरमत, नेक न परी पिछान।
भवसागर में बह्यो जात हौं, रखिये स्याम सुजान ॥३॥
हौं तो कुटिल अधम अपराधी, नहिं सुमिरयो तेरो नाम।
नरसी के प्रभु अधम-उधारन, गावत बेद पुरान ॥४॥

(२)

कहाँ लगाई एती देर, अरे अरे साँवरे ॥ टेक ॥
हौं गुजराती सिव को उपासी, पूजौं साँझ सबेर ॥१॥
भक्ति मर्म को सार न जानौं, हाँसी कराई मेरी ढेर ॥२॥
ऊँचे चढ़ि के टेर सुनाऊँ, अब सुनिये म्हारी टेर ॥३॥
क्या कहिँ काज सँवारे भक्तन के, क्या निद्रा ने लिये घेर ॥४॥
नरसी के प्रभु अधम-उधारन, राखिये अब की बेर ॥५॥

गुसाईं तुलसीदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ७१]

॥ प्रेम ॥

ये दोउ झूलत रंग हिंडोरेँ ।
दसरथ-सुत अरु जनक-नंदनी, चितवन मेँ चित चोरेँ ॥१॥
नान्ही नान्ही बूँद पवन पुरवैया, बरसत थोरेँ थोरेँ ।
हरि हरि भूमि घटा झुकि आईं, सरजू लेत हिलोरेँ ॥२॥
हय दल पैदल गज दल रथ दल, कोटि बने चहुँ ओरेँ ।
उपवन माहिँ मधुर सुर बोलैँ, कोकिल मोर चकोरेँ ॥३॥
रत्न जड़ित को बन्यो हिंडोरा, रेसम लागी डोरेँ ।
अरस परस दोउ झूल झुलावैँ, इक साँवर इक गोरेँ ॥४॥
वा मेँ बिमल सखी उरझानी, अपनी अपनी ओरेँ ।
तुलसिदास अनुकूल जानि के, सियाजी हँसीँ मुख मोरेँ ॥५॥

॥ विनय ॥

(१)

काहे तैँ हरि मोहिँ बिसारो ।
जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सम्हारो ॥१॥
पतित-पुनीत दीनहित, असरण-सरण कहत स्रुति चारो ।
हौँ नहिँ अधम सभीत दीन, किधौँ बेदन मृषा पुकारो ॥२॥
खग गणिका गज ब्याध पाँति जहँ, तहँ हौँ हूँ बैठारो ।
अब केहि लाज कृपानिधान, परसत पनवारो फारो ॥३॥

शब्द १ विनय के अर्थ—हे हरि मुझ को क्योँ भूले जाते हैा, तुम तो अपनी बड़ाई और मेरे दोष दोनोँ को जानते हो फिर मुझे क्योँ नहीँ सम्हालते । चारो वेद आप के पतितपावन, दुखिया के हितकारी, असरन की सरन होने की महिमा गाते हैँ फिर जो आप मुझ सरीखे अधम, संसारी भय मानने वाले और अबल दुखिया के

मसक बिरंचि बिरंचि मसक सम, करहु प्रभाव तुम्हारो ।
यह सामर्थ्य अछत मोहिँ त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो ॥४
जनहि न नरक परत मोकहँ डर, यद्यपि हैाँ अति हारो ।
यह बड़ि त्रास दास तुलसी, प्रभु नामहुँ पाप न जारो ॥५॥

(२)

केसव कारन कवन गुसाईँ ।
जेहि अपराध असाधु जानि मोहिँ, तज्यो अज्ञ[१] की नाईँ॥१
परम पुनीत सन्त कोमल चित, तिन्हहिँ तुमहिँ बनि आई।
तैा बिप्र ब्याध गनिकहिँ कस तारयो, का कछु रही सगाई[२]२
काल कर्म गति अगति जीव की, सब हरि हाथ तुम्हारे ।
सोइ कछु करहु हरहु ममता मम, फिरहु[३] न तुमहिँ बिसारे॥३
जैाँ तुम तजहु भजैाँ न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे ।
मन बच कर्म नरक सुरपुर जहँ, तहँ रघुबीर निहोरे॥४[४]

तारने में देर लगाते हैा तो सिवाय इस के क्या कहा जाय कि या तो मेरे समस्त औगुनोँ में निपुन होने में कसर है या आप की महिमा वेदोँ ने मिथ्या भाखी है। आप के प्रन के सहारे मैँ खग [जटायु], गणिका [वेश्या], गज, और व्याधा जिस ने श्रीकृष्ण के चरन में तीर मारा था ऐसे अधमोँ की पाँति में बैठाया गया तो फिर पंगत में बैठालने के पीछे कौन लाज आप को लगती है कि परोसने के समय मेरी पत्तल को फाड़ते हैा। आप का सुभाव है कि छिन में मच्छड़ को ब्रह्मा और ब्रह्मा को मच्छड़ बना देते हैा फिर ऐसे समरथ होकर जो मुझे त्यागते हैा तो मेरा क्या बस है। सो यद्यपि मैं जनम भर पाप करते २ अति थक गया हूँ फिर भी मुझे नर्क में पड़ने का डर नहीं है पर यह चिन्ता अवश्य है कि द्रोही हँसैंगे कि नाम भी पापोँ को नहीं काट सका।

(१) अनजान बन कर। (२) जो तुम केवल पवित्र सज्जनोँ को ही ग्रहन करते होते तो अजामिल बिप्र, व्याध, गनिका इत्यादि दुर्जन क्या तुम्हारे कोई नातेदार थे जो उनको तारा। (३) फिर भी। (४) जो तुम मुझे त्याग दोगे तैा भी यह मेरा प्रन है कि दूसरे स्वामी को न भजूँगा, चाहे मुझे नर्क में डाल देव चाहे देव लोक में पहुँचाओ मैं मनसा बाचा कर्मना तुम्हाराही जस गाऊँगा।

जद्यपि नाथ उचित न होत अस, प्रभु सौँ करौँ ढिठाई।
तुलसिदास सीदत[1] निसि दिन, देखत तुम्हारि निठुराई ॥५

(३)

माधव अब न द्रवहु[2] केहिँ लेखे।
प्रनतपाल[3] पन तोर, मोर पन जियउँ कमल पद देखे ॥१॥
जब लगि मैँ न दीन दयाल तैँ, मैँ न दास तैँ स्वामी।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउँ नहिँ, जद्यपि अन्तर्जामी ॥२
तैँ उदार मैँ कृपन पतित मैँ, तैँ पुनीत स्रुति गावै।
बहुत नात रघुनाथ तोहिँ मोहिँ, अब न तजे बनि आवै ॥३
जनक जननि गुरु बन्धु सुहृद पति, सब प्रकार हितकारी।
द्वैत रूप तम कूप परौँ नहिँ, अस कछु जतन बिचारी[4]॥४
सुनु अदभ्र करुना बारिज-लोचन, मोचन भय भारी।
तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु, संसय टरत न टारी[5]॥५

(४)

तू दयाल दीन हौँ, तू दानि हौँ भिखारी।
हौँ प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज हारी ॥ १ ॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सोँ।
मो समान आरत नहिँ, आरत-हर तो सोँ ॥ २ ॥

---

(१) दुख पाता है। (२) पसीजते, दया करते। (३) जो एक बार भी प्रनाम करै तिस का पालन|करनेहारा। (४) पिता, माता, गुरू, भाई, मित्र, स्वामी, सब प्रकार तुम्हीँ मेरे हितकारी हो सो ऐसा कुछ जतन करो कि द्वैत रूप अर्थात हौँ मैँ के अंध-कूप मेँ न गिर जाऊँ। (५) सुनो हे अधिक [अदभ्र] करुना-निधान कमल-नैन, भयहरन प्रभु तुम्हारे प्रकाश बिना मेरा भ्रम अपने पुरुषार्थ से टाले नहीँ टलता।

शब्द ४ का अर्थ—इस शब्द मे गुसाईँ जी ग्यारह नाते गिना कर अपने इष्ट से विनय करते हैँ कि जो नाता आप को भावै उसी एक को मान कर मुझे चरन सरन मेँ लीजिये।

ब्रह्म तू हौं जीव हौं, तू ठाकुर हौं चेरो ।
तात मात गुरु सखा तू, सब बिधि हित मेरो ॥ ३ ॥
तोहि मोहिं नातो अनेक, मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी, कृपालु चरन सरन पावै ॥ ४ ॥

(५)

हरि जू मेरो मन हठ न तजै ।
निसि दिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाव निजै ॥१
ज्यों जुवती अनुभवत प्रसव[१] अति, दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै ॥२॥
लोलुप भ्रमत ग्रमित निसि बासर, सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहिं मारग,कबहुं न मूढ़ लजै ॥३॥[२]
हौं हार्यो करि जतन बिबिधि बिधि,अतिसय प्रबल अजै[३]।
तुलसिदास बस होत तबै, जन प्रेरक प्रभु बरजै ॥ ४ ॥

(६)

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोई ।
जाहि दीनता कहौ हौं दीन देखौं सोई[४] ॥ १ ॥
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तो घनेरे ।
पै तौ लौं जौ लौं रावरे न नेकु नैन फेरे[५] ॥ २ ॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बदत[६] बेद चारी ।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तिहारी ॥ ३ ॥

---

(१) जनने का दुख सहती है। (२) जैसे लालची रात दिन रुपया कमाने के फेर में थक जाता है और जूतियाँ खाता है फिर भी वही चाल चलता है और लाज नहीं लाता। (३) अजीत। (४) ईश्वर को छोड़ दूसरा दीनता छुड़ाने का समरथ नहीं है. जिस किसी से अपनी दीनता का दुख रोता हूँ उसी को आप दीन दुखी अर्थात असमरथ पाता हूँ। (५) सुर नर मुनि आदि की जभी तक प्रभुता है जब तक तेरी भौं उनकी ओर टेढ़ी नहीं होती। (६) कहता है।

तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो[१] ।
सुनि सुभाव सील सुजस जाचक जन आयो ॥ ४ ॥
पाहन पसु बिटप बिहँग अपने करि लीन्हे ।
महाराज दसरथ के रंक राव कीन्हे ॥ ५ ॥[२]
तू गरीब को निवाज हौं गरीब तेरो ।
बारक[३] कहिये कृपालु तुलसिदास मेरो ॥ ६ ॥

(७)

मैं हरि पतित-पावन सुने ।
मैं पतित तुम पतित-पावन, दोऊ बानिक[४] बने ॥ १ ॥
ब्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमन भने ।
और अधम अनेक तारे, जात का पै गने ॥ २ ॥
जानि नाम अजानि लीन्हें, नरक जमपुर मने ।
दास तुलसी सरन आयो, राखिये आपने ॥ ३ ॥

(८)

तुम सम दीन बन्धु, न दीन कोउ मो सम,
सुनहु नृपति रघुराई ।
मो सम कुटिल मौलिमनि[५] नहिं जग,
तुम सम हरि न हरन कुटिलाई ॥ १ ॥
हौं मन बचन कर्म पातक-रत,
तुम कृपालु पतितन गति दाई ।
हौं अनाथ प्रभु तुम अनाथ-हित,
चित यह सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥ २ ॥

---

(१) जिस ने आप से माँगा वह फिर मंगता न रहा अर्थात पूरिपूर्ण हो गया । (२) दशरथ के पुत्र श्रीरामचंद्र ने जिस जिस को अपनाया वह दरिद्री से राजा होगया यहाँ तक कि पत्थर जैसे अहिल्या, जानवर [बंदर भालू], पेड़ [यमलार्जुन], चिड़िया [जटायु] की योनियों तक से दीन दुखियों का उद्धार कर दिया । (३) एक बेर । (४) सुभाव, बज़ा । (५) दुष्टों का शिरोमनि, कुटीचर ।

हौं आरत[१] आरत-नासन तुम्ह,
कीरति निगम पुरानन गाई ।
हौं सभीत[२] तुम हरन सकल भय,
कारन कवन कृपा बिसराई ॥ ३ ॥
तुम सुखधाम राम स्त्रमभंजन[३],
हौं अति दुखित त्रिबिध स्त्रम[४] पाई ।
यह जिय जानि दास तुलसी कहँ,
राखहु सरन समुझि प्रभुताई ॥ ४ ॥

(६)

जो पै दूसरो कोउ होइ ।
तो हौं बारहिं बार प्रभु, कत दुख सुनावौं रोइ ॥ १ ॥
काहि ममता दीन पर, को पतित-पावन नाम ।
पाप-मूल अजामिल हिं, केहि दियो अपनो धाम ॥ २ ॥
रहे सम्भु बिरंचि सुरपति, लोक-पाल अनेक ।
सोक सरि बूड़त करीसहिं, दई काहु न टेक[५] ॥ ३ ॥
बिलखि भूपति सदसि महँ, नरनारि कह प्रभु पाहि ।
सकल समरथ सरन काहु न, बसन दीन्हौं ताहि[६] ॥४॥
एक मुख क्योँ कहैाँ, करुना-सिन्धु के गुन गाथ[७] ।
भक्तहित धरि देह काह न, कियो कोसल-नाथ[८] ॥ ५ ॥
आप से कहिँ सौंपिये मोहिँ, जो पै अतिहिँ घिनात ।
दासतुलसी और बिधि क्यौँ, चरन परिहरि[९] जात ॥६॥

---

(१) दीन दुखी । (२) भयमान । (३) क्लेश-नाशक । (४) त्रय ताप ग्रसित । (५) शोक की नदी में डूबते हुए गजेन्द्र को किसी ने सहारा नहीँ दिया। (६) नरनारी अर्थात द्रोपदी की जब राज सभा में सारी खींची गई और वह बिलक कर त्राहि २ पुकारी और तुम्हारी शरन ली तो तुम्हारे सिवाय किस ने उस को वस्त्र दिया। (७) गाय कर। (८) अजोध्या के राजा श्रीरामचंद्र। (९) छोड़ कर ।

(१०)

अस कछु समुझि परै रघुराया ।
बिन तव कृपा दयाल दास हित, मोह न छूटै माया ॥१॥
वाक्य ज्ञान अत्यन्त निपुन, भव पार न पावै कोई ।
निसि गृह मध्य दीप की बातन, तम निवृत्त नहिँ होई ॥२
जैसे कोउ इक दीन दुखित अति, असन-हीन[1] दुख पावै ।
चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न बिपति नसावै ॥३॥
षट रस बहु प्रकार भोजन कोउ, दिन अरु रैन बखानै ।
बिन बोले सन्तोष-जनित सुख[2], खाइ सोई पै जानै ॥४॥
जब लगि नहिँ निज हृदे प्रकास, अरु बिषय आस मन माहीँ।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि, भ्रमत सपनेहुँ सुख नाहीँ ॥५

(११)

बेद न पुरान गान जानौँ न बिज्ञान ज्ञान,
ध्यान धारना समाधि साधन प्रबीनता ॥ १ ॥
नाहिँन बिराग जोग जाग भाग तुलसी के,
दया दान दूबरो हौँ, पाप ही की पीनता[3] ॥२॥
लोभ मोह काम कोह[4], दोष कोष मो सोँ कौन,
कलि[5] हूँ जो सीखि लई मेरी ये मलीनता ॥ ३ ॥
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौँ,
रावरे दयाल दीन-बंधु मेरी हीनता ॥ ४ ॥

(१२)

स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मो सोँ दगाबाज दूसरो न जग जाल है ॥ १ ॥

(१) अहार बिना। (२) जो सुख संतोष से उत्पन्न हुआ अर्थात रसीला भोजन करने का आनंद। (३) मुटाई। (४) क्रोध। (५) कलियुग।

कौन आयो करो न करौंगो करतूति भलि,
लिखी न बिरंचिहूँ[1] भलाई मेरे भाल[2] है ॥ २ ॥
रावरी सपथ[3] राम नाम ही की गति मेरे,
इहाँ झूठो झूठो सो तिलोक तिहूँ काल है ॥ ३ ॥
तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किये कृपाल,
कीजै न बिलंब बलि पानी भरी खाल है ॥ ४ ॥

(१३)

केहि कहौं बिपति अति भारी, श्रीरघुबीर धीरहितकारी॥१
मम हृदय भवन प्रभु तोरा, तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥ २ ॥
अति कठिन करहिं बरजोरा, मानहिं नहिं बिनय निहोरा३
तम मोह लोभ अहंकारा, मद क्रोध बोध[4] रिपु मारा ॥४॥
अति करहिं उपद्रव नाथा, मर्दहिं मोहिं जानि अनाथा ५
मैं एक अमित[5] बटपारा, कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥६॥
भागेहुँ नहिं नाथ उबारा, रघुनायक करहु सँभारा ॥ ७ ॥
कह तुलसिदास सुनु रामा, लूटहिं तसकर तव धामा[6] ॥८॥
चिंता यहि मोहिं अपारा, अपजस नहिं होहि तुम्हारा ॥९

(१४)

ऐसी मूढ़ता या मन की ॥ टेक ॥
परिहरि राम भक्ति सुरसरिता[7],आस करत ओसकन[8] की॥१
धूम समूह निरखि चातक ज्यौं, तृषित जानि मति घन[9]की २
नहिं तहँ सीतलता न बारि पुनि, हानि होत लोचन की ॥३

(१) ब्रह्मा। (२) माथा। (३) कसम। (४) बुद्धि, समझ। (५) अनेक। (६) मेरा हृदय जो हे प्रभु तुम्हारा मन्दिर है यह ठग लूट रहे हैं। (७) गंगा। (८) ओस की बूँद। (९) बादल।

ज्यों गच काँच बिलोकि सेन जड़, छाँह आपने तन की ॥४
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की ॥५[१]
कहँ लग कहौं कुचाल कृपा-निधि, जानत हौ गति जन की ६
तुलसिदास प्रभु हरो दुसह दुख, लाज करो निज पन की ॥७

(१५)

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्रीरघुनाथ कृपालु कृपा तें, सन्त सुभाव गहौंगो ॥ १ ॥
जथा लाभ सन्तोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो।
परहित परत निरन्तर मन, क्रम बचन नेम निबहौंगो ॥२॥
परुष[२]बचन अति दुसह[३] स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत[४] मान सम सीतल मन, परगुन नहिं दोष कहौंगो ३
परिहरि देह-जनित[५] चिन्ता दुख, सुख सम बुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि के, अबिचल भक्ति लहौंगो ॥४

॥ उपदेश ॥

(१)

जा के प्रिय न राम बैदेही।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥१॥
तज्यो पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरथ महतारी।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनिता, भये जग मंगलकारी ॥२॥
नाते नेह राम के मनियत, सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥३॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित, पूज्य प्रान तें प्यारो।
जा सों होय सनेह राम पद, एतो मतो हमारो ॥४॥

(१) जैसे शीशा की गच में अज्ञान बाज़ चिड़िया (श्येन) अपने शरीर की छाया देख कर दूसरी चिड़िया का भ्रम कर के अपने मुँह (आनन) में घाव (छति) लगने का डर छोड़ कर भूख वस टूट पड़ता है। (२) कटु, कड़ा। (३) असह, सहने योग्य नहीं। (४) मृत, वीता हुआ। (५) देह से उत्पन्न हुई।

(२)

राम राम राम जीह[१], जौ लौं तू न जपिहै ।
तौ लौं तू कहूँ जाय तिहूँ ताप तपिहै ॥ १ ॥
सुरसरि[२] तीर बिनु नीर दुख पाइहै ।
सुरतरु[३] तर तोहिं दुख दारिद सताइहै ॥ २ ॥
जागत बागत[४] सुख सपने न सोइहै ।
जनम जनम जुग जुग जग रोइहै ॥ ३ ॥
छूटिबे के जतन बिसेष बाँध्यो जायगो ।
ह्वैहै बिष भोजन जो सुधा[५] सानि खायगो ॥ ४ ॥
तुलसी बिलोक तिहूँ काल तो सों दीन को ।
राम नाम ही की गति जैसे जल मीन को ॥ ५ ॥

(३)

स्त्री रघुबीर की यह बानि[६] ।
नीच हूँ सों करत नेह सो, प्रीति मन अनुमानि ॥१॥
परम अधम निषाद पामर, कौन ता की कानि ।
लियो सो उर लाय सुत ज्यौं, प्रेम को पहिचानि ॥२॥
गीध कौन दयालु जो, बिधि रच्यो हिंसा सानि ।
जनक ज्यौं रघुनाथ ता को, दियो जल निज पानि[७] ॥३॥
प्रकृति मलिन कुजाति सबरी, सकल अवगुन खानि ।
खात ता के दिये फल, अति रुचि बखानि बखानि ॥४॥
रजनिचर अरु रिपु बिभीषन, सरन आयो जानि ।
भरत ज्यौं उठि ताहि भेंटत, देह दसा भुलानि ॥५॥
कौन सौम्य[८] सुसील बानर[९], जिनहिं सुमिरत हानि ।
किये ते सब सखा पूजे, भवन अपने आनि ॥६॥

(१) जीभ । (२) गंगा । (३) कल्प वृक्ष । (४) चलते । (५) अमृत । (६) सुभाव । (७) जैसे कोई पिता को अपने हाथ से तिलांजुली देता है । (८) रुचिर, दिल-पसंद । (९) बन्दर ।

राम सहज कृपाल कोमल, दीन-हित दिन-दानि ।
भजहि ऐसे प्रभुहिँ तुलसी, कुटिल कपट न ठानि ॥७॥

(४)

जागु जागु जीव जड़ जोहै जग जामिनी ।
देह गेह नेह जानि जैसे घन दामिनी ॥१॥[१]
सोवत सपने सहै संसृति सन्ताप रे ।
बूझ्यो मृग-वारि खायो जेवरि को साँप रे[२] ॥२॥
कहैं बेद बुध[३] तू तो बूझ मन माहिँ रे ।
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहिँ रे ॥३॥
तुलसी जागे तैं जाय ताप तिहुँ ताय रे ।
राम नाम सुचि[४] रुचि[५] सहज सुभाय रे ॥४॥

(५)

सवैया

अपराध अगाध भये जन तैं, अपने उर आनत नाहिँन जू ॥
गनिका गज गीध अजामिल के, गनि पातक पुंज सराहिन जू
लिये बारक[६] नाम सुधाम दियो, जेहि धाम महा मुनि जाहिँ न जू॥
तुलसी भजु दीनदयालहिँ रे, रघुनाथ अनाथ हिँ दाहिन[७] जू

(६)

सवैया

सो जननी सो पिता सोइ भ्रात, सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो ॥
सोई सगा सो सखा सोइ सेवक, सो गुरु सो सुर साहिब चेरो ॥
सो तुलसी प्रिय प्रान समान, कहाँ लौं बनाय कहौं बहुतेरो ॥
जो तजि देह को गेह को नेह, सनेह सौं राम को होय सबेरो ॥

---

(१) हे जीव जो घोर निद्रा में सोय रहा है जाग कर रात्रि रूप जक्त को देख जहाँ देह और घर की प्रीत बादल में बिजली के समान छिन-भंगी है। (२) नींद की दशा में तू संसार सम्बन्धी कष्ट भोगता है जो मृग-जल और रस्सी के साँप की नाईं केवल भ्रम रूप है। (३) पंडित। (४) पवित्र। (५) प्रिय लगै। (६) एक बार। (७) दाहिने = सहायक।

॥ मिश्रित ॥

ममता तू न गई मेरे मन तैं ॥ टेक ॥
पाके केस जन्म के साथी, लाज गई लोकन तैं ।
तन थाके कर कम्पन लागे, जोति गई नैनन तैं ॥ १ ॥
स्रवन बचन न सुनत काहु के, बल गये सब इंद्रिन तैं ।
टूटे दसन बचन नहिं आवत, सोभा गई मुखन तैं ॥२॥
कफ पित बात कंठ पर बैठे, सुत हिं बुलावत कर तैं ।
भाइ बन्धु सब परम पियारे, नारि निकारत घर तैं ॥३॥
जैसे ससि मंडल बिच स्याही, छुटे न कोटि जतन तैं ।
तुलसिदास बलि जाउँ चरन के, लोभ पराये धन तैं ॥४॥

दादू दयाल

[सङ्क्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ७६ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ सर्व समरथ ॥

जिनि सत छाड़े बावरे, पूरिक है पूरा ।
सिरजे की सब चिंत है,[१] देवे कैाँ सूरा ॥ टेक ॥
गर्भ बास जिन राखिया, पावक थैं न्यारा ।
जुगति जतन करि सींचिया, दे प्राण अधारा ॥ १ ॥
कुंज कहाँ धरि संचरै,[२] तहँ को रखवारा ।
हेम हरत जिन राखिया,[३] सो खसम हमारा ॥ २ ॥
जल थल जीव जिते रहैं, सो सब कौं पूरै ।
संपट सिला मैं देत है, काहे नर झूरै[४] ॥ ३ ॥

---

(१) उसे सारी रचना की चिंता है। (२) अंडे को सेवै—कहते हैं कि कुंज चिड़िया दूर रह कर सुरत से अंडे को सेती है। (३) श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को हिमालय पर्वत पर बर्फ़ में गलने से बचा लिया था। (४) मालिक दो पत्थरोँ की संधि मे बंद जीव जंतु की ख़बर लेता है तो हे नर तू क्योँ सोच करता है।

जिन यहु भार उठाइया, निरवाहै सोई ।
दादू छिन न बिसारिये, ता थैं जीवन होई ॥ ४ ॥

॥ नाम और सुमिरन ॥

(१)

नाँउ रे नाँउ रे, सकल सिरोमणि नाँउ रे,
मैं बलिहारी जाउँ रे ॥ टेक ॥
दूतर तारै पारि उतारै, नरक निवारै नाँउ रे ॥ १ ॥
तारणहारा भौजल पारा, निर्मल सारा नाँउ रे ॥ २ ॥
नूर दिखावै तेज मिलावै, जोति जगावै नाँउ रे ॥ ३ ॥
सब सुख दाता अमृत राता, दादू माता नाँउ रे ॥ ४ ॥

(२)

मनाँ भजि राम नाम लीजे ।
साध संगति सुमिरि सुमिरि, रसना रस पीजे ॥ टेक ॥
साधू जन सुमिरण करि, केते जपि जागे ।
अगम निगम अमर किये, काल कोइ न लागे ॥ १ ॥
नीच ऊँच चिंतन करि, सरणागति लीये ।
भगति मुकति अपणी गति, ऐसैं जन कीये ॥ २ ॥
केते तिरि तीर लागे, बंधन भव छूटे ।
कलिमल विष जुग जुग के, राम नाम खूटे[१] ॥ ३ ॥
भरम करम सब निवारि, जीवन जपि सोई ।
दादू दुख दूर-करण, दूजा नहिं कोई ॥ ४ ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

मन रे राम बिना तन छीजै ।
जब यहु जाइ मिलै माटी मैं, तब कहु कैसैं कीजै ॥टेक॥
पारस परसि कंचन करि लीजै, सहज सुरति सुखदाई ।
माया बेलि बिषै फल लागे, ता परि भूलि न भाई ॥१॥

(१) दूर किये, ख़तम किये ।

जब लग प्राणप्यंड है नीका, तब लग ताहि जिनि भूलै।
यहु संसार सैंबल[1] कै सुख ज्यूँ, ता पर तूँ जिनि फूलै ॥२॥
औसर येह जानि जग जीवन, समझि देखि सचु पावै।
अंग अनेक आन मति भूलै, दादू जिनि डहकावै[2] ॥३॥

(२)

सजनी रजनी घटती जाइ।
पल पल छीजै अवधि दिन आवै, अपनौं लाल मनाइ ॥टेक
अति गति नींद कहा सुख सोवै, यहु औसर चलि जाइ।
यहु तन बिछरैं बहुरि कहँ पावै, पीछैं ही पछिताइ ॥१॥
प्राणपति जागै सुंदरि क्यौं सोवै, उठि आतुर गहि पाँइ।
कोमल बचन करुणा करि आगैं, नख सिख रहु लपटाइ ॥२॥
सखी सुहाग सेज सुख पावै, प्रीतम प्रेम बढ़ाइ।
दादू भाग बड़े पिव पावै, सकल सिरोमणि राइ ॥ ३ ॥

(३)

काया रे करंक परि बोलै।
खाइ माँस अरु लगहीं[3] डोलै ॥ टेक ॥
जा तन कौं रचि अधिक सँवारा।
सो तन ले माटी मैं डारा ॥ १ ॥
जा तन देखि अधिक नर फूले।
सो तन छाड़ि चल्या रे भूले ॥ २ ॥
जा तन देखि मन मैं गरबाना।
मिलि गया माटी तजि अभिमाना ॥ ३ ॥

---

(१) सेमर एक वृत्त होता है जिस के बड़े सुंदर लाल फूल देख कर सुवा मगन होता है पर फल पर चोंच मारने से केवल रुई उसके भीतर से निकलती है।
(२) ठगावै। (३) निकट।

दादू तन की कहा बड़ाई।
निमख माहिँ माटी मिलि जाई ॥ ४ ॥

॥ विरह ॥

(१)

कौण विधि पाइये रे, मीत हमारा सोइ ॥ टेक ॥
पास पीव परदेस है रे, जब लग प्रगटै नाहिँ।
बिन देखे दुख पाइये, यहु सालै मन माहिँ ॥ १ ॥
जब लग नैन न देखिये, परगट मिलै न आइ।
एक सेज संगहि रहै, यहु दुख सह्या न जाइ ॥ २ ॥
तब लग नेड़े दूरि है, जब लग मिलै न मोहिँ।
नैन निकट नहिँ देखिये, संगि रहे क्या होइ ॥ ३ ॥
कहा करौँ कैसे मिलै रे, तलफै मेरा जीव।
दादू आतुर विरहनी, कारण अपने पीव ॥ ४ ॥

(२)

अजहुँ न निकसै प्राण कठोर ॥ टेक ॥
दरसन बिना बहुत दिन बीते, सुंदर प्रीतम मोर ॥ १ ॥
चारि पहर चारौँ जुग बीते, रैनि गँवाई भोर ॥ २ ॥
अवधि गई अजहूँ नहिँ आये, कतहुँ रहे चित चोर ॥ ३ ॥
कबहूँ नैन निरखि नहिँ देखे, मारग चितवत तोर ॥ ४ ॥
दादू ऐसे आतुर बिरहणि, जैसे चंद चकोर ॥ ५ ॥

(३)

कतहूँ रहे हो बिदेस, हरि नहिँ आये हो।
जनम सिरानौ जाइ, पिव नहिँ पाये हो ॥ टेक ॥
बिपति हमारी जाइ, हरि सौँ को कहै हो।
तुम्ह बिन नाथ अनाथ, बिरहनि क्यूँ रहै हो ॥ १ ॥

पिव के बिरह बियोग, तन की सुधि नहिँ हो ।
तलफि तलफि जिव जाइ, मिरतक ह्वै रही हो ॥ २ ॥
दुखित भई हम नारि, कब हरि आवैँ हो ।
तुम्ह बिन प्राण-अधार, जिव दुख पावै हो ॥ ३ ॥
प्रगटहु दीनदयाल, बिलम न कीजै हो ।
दादू दुखी बेहाल, दरसन दीजै हो ॥ ४ ॥

(४)

आवौ राम दया करि मेरे, बार बार बलिहारी तेरे ॥टेक॥
बिरहनि आतुर पंथ निहारै, राम राम कहि पीव पुकारै ॥१
पंथी बूझै मारग जोवै, नैन नीर जल भरि भरि रोवै ॥२॥
निस दिन तलफै रहै उदास, आतम राम तुम्हारे पास ॥३॥
बपु[१] बिसरै तन की सुधि नाहीं, दादू बिरहनि मिरतक माहीं[२] ॥४

॥ प्रेम ॥

(१)

बाला सेज हमारी रे, तूँ आव हौं वारी रे,
हौं दासी तुम्हारी रे ॥ टेक ॥
तेरा पंथ निहारूँ रे, सुन्दर सेज सँवारूँ रे,
जियरा तुम पर वारूँ रे ॥ १ ॥
तेरा अँगना पेखौं रे, तेरा मुखड़ा देखौं रे,
तब जीवन लेखौं रे ॥ २ ॥
मिलि सुखड़ा दीजै रे, यह लाहड़ा[३] लीजै रे,
तुम देखैं जीजै रे ॥ ३ ॥
तेरे प्रेम की माती रे, तेरे रगड़े राती रे,
दादू वारणै जाती रे ॥ ४ ॥

---

(१) शरीर। (२) मन की तरंगें मर गई हैँ। (३) लाभ।

(२)

अरे मेरा अमर उपावणहार रे, खालिक आसिक तेरा ॥टेक

तुम सौँ राता तुम सौँ माता, तुम सौँ लागा रंग रे खालिक ॥१

तुम सौँ खेला तुम सौँ मेला, तुम सौँ प्रेम सनेह रे खालिक ॥२

तुम सौँ लेणा तुम सौँ देणा, तुमहीं सौँ रत होइ रे खालिक ३

खालिक मेरा आसिक तेरा, दादू अनत न जाइ रे खालिक॥४

(३)

हरि रस माते मगन भये ।

सुमिरि सुमिरि भये मतवाले, जामण मरण सब भूलि गये॥टेक

निर्मल भगति प्रेम रस पीवैं, आन न दूजा भाव धरैं ।

सहजैं सदा राम रँगि राते, मुकति बैकुंठैं कहा करैं ॥१॥

गाइ गाइ रस लीन भये हैं, कछू न माँगैं संत जनाँ ।

और अनेक देहु दत आगैं, आन न भावै राम बिनाँ ॥२॥

इकटग ध्यान रहैं ल्यौ लागे, छाकि परे हरि रस पीवैं ।

दादू मगन रहैं रसिमाते, ऐसैं हरि के जन जीवैं ॥ ३ ॥

(४)

तेरे नाँउ की बलि जाऊँ, जहाँ रहौँ जिस ठाऊँ ॥ टेक॥

तेरे बैनौं की बलिहारी, तेरे नैनहुं ऊपरि वारी ।

तेरी मूरति की बलि कीती, वारि वारि हौँ दीती ॥१॥

सोभित नूर तुम्हारा, सुंदर जोति उजारा ।

मीठा प्राण-पियारा, तूँ है पीव हमारा ॥ २ ॥

तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये ।

दादू बलि बलि तेरे, आव पिया तूँ मेरे ॥ ३ ॥

॥ विनय ॥

(१)

पार नहिं पाइये रे राम बिना को निरबाहणहार ॥टेक॥
तुम बिन तारण को नहीं, दूभर[१] यहु संसार।
पैरत थाके केसवा, सूझै वार न पार ॥ १ ॥
बिषम भयानक भौजला, तुम बिन भारी होइ।
तूँ हरि तारण केसवा, दूजा नाहीं कोइ ॥ २ ॥
तुम बिन खेवट को नहीं, अतिर[२] तिरयो नहिं जाइ।
औघट भेरा[३] डूबिहै, नाहीं आन उपाइ ॥ ३ ॥
यहु घट औघट बिषम है, डूबत माँहि सरीर।
दादू काइर राम बिन, मन नहिं बाँधे धीर ॥ ४ ॥

(२)

हमारे तुमहीं हो रखपाल।
तुम बिन और नहीं कोइ मेरे, भौ दुख मेटणहार ॥टेक॥
बैरी पंच निमष नहिं न्यारे, रोकि रहे जम काल।
हा जगदीस दास दुख पावै, स्वामी करो सँभाल ॥ १ ॥
तुम बिन राम दहैं ये दुंदर, दसौं दिसा सब साल।
देखत दीन दुखी क्यौं कीजे, तुम हो दीनदयाल ॥ २ ॥
निर्भय नाँव हेत हरि दीजे, दरसन परसन लाल।
दादू दीन लीन करि लीजे, मेटहु सबै जँजाल ॥ ३ ॥

(३)

क्यौं बिसरै मेरा पीव पियारा।
जीव की जीवन प्राण हमारा ॥ टेक ॥
क्यौंकर जीवै मीन जल बिछुरैं, तुम बिन प्राण सनेही।
च्यंतामणि जब कर थैं छूटै, तब दुख पावै देही ॥ १ ॥

(१) कठिन। (२) तैरने के योग्य नहीं। (३) बेड़ा।

माता बालक दूध न देवै, सो कैसैं करि पीवै।
निर्धन का धन अनत भुलाना, सो कैस करि जीवै ॥२॥
बरखहु राम सदा सुख अमृत, नीझर निर्मल धारा।
प्रेम पियाला भरि भरि दीजे, दादू दास तुम्हारा ॥३॥

(४)

तो निवहै जन सेवग तेरा, ऐसैं दया करि साहिब मेरा ॥टेक
ज्यूँ हम तोरैं त्यूँ तूँ जोरै, हम तोरैं पै तूँ नहिं तोरै ॥१॥
हम बिसरैं त्यूँ तूँ न बिसारैं, हम बिगरैं पै तूँ न बिगारै ॥२॥
हम भूलैं तूँ आनि मिलावै, हम बिछुरैं तूँ अंगि लगावै ॥३॥
तुम्ह भावै सो हम पै नाहीं, दादू दरसन देहु गुसाईं ॥४॥

॥ साध ॥

सोई साधं सिरोमणी, गोबिंद गुण गावै।
राम भजै बिषिया तजै, आपा न जनावै ॥ टेक ॥
मिथ्या मुखि बोलै नहीं, पर-निंद्या नाहीं।
औगुण छाड़ै गुण गहै, मन हरि पद माहीं ॥ १ ॥
निर्वैरी सब आतमा, पर आतम जानै।
सुखदाई समिता गहै, आपा नहिं आनै ॥ २ ॥
आपा पर अंतर नहीं, निर्मल निज सारा।
सतवादी साचा कहै, लैलीन बिचारा ॥ ३ ॥
निर्भै भजि न्यारा रहै, काहू लिपत न होई।
दादू सब संसार मैं, ऐसा जन कोई ॥ ४ ॥

॥ घट मठ ॥

(१)

भाई रे घर ही मैं घर पाया।
सहजि समाइ रह्यौ ता माहीं, सतगुर खोज बताया ॥टेक
ता घर काज सबै फिरि आया, आपै आप लखाया।
खोलि कपाट महल के दीन्हे, थिर अस्थान दिखाया ॥१॥

भय औ भेद भरम सब भागा, साच सोई मन लाया।
प्यंड परे जहाँ जिव जावै, ता मैं सहज समाया ॥ २ ॥
निहचल सदा चलै नहिं कबहूँ, देख्या सब में सोई ।
ताही सूँ मेरा मन लागा, और न दूजा कोई ॥ ३ ॥
आदि अन्त सोई घर पाया, इब मन अनत न जाई ।
दादू एक रंगै रँग लागा, ता में रह्या समाई ॥ ४ ॥

(२)

आप आपण मैं खोजौ रे भाई ।
बस्तु अगोचर गुरू लखाई ॥ टेक ॥
ज्यूँ मही बिलोयें माखण आवै ।
त्यूँ मन मथियाँ तैं तत पावै ॥ १ ॥
काठ हुतासन[१] रह्या समाइ ।
त्यूँ मन माहिं निरंजन राइ ॥ २ ॥
ज्यूँ अवनी[२] में नीर समाना ।
त्यूँ मन माहैं साच सयाना ॥ ३ ॥
ज्यूँ दर्पन के नहिं लागै काई ।
त्यूँ मूरति माहैं निरखि लखाई ॥ ४ ॥
सहजैं मन मथियाँ ते तत पाया ।
दादू उन तौ आप लखाया ॥ ५ ॥

॥ सेवक ॥

तूँ साहिब मैं सेवग तेरा, भावै सिर दे सूली मेरा ॥टेक॥
भावै करवत सिर पर सारि, भावै लेकर गरदन मारि ॥१॥
भावै चहुँ दिसि अगिन लगाइ, भावै काल दसौ दिसि खाइ २
भावै गिरवर गगन गिराइ, भावै दरिया माहिं बहाइ ॥३॥
भावै कनक कसौटी देहु, दादू सेवग कसि कसि लेहु ॥४॥

---

(१) आग । (२) पृथ्वी ।

॥ उपदेश ॥

(१)

जियरा मेरे सुमिर सार, काम क्रोध मद तजि बिकार ॥टेक॥
तूँ जिनि भूलै मन गँवार, सिर भार न लीजै मानि हार ॥१॥
तुझि समझायो बारबार, अजहुँ न चेतै हो हुसियार ॥२॥
करि तैसैँ भव तिरिये पार, दादू इब थैँ यहि बिचार ॥३॥

(२)

डरिये रे डरिये, परमेसुर थैँ डरिये रे।
लेखा लेवै भरि भरि देवै, ता थैँ बुरा न करिये रे ॥टेक॥
साचा लीजी साचा दीजी, साचा सौदा कीजी रे।
साचा राखी झूठा नाखी, विष ना पीजी रे ॥ १ ॥
निर्मल गहिये निर्मल रहिये, निर्मल कहिये रे।
निर्मल लीजी निर्मल दीजी, अनत न बहिये रे ॥ २ ॥
साह पठाया बनिज न आया, जिनि डहकावै रे।
झूठ न भावै फेरि पठावै, कीया पावै रे ॥ ३ ॥
पंथ दुहेला जाइ अकेला, भार न लीजी रे।
दादू मेला होइ सुहेला, सो कुछ कीजी रे ॥ ४ ॥

॥ मन ॥

(१)

मन चंचल मेरो कह्यौ न मानै, दसौँ दिसा दौरावै रे।
आवत जात बार नहिँ लागै, बहुत भाँति बौरावै रे ॥टेक॥
बेर बेर बरजत या मन कौँ, किंचित सीख न मानै रे।
ऐसैँ निकसि जात या तन थैँ, जैसैँ जीव न जानै रे ॥१॥
कोटिक जतन करत या मन कौँ, निहचल निमिष न होई रे।
चंचल चपल चहूँ दिसि भरमै, कहा करै जन कोई रे ॥२॥
सदा सोच रहत घट भीतरि, मन थिर कैसैँ कीजै रे।
सहजैँ सहज साध की संगति, दादू हरि भजि लीजै रे ॥३

(२)

मेरे तुमहीं राखणहार, दूजा को नहीं ।
ये चंचल चहुँ दिसि जाइ, काल तहीं तहीं ॥ टेक ॥
मैं केते किये उपाइ, निहचल ना रहै ।
जहँ बरजैाँ तहँ जाइ, मदमाता बहै ॥ १ ॥
जहँ जाणै तहँ जाइ, तुम थैं ना डरै ।
ता स्यौं कहा बसाइ, भावै त्यूँ करै ॥ २ ॥
सकल पुकारैं साध, मैं केता कह्या ।
गुर अंकुस मानै नाहिं, निरभै ह्वै रह्या ॥ ३ ॥
तुम बिन और न कोइ, इस मन को गहै ।
तूँ राखै राखणहार, दादू तौ रहै ॥ ४ ॥

॥ जगत-मिथ्या ॥

मन रे तूँ देखै सो नाहीं, है सो अगम अगोचर माहीं ॥ टेक
निस अँधियारी कछू न सूझै, संसै सरप दिखावा ।
ऐसैं अंध जगत नहिं जानै, जीव जेवड़ी[१] खावा ॥ १ ॥
मृग-जल देखि तहाँ मन धावै, दिन दिन झूठी आसा ।
जहँ जहँ जाइ तहाँ जल नाहीं, निहचै मरै पियासा ॥२॥
भरम बिलास बहुत बिधि कीन्हा, ज्यौं सुपिनैं सुख पावै ।
जागत झूठ तहाँ कुछ नाहीं, फिरि पीछैं पछितावै ॥३॥
जब लग सूता तब लग देखै, जागत भरम बिलाना ।
दादू अंति इहाँ कुछ नाहीं, है सो सोधि सयाना ॥ ४ ॥

॥ करम धरम ॥

मूल सींचि बधै[२] ज्यूँ बेला । सो तत तरवर रहै अकेला ॥ टेक ॥
देवी देखत फिरैं ज्यूँ भूले । खाइ हलाहल बिष कैाँ फूले ।
सुख कैाँ चाहै पड़ै गल पासी[३] । देखत हीरा हाथ थैं जासी ॥१॥

(१) रस्सी । (२) बढ़ै । (३) फाँसी ।

केइ पूजा रचि ध्यान लगावैं। देवल देखैं खबरि न पावैं।
तोरैं पाती जुगति न जानी। इहि भ्रमि रहे भूलि अभिमानी॥२
तीरथ बरत न पूजै[1] आसा। बनखँडि जाहिं रहैं उदासा।
यूँ तप करि करि देह जलावैं। भरमत डोलैं जनम गँवावैं॥३
सतगुर मिलैं न संसा जाई। ये बंधन सब देइँ छुड़ाई।
तब दादू परम गति पावै। सो निज मूरति माहिं लखावै॥४

॥ कपट भक्ति ॥

हम पाया हम पाया रे भाई।
भेष बनाइ ऐसी मनि आई॥ टेक॥
भीतर का यहु भेद न जानै।
कहै सुहागनि क्यूँ मन मानै॥१॥
अंतर पीव सौं परचा नाहीं।
भई सुहागनि लोगन माहीं॥२॥
साईं सुपिनै कबहुँ न आवै।
कहिबा ऐसैं महल बुलावै॥३॥
इन बातन मोहिं अचिरज आवै।
पटम[2] कियैं पिव कैसैं पावै॥४॥
दादू सुहागनि ऐसैं कोई।
आपा मेटि राम रत होई॥५॥

॥ निंदक ॥

न्यंदक बाबा बीर हमारा। बिनहीं कौड़े बहै विचारा[3]॥टेक
कर्म कोटि के कुसमल काटै। काज सँवारै बिनहीं साटै[4]॥१
आपण डूबै और कौं तारै। ऐसा प्रीतम पार उतारै॥२॥
जुगि जुगि जीवौ न्यंदक मोरा। राम देव तुम करौ निहोरा॥३
न्यंदक बपुरा पर-उपगारी। दादू न्यंद्या करै हमारी॥४॥

(१) पूरन होय। (२) पाखंड। (३) बेचारा बिना पैसे [कौड़े] के काम करता रहता है [बहै]। (४) बदला, मुआवज़ा।

बाबा मलूकदास

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ६६]

॥ गुरुदेव ॥

हमरा सतगुरु बिरले जाने ।
सुई के नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखाने ॥ १ ॥
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता ।
की तो नामदेव औ नानक, की गोरख अवधूता ॥ २ ॥
हमरे गुरु की अदभुत लीला, ना कछु खाय न पीवै ।
ना वह सोवै ना वह जागै, ना वह मरै न जीवै ॥ ३ ॥
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वा का चेला ।
छिन मैं रूप अनेक धरत है, छिन मैं रहै अकेला ॥ ४ ॥
बिन दीपक उँजियारा देखै, एँड़ी समुँद थहावै ।
चौंटी के पग कुंजर बाँधै, जा के गुरू लखावै ॥ ५ ॥
बिन पंखन उड़ि जाय अकासे, बिन पंखन उड़ि आवै ।
सोई सिष्य गुरू का प्यारा, सूखे नाव चलावै ॥ ६ ॥
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई ।
कहै मलूक ता की बलिहारी, जिन यह जुगत बताई ॥७॥

॥ नाम ॥

नाम तुम्हारा निरमला, निरमोलक हीरा ।
तू साहिब समरत्थ, हम मल मुत्र कै कीरा ॥ १ ॥
पाप न राखै देँह मैं, जब सुमिरन करिये ।
एक अच्छर के कहत ही, भैासागर तरिये ॥ २ ॥
अधम-उधारन सब कहैं, प्रभु बिरद तुम्हारा ।
सुनि सरनागत आइया, तब पार उतारा ॥ ३ ॥

तुम सा गरुवा औ धनी, जा में बड़ई समाई ।
जरत उबारे पांडवा, ताती बाव न लाई ॥ ४ ॥
कोटिक औगुन जन करै, प्रभु मनहिं न आनै ।
कहत मलूकादास को, अपना करि जानै ॥ ५ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

तेरा मैं दीदार दिवाना ।
घड़ी घड़ी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहिब रहमाना ॥१॥
हुआ अलमस्त खबर नहिं तन की, पीया प्रेम पियाला ।
ठाढ़ होउँ तो गिरि गिरि परता, तेरे रँग मतवाला ॥२॥
खड़ा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यों घर का बंदाजादा[१] ।
नेकी की कुलाह[२] सिर दीये, गले पैरहन[३] साजा ॥ ३ ॥
तौजी और निमाज न जानूँ, ना जानूँ धरि रोजा ।
बाँग जिकिर[४] तबही से बिसरी, जब से यह दिल खोजा ॥४
कहैं मलूक अब कजा[५] न करिहौं, दिलही सों दिल लाया ।
मक्का हज्ज हिये में देखा, पूरा मुरसिद पाया ॥५॥

(२)

दर्द-दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा ।
एक अकीदा[६] लै रहे, ऐसे मन धीरा ॥ १ ॥
प्रेम पियाला पीवते, बिसरे सब साथी ।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी ॥ २ ॥
उनकी नजर न आवते, कोइ राजा रंक ।
बंधन तोड़े मोह के, फिरते निहसंक ॥ ३ ॥

(१) गुलाम बच्चा । (२) टोपी । (३) मेखली । (४) सुमिरन । (५) छूटी हुई नमाज़ पढ़ना । (६) प्रतीत ।

साहिब मिल साहिब भये, कछु रहि न तमाई[१] ।
कहँ मलूक तिस घर गये, जहँ पवन न जाई ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

अब तेरी सरन आयो राम ॥ १ ॥
जबै सुनिया साध के मुख, पतित-पावन नाम ॥ २ ॥
यही जान पुकार कीन्ही, अति सतायो काम ॥ ३ ॥
बिषय सेती भयो आजिज, कह मलूक गुलाम ॥ ४ ॥

(२)

दीन-बंधु दीना-नाथ, मेरी तन हेरिये ॥ टेक ॥
भाई नाहिँ बँधु नाहिँ, कुटुम परिवार नाहिँ ।
ऐसा कोई मित्र नाहिँ, जाके ढिँग जाइये ॥ १ ॥
सोने की सलैया नाहिँ, रूपे का रुपैया नाहिँ ।
कौड़ी पैसा गाँठि नाहिँ, जा से कछु लीजिये ॥ २ ॥
खेती नाहिँ बारी नाहिँ, बनिज ब्योपार नाहिँ ।
ऐसा कोई साहु नाहिँ, जा सोँ कछु माँगिये ॥ ३ ॥
कहत मलूकदास, छोड़ दे पराई आस ।
राम धनी पाय के, अब का की सरन जाइये ॥ ४ ॥

(३)

सवैया

दीन दयाल सुने जब तैँ तब तैँ, मन मैँ कछु ऐसी बसी है ॥१॥
तेरो कहाय के जाऊँ कहाँ, तुम्हरे हित की पट[२] खैँचि कसी है
तेरोही आसरो एक मलूक, नहीँ प्रभु सोँ कोउ दूजो जसी है३
ए हो मुरार पुकार कहैँ अब, मेरी हँसी नहिँ तेरी हँसी है४

(१) इच्छा, चाह। (२) पटका।

॥ उपदेश ॥

(१)

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतम को जारे।
ना वह रीझै धोती नेती, ना काया के पखारे ॥ १॥
दाया करै धरम मन राखै, घर में रहै उदासी।
अपना सा दुख सब का जानै, ताहि मिलै अबिनासी ॥२॥
सहै कुसबद बाद हू त्यागै, छाड़ै गर्ब गुमाना।
यही रीझ मेरे निरंकार की, कहत मलूक दिवाना ॥३॥

(२)

मन तैं इतने भरम गँवावो।
चलत बिदेस बिप्र जनि पूछो, दिन का दोष न लावो ॥१॥
संझा होय करो तुम भोजन, बिनु दीपक के बारे।
जौन कहैं असुरन की बिरिया, मूढ़ दई के मारे ॥२॥
आप भले तो सबहि भलो है, बुरा न काहू कहिये।
जा के मन कछु बसै बुराई, ता सैं भागे रहिये ॥३॥
लोक बेद का पैंड़ा औरहि, इनकी कौन चलावै।
आतम मारि पषानै पूजैं, हिरदे दया न आवै ॥४॥
रहो भरोसे एक राम के, सूरे का मत लीजै।
संकट पड़े हरज नहिं मानो, जिय का लोभ न कीजै ॥५॥
किरिया करम अचार भरम है, यही जगत का फंदा।
माया जाल मैं बाँधि अँड़ाया[१], क्या जानै नर अंधा ॥६॥
यह संसार बड़ा भौसागर, ता को देखि सकाना[२]।
सरन गये तोहिं अब क्या डर है, कहत मलूक दिवाना ॥७॥

॥ माया ॥

हम से जनि लागै तू माया।
थोरे से फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया ॥१॥

(१) गिराया। (२) डरा।

अपने में है साहिब हमरा, अजहूँ चेतु दिवानी ।
काहू जन के बस परि जैहै, भरत मरहुगी पानी ॥ २ ॥
तर ह्वै[1] चितै लाज करु जन की, डारु हाथ की फाँसी ।
जन तैं तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अबिनासी ॥३॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराई ।
जो जन उबरै राम नाम कहि, ता तें कछु न बसाई ॥४॥

नाभाजी

इन का जीवन समय सत्रहवाँ शतक था और इन का देहान्त होना सं० १७०० में इन के शिष्य प्रियादास जी ने लिखा है जिन्होंने अपने गुरू की आज्ञानुसार उन के मुख्य ग्रंथ भक्तमाल छंदवंद की टीका उनके देहान्त होने के पीछे बनाई, परंतु मिश्र-बंधु विनोद में सं० १७२० के लगभग इन का मृत्यु-काल सिद्ध किया गया है। इन की जाति के विषय में झगड़ा है, प्रायः लोग डोम बतलाते हैं। इन के शिष्य प्रियादासजी ने अपनी टीका में इन्हें हनुमान-वंशी लिखा है और माड़वारी भाषा में डोम शब्द का प्रयोजन हनुमान है। दूसरे टीकाकार ने ऐसा लिखा है कि वैश्नवों की जाति पाँति वक्तव्य नहीं है। नाभाजी अग्रदास के शिष्य और गुसाईं तुलसीदासजी के बड़े मित्र थे।

॥ शब्द ॥

नाभा नभ खेला कँवल केल रस सैला ॥ टेक ॥
दरपन नैन सैन मन माँजा, लाजा अलख अकेला ॥ १ ॥
पल पर दल दल ऊपर दामिनि, जोत में होत उजेला ॥२॥
अंडा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला ॥ ३ ॥
चढ़ गढ़ धाय जाय गढ़ ऊपर, सबद सुरत भया मेला ॥४॥
यह सब खेल अलेख अमेला, सिंध नीर नद मेला ॥ ५ ॥
जल जलधार सार पद जैसे, नहीं गुरू नहिं चेला ॥ ६ ॥
नाभा नैन अैन अंदर के, खुल गये निरख निहाला ॥७॥
संत उचिष्ट वार मन झेला, दुर्लभ दीन दुहेला ॥ ८ ॥

---

(१) नीची निगाह कर देख।

सुंदरदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १०६]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु,
सत्व रजो तम ताप निवारी ।
इंद्रिय देह मृषा[1] करि जानत,
सीतलता समता[2] उर धारी ॥
व्यापक ब्रह्म विचार अखंडित,
द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
सबद सुनाय सँदेह मिटावत,
सुंदर वा गुरु की बलिहारी ॥

(२)

गोबिंद के किये जीव, जात है रसातल को ।
गुरु उपदेसे से तो, छूटै जम फंद तें ॥
गोबिंद के किये, जीव बस परे कर्मन के ।
गुरु के निवाजे से, फिरत है स्वछंद[3] तें ॥
गोबिंद के किये, जीव बूड़त भवसागर मेँ ।
सुंदर कहत गुरु, काढ़ै दुःख द्वंद[4] तें ।
और हू कहाँ लैाँ कछू, मुख तें कहूँ बनाय ।
गुरु की तो महिमा, अधिक है गोबिंद तेँ ॥

॥ अजपा जाप ॥

स्वासोँ स्वास राति दिन सोहं सोहं होइ जाप ।
याही माला बारंबार दृढ़ कै धरतु है ॥

(१) वृथा। (२) सम-दृष्टि। (३) स्वाधीन। (४) झगड़ा।

देह परे इंद्री परे अंतःकरण परे ।
एकही अखंड जाप ताप[१] कूँ हरतु है ॥
काठ की रुद्राच्छ की रु सूतहू की माला और ।
इनके फिराये कछु कारज सरतु है ॥
सुंदर कहत ता तें आतमा चैतन्य रूप ।
आप को भजन सो तो आपही करतु है ॥

॥ शूर ॥
(१)

पाँव रोपि रहै, रण माहिं रजपूत कोऊ ।
हय गज गाजत, जुरत जहाँ दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई, सिंधु राग पुनि ।
सुनतहि कायर की, छूटि जात कल है ॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै ।
मार मार करत, परत खलभल[२] है ॥
ऐसे जुद्ध मैं अडिग्ग, सुंदर सुभट सोई ।
घर माहिं सूरमा, कहावत सकल है ॥

(२)

असन बसन[३] बहु, भूषण सकल अंग ।
संपति बिबिधि भाँति, भर्‍यो सब घर है ॥
स्रवण नगारो सुनि, छिनक मैं छाड़ि जात ।
ऐसे नहिं जानै कछु, मेरो वहाँ मर है ॥
मन मैं उछाह, रण माहिं टूक टूक होइ ।
निर्भय निसंक वा के, रंचहू न डर है ॥
सुंदर कहत कोउ, देह को ममत्व नाहिं ।
सूरमा को देखियत, सीस बिनु धर है ॥

---

(१) तपन, दुख । (२) खलबल, घबराहट । (३) भोजन और वस्त्र ।

॥ पतिव्रता ॥

(१)

जल को सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान ।
मणि बिनु अहि[१] जैसे, जीवत न लहिये ॥
स्वाँति बुंद को सनेही, प्रगट जगत माहिँ ।
एक सीप दूसरो सु, चातक हु कहिये ॥
रवि को सनेही पुनि, कमल सरोवर मैं ।
ससि को सनेही हू, चकोर जैसे रहिये ॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभु सूँ सनेह जोरि ।
और कछु देखि, काहू ओर नहिँ बहिये ॥

(२)

एक सही सब के उर अंतर, ता प्रभु कूँ कहु काहि न गावै ।
संकट माहिँ सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूँ बिसरावै ॥
चार पदारथ और जहाँ लगि, आठहु सिद्धि नवौ निधि पावै ।
सुंदर छार परौ तिन के मुख, जो हरि कूँ तजि आन कूँ ध्यावै ॥

॥ विरह उराहना[२] ॥

(१)

पीव को अँदेसो भारी, तो सूँ कहूँ सुन प्यारी ।
यारी[३] तोरि गये सो तौ, अजहूँ न आये हैँ ॥
मेरे तौ जीवन-प्राण, निसि दिन उहै ध्यान ।
मुख सूँ न कहूँ आन, नैन उर लाये हैँ ॥
जब तैँ गये बिछोहि, कल न परत मोहिँ ।
ता तैँ हूँ पूछत तोहि, किन बिरमाये[४] है ॥
सुंदर बिरहिनी को, सोच सखी बार बार ।
हम कूँ बिसार अब, कौन के कहाये हैँ ॥

(१) साँप । (२) उलहना । (३) स्नेह । (४) रिझाकर रोक लेना ।

(२)

हम कूँ तौ रैन दिन, संक मन माहिँ रहै ।
उनकी तौ बातनि सैँ, ठीकहु न पाइये ॥
कबहूँ सँदेसा सुनि, अधिक उछाह[१] होइ ।
कबहूँक रोइ रोइ, आँसुन बहाइये ॥
औरन के रस बस, होइ रहे प्यारे लाल ।
आवन की कहि कहि, हम कूँ सुनाइये ॥
सुंदर कहत ताहि, काटिये सु कौन भाँति ।
जोइ तरु आपने सु, हाथ तैँ लगाइये ॥

॥ अद्वैत ॥

(१)

ब्रह्म निरंतर व्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सब माहीँ ॥
ईसुर पावक रासि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये बरताहीँ ॥
जीव अनंत मसाल चिराग, सु दीप पतंग अनेक दिखाहीँ॥
सुंदर द्वैत उपाधि मिटै जब, ईसुर जीव जुदे कछु नाहीँ ॥

(२)

जैसे ईख रस की मिठाई, भाँति भाँति भई ।
फेरि करि गारे, ईख रसही लहतु है ॥
जैसे घृत थीज के, डरा सैाँ बँधि जात पुनि ।
फेर पिघले तैँ वह, घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमि के, पषाण हू सैाँ देखियत ।
सो पषाण फेरि पानी, होय के बहतु है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत है ब्रह्ममय ।
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥

---

(१) आनन्द ।

॥ जीवात्मा का नुरत ॥

स्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं, रसना रस घ्राण सुगंध पियारो ॥
कोमलता त्वक[1] जानत है पुनि, बोलत है मुख सबद उचारो ॥
पाणि[2] गहै पद गौन करै, मलमूत्र तजै उभयो[3] अध-द्वारो ॥
जासु प्रकास प्रकासत हैं सब, सुंदर सोई रहै घट न्यारो ॥

॥ स्वरूप विस्मरण ॥

(१)

आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण काट[4] लग्यो अति थूला ॥
ज्यूँ दृग देखत तैं रहि जात, भयो जबहीं पुतरी परि फूला ॥
छाय अज्ञान रह्यो अभिअंतर, जानि सकै नहिं आतम मूला ॥
सुंदर यूँ उपजे मन के मल, ज्ञान बिना निज रूपहि भूला ॥

(२)

इंद्रिन कूँ प्रेरि पुनि, इंद्रिन के पीछे पस्यो ।
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है ॥
जोइ जोइ देह कूँ, संकट आइ परै कछु ।
सोइ सोइ मानै आप, या तैं दुख सह्यो है ॥
भ्रमत भ्रमत कहूँ, भ्रम को न आवै अंत ।
चिरकाल बीत्यो पै, स्वरूप कूँ न लह्यो है ॥
सुंदर कहत देखौ, भ्रम की प्रबलताई ।
भूतन मैं भूत मिलि, भूत होइ रह्यो है ॥

॥ भ्रम ॥

जैसे स्वान काच के, सदन[5] मध्य देखि और ।
भूँकि भूँकि मरत, करत अभिमान जू ॥
जैसे गज फटिक, सिला सूँ लरि तोरै दंत ।
जैसे सिंह कूप माहिँ, उझक भुलान जू ॥

(१) त्वचा। (२) हाथ। (३) दोनौं। (४) मोरचा। (५) घर।

जैसे कोउ फेरी खात, फिरत सु देखै जग ।
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ॥
अपनो ही भ्रम सो तैा, दूसरो दिखाई देत ।
आप कूँ विचारे कोऊ, देखिये न आन जू ॥

॥ मन ॥

(१)

पलही मैँ मरि जाय, पलही मैँ जीवतु है,
पलही मैँ पर हाथ, देखत विकानो है ।
पलही मैँ फिरै, नवखंड हू ब्रह्मांड सब,
देख्यो अनदेख्यो सो तैा, या तें नहिं छानो[1] है ॥
जातो नहिं जानियत, आवतो न दीसै कछु,
ऐसेसी बलाइ अब, ता सूँ पर्‍यो पानो[2] है ।
सुंदर कहत या की, गति हू न लखि परै,
मन की प्रतीत कोऊ, करै सो दिवानो है ॥

(२)

घेरिये तैा घेरे हू, न आवत है मेरो पूत,
जोई परबोधिये, सो कान न धरतु है ।
नीति न अनीति देखै, सुभ न असुभ पेखै,
पल ही मैँ होती, अनहोती हू करतु है ॥
गुरु की न साधु की, न लोक वेदहू की संक,
काहू की न मानै, न तैा काहू तें डरतु है ।
सुंदर कहत ताहि, धीजिये[3] सु कैान भाँति,
मन कैा सुभाव, कछु कह्यो न परतु है ॥

(३)

तो सोँ न कपूत कोऊ, कितहूँ न देखियत ।
तो सोँ न सपूत कोऊ, देखियत और है ॥

(१) छिपा । (२) पाला, वास्ता । (३) पतियाइये ।

तूही आप भूलै महा. नीचहू तैं नीच होइ ।
तूही आप जानै तै।, सकल सिर मौर है ॥
तूही आप भ्रमै तब, जगत भ्रमत देखै ।
तेरे स्थित भये सब, ठौर ही को ठौर है ॥
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है अकासवत ।
सुंदर कहत मन, तेरी सब दौर है ॥

॥ विचार ॥

(१)

एकहि कूप तैं नीरहि सींचत, ईख अफीमहि अंब अनारा ॥
होत उहैं जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटूक[१] खटा अरु खारा॥
त्यूँही उपाधि सँजोग तैं आतम, दीसत आहि मिल्यो सविकारा ॥
काढ़ि लिये सु विवेक विचार सुँ, सुंदर सुद्ध सरूपहि न्यारा॥

(२)

देह ओर देखिये तै।, देह पंचभूतन को ।
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान है ॥
प्राण ओर देखिये तै।, प्राण सबही के एक ।
छुधा पुनि तृषा दोऊ, व्यापत समान है ॥
मन ओर देखिये तै।, मन को सुभाव एक ।
संकल्प विकल्प करै, सदाही अज्ञान है ॥
आतम बिचार किये, आतमाही दीसै एक ।
सुंदर कहत कोऊ, दूसरो न आन है ॥

॥ बचन विबेक ॥

(१)

और तै। बचन ऐसे, बोलत हैं पसु जैसे ।
तिन के तै। बोलिबे में, ढंगहूँ न एक है ॥

---

(१) कड़ुवा ।

कोऊ रात दिवस, बकतही रहत ऐसे ।
जैसी बिधि कूप मैं, बकत मानो मेक[१] है ॥
बिबिधि प्रकार करि, बोलत जगत सब ।
घट घट प्रतिमुख, बचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ता तैं, बचन बिचारि लेहु ।
बचन तो वहै जा मैं, पाइये बिबेक है ॥

(२)

एकनि के बचन सुनत, अति सुख होइ ।
फूल से झरत हैं, अधिक मनभावने ॥
एकनि के बचन तो, असि[२] मानौ बरसत ।
स्रवण के सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनि के बचन, कटुक कहु बिष रूप ।
करत मरम छेद, दुक्ख उपजावने ॥
सुंदर कहत घट घट मैं बचन भेद ।
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥

(३)

बोलिये तौ तब जब, बोलिबे की सुधि होइ ।
न तौ मुख मौन गहि, चुप होइ रहिये ॥
जोरिये तौ तब जब, जोरिबे की जानि परै ।
तुक छंद अरथ, अनूप जा मैं लहिये ॥
गाइये तौ तब जब, गाइबे को कंठ होइ ।
स्रवण के सुनतही, मन जाइ गहिये ॥
तुक-भंग छंद-भंग, अरथ मिलै न कछु ।
सुंदर कहत ऐसी, बाणी नहीं कहिये ॥

(१) मेंढक । (२) तलवार ।

॥ विश्वास ॥

(१)

धीरज धारि बिचार निरंतर, तोहि रच्यो सोइ आपुहि ऐहै॥
जेतिक भूख लगी घट प्रानहिं, तेतिक तू अनयासहि पैहै॥
जो मन मैं तृस्ना करि धावत, तौ तिहुँ लोक न खात अघैहै॥
सुंदर तू मत सोच करै कछु, चोंच दई जिन चूनहु दैहै॥

(२)

जगत मैं आइ के, बिसार्‌यो है जगतपति ।
जगत कियो है सोई, जगत भरतु है ॥
तेरे निसि दिन चिंता, औरहि परी है आइ ।
उद्यम अनेक, भाँति भाँति के करतु है ॥
इत उत जाय के, कमाई करि लाऊँ कछु ।
नेक न अज्ञानी नर, धीरज धरतु है ॥
सुंदर कहत एक, प्रभु के बिस्वास बिनु ।
बादहि कूँ बृथा सठ, पचि के मरतु है ॥

॥ ज्ञानी ॥

(१)

तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवा के समान जैसे ।
ता के मध्य सूरज की, रंचहू न जोत है ॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसी की औंधी ओर ।
ता के मध्य सूरज की, कछुक उद्योत[१] है ॥
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे, आरसी की सूधी ओर ।
ता के मध्य प्रतिबिंब, सूरज को पोत[२] है ॥
त्रिगुण अतीत[३] जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात ।
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है ॥

(१) चमक । (२) गुण । (३) तीनों गुण से रहित ।

(२)

बिधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि ।
क्रिया सो करत दीसै, यूँही नितप्रति है ॥
काहू कूँ निकट राखै, काहू कूँ तो दूर भाखै ।
काहू सूँ नेरे न दूर, ऐसी जा की मति है ॥
रागहू न द्वेष कोऊ, सोक न उछाह दोऊ ।
ऐसी बिधि रहै कहूँ, रति न बिरति[१] है ॥
बाहिर ब्योहार ठानै, मन मैं सुपन जानै ।
सुंदर ज्ञानी की कछु, अद्भुत गति है ॥

(३)

ज्ञानी कर्म करै नाना बिधि, अहंकार या तन को खोवै ॥
कर्मन को फल कछू न जोवै, अंतःकरण बासना धोवै ॥
ज्यूँ कोऊ खेती कूँ जोतत, लेकरि बीज भूमि के बोवै ॥
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँगि[२] नहाई कहा निचोवै ॥

॥ सांख्य ज्ञान ॥

(१)

छीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहे ।
नीर जैसे छाड़ि हंस, छीर कूँ गहतु है ॥
कंचन मैं और धातु, मिलि करि बनि पर्‌यो ।
सुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यूँ लहतु है ॥
पावकहूँ दारु[३] मध्य, दारुहू सोँ होइ रह्यो ।
मथि करि काढ़ै वह, दारु कूँ दहतु है ॥
तैसेही सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु ।
भिन्न भिन्न करै सो तो, सांख्यही कहतु है ॥

---

(१) न कहीँ आशक्त और न बिरक्त । (२) नंगी । (३) काठ

(२)

देह के सँजोगही तैं, सीत लगै घाम लगै ।
देह के सँजोगही तैं, छुधा तृषा पैान कूँ ॥
देह के सँजोगही तैं, कटुक[१] मधुर स्वाद ।
देह के सँजोग कहै, खाटो खारो लैान कूँ ॥
देह के सँजोग कहै, मुख तैं अनेक बात ।
देह के सँजोगही, पकरि रहै मैान कूँ ॥
सुंदर देह के सँजोग, दुख मानै सुख मानै ।
देह के सँजोग गये, दुख सुख कैान कूँ ॥

॥ निःसंशय ज्ञानी ॥

भावै देह छूटि जाहु, कासी माहिं गंगा तट ।
भावै देह छूटि जाहु, छेत्र मगहर मैं ॥
भावै देह छूटि जाहु, बिप्र के सदन[२] मध्य ।
भावै देह छूटि जाहु, स्वपच[३] के घर मैं ॥
भावै देह छूटै देस, आरज अनारज[४] मैं ।
भावै देह छूटि जाहु, बन मैं नगर मैं ॥
सुंदर ज्ञानी के कछु, संसय रहत नाहिं ।
सुरग नरक सब, भागि गयो भरमैं ॥

॥ प्रेम ज्ञानी ॥

द्वंद बिना बिचरै बसुधा पर, जा घट आतमज्ञान अपारो ॥
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो[५]॥
जोग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दसा न ढँक्यो न उघारो॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव्र को पैँडोहि न्यारो॥

(१) कड़ुवा। (२) घर। (३) डोम। (४) पवित्र चाहे अपवित्र देश में। (५) मेरा और तेरा।

॥ वाचक ज्ञान ॥

(१)

देह सूँ ममत्व पुनि, गेह सूँ ममत्व ।
सुत दारा[१] सूँ ममत्व, मन माया मैं रहतु है ॥
थिरता न लहै जैसे, कंदुक[२] चौगान[३] माहिँ ।
कर्मनि के बस मार्‍यो, धका कूँ बहतु है ॥
अंतःकरण सदा, जगत सूँ रचि रह्यो ।
मुख सूँ बनाय बात, ब्रह्म की कहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिँ, याहि तैं अचंभो आहि ।
भूमि पर पर्‍यो कोऊ, चंद कूँ गहतु है ॥

(२)

ज्ञानी की सी बात कहै, मन तौ मलिन रहै ।
बासना अनेक भरि, नेक न निवारी है ॥
जैसे कोऊ आभूषण, अधिक बनाइ राखै ।
कलई ऊपर करि, भीतर भँगारी है ॥
ज्यूँही मन आवै त्यूँही, खेलत निसंक होइ ।
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ[४] न बिचारी है ॥
सुंदर कहत वा के, अटक न कोऊ आहि ।
जोई वा सूँ मिलै जाइ, ताही कूँ बिगारी है ॥

॥ आत्म अनुभव ॥

(१)

है दिल मैं दिलदार सही, अँखियाँ उलटी करि ताहि चितैये ॥
आब[५] मैं खाक मैं बाद[६] मैं आतस[७], जान मैं सुंदर जानि जनैये ॥
नूर[८] मैं नूर है तेज मैं तेजहि, ज्योति मैं ज्योति मिलै मिलि जैये ॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहते हि लजैये ॥

(१) स्त्री । (२) गेंद । (३) गेंद का खेल । (४) जड़ चेतन की गाँठ ।
(५) पानी । (६) हवा । (७) आग । (८) प्रकाश ।

(२)

न्याय सास्त्र कहत है, प्रगट ईसुरवाद।
मीमांसाहि सास्त्र माहिँ, कर्मवाद कह्यो है॥
वैसेषिक सास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध।
पातंजलि सास्त्र माहिँ, योगवाद लह्यो है॥
सांख्य सास्त्र माहिँ पुनि, प्रकृति पुरुष वाद।
वेदांत जु सास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्यो है॥
सुंदर कहत षटसास्त्र, माहिँ भयो वाद।
जा के अनुभव ज्ञान, वाद मैँ न बह्यो है॥

(३)

काहू कूँ पूछत रंक, धन कैसे पाइयत।
कान देके सुनत, स्त्रवण सोई जानिये॥
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर।
मनन करत भयो, कब घर आनिये॥
फेरि जब कह्यो धन, गड्यो तेरे घर माहिँ।
खोदन लाग्यो है तब, निदिध्यास ठानिये॥
धन निकस्यो है जब, दारिद गयो है तब।
सुंदर साक्षातकार, नृपति बखानिये॥

॥ साध के लक्षण ॥

धूलि जैसो धन जा के, सूलि सो संसार सुख।
भूलि जैसो भाग देखै, अंत कैसो यारी है॥
पाप जैसी प्रभुताई, स्राप जैसो सनमान।
बड़ाई बिच्छुन जैसी, नागिनी सी नारी है॥
अग्नि जैसो इंद्र-लोक, बिघ्न जैसो बिधि-लोक।
कीरति कलंक जैसी, सिद्धि सी ठगारी है॥

बासना, न कोई वा की, ऐसी मति सदा जा की।
सुंदर कहत ताहि, बंदना[२] हमारी है॥

॥ सतसंग ॥

(१)

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको॥
सुद्ध हृदय मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जी को॥
गोष्टि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसो प्रबाह नदी को॥
ताहितैंजानिकरौनिसिबासर, साधुकोसंगसदाअतिनीको॥

(२)

जो कोइ जाइ मिलै उन सूँ नर, होत पबित्र लगै हरि रंगा।
दोष कलंक सबै मिटि जाइ सु, नीचहु जाइ जु होत उतंगा॥
ज्यूँ जल और मलीन महा अति, गंग मिल्योहुइ जातहि गंगा॥
सुंदर सुद्ध करै ततकाल जु, है जग माहिँ बड़ो सतसंगा॥

॥ दुष्ट ॥

(१)

अपने न दोष देखे, पर के औगुण पेखे,
दुष्ट को सुभाव, उठि निंदाही करतु है।
जैसे कोई महल, सँवारि राख्यो नीके करि,
कीरी[३] तहाँ जाय, छिद्र ढूँढत फिरतु है॥
भोरही तैं साँझ लग, साँझही तैं भोर लग,
सुंदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है।
पाँव के तरे की, नहीं सूझे आग मूरख कूँ,
और सूँ कहत तेरे, सिर पै बरतु है॥

(२)

आपनु काज सँवारन के हित, और कु काज बिगारत जाई।
आपनु कारज होउ न होउ, बुरो करि और कुँ डारत भाई॥

(१) चाह। (२) प्रणाम। (३) चींटी।

आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनौं घर देत बहाई।
सुंदर देखत ही बनि आवत, दुष्ट करै नहिं कौन बुराई॥

(३)

सर्प डसै सु नहीं कछु तालुक, बीछू लगै सु भले करि मानौ।
सिंहहु खाय तु नाहिं कछू डर, जो गज मारत तौ नहिं हानौ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ, गिरि जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ।
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जन संग भलो जिनि जानौ॥

॥ तृष्णा ॥

(१)

जो दस बीस पचास भये सत[1],
होइ हजार तु लाख मँगैगी।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य,
पृथ्वीपति[2] होन की चाह जगैगी॥
स्वर्ग पताल को राज करौं,
तृष्णा अधिकी अति आग लगैगी।
सुंदर एक सँतोष बिना सठ,
तेरी तो भूख कधी न भगैगी॥

(२)

किधौं पेट चूल्हो कीधौं, भाठि किधौं भाड़ आहि।
जोइ कछु झोंकिये, सु सब जरि जातु है॥
किधौं पेट थल किधौं, वापि[3] किधौं सागर है।
जेतो जल परै तेतो, सकल समातु है॥
किधौं पेट दैत किधौं, भूत प्रेत राच्छस है।
खाउँ खाउँ करै कछु, नेक न अघातु है॥

(१) सौ। (२) राजा। (३) बावड़ी।

सुंदर कहत प्रभु, कौन पाप लायो पेट ।
जबही जनम भयो, तबही को खातु है ॥

॥ कामिनी ॥

(१)

कामिनी को तनु मानु कहिये सघन बन,
वहाँ कोऊ जाय सो तौ भूलेही परतु है ।
कुंजर है गति कटि केहरी को भय जा में,
बेनी काली नागिनीऊ फन कूँ धरतु है ॥
कुच हैं पहार जहाँ काम चोर रहै तहाँ,
साधि के कटाच्छ बान प्रान कूँ हरतु है ।
सुंदर कहत एक और डर जा में अति,
राच्छसी बदन खाँउ खाँउ ही करतु है ॥

(२)

रसिक प्रिया रस मंजरी, और सिंगारहि जान ।
चतुराई करि बहुत बिधि, विषय बनाई आन ॥
बिषय बनाई आन, लगत बिषयिन[१] कूँ प्यारी ।
जागे मदन[२] प्रचंड, सराहै नखसिख नारी ॥
ज्यूँ रोगी मिष्टान खाइ, रोगहि बिस्तारै ।
सुंदर ये गति होइ, रसिक जो रस प्रिया धारै ॥

॥ करम धरम ॥

(१)

मेघ सहै सीत सहै, सीस पर घाम सहै ।
कठिन तपस्या करि, कंद मूल खात है ॥
जोग करै जज्ञ करै, तीरथ रु ब्रत करै ।
पुन्य नाना बिधि करै, मन में सुहात है ॥

---

(१) कामी । (२) कामदेव ।

और देवी देवता, उपासना अनेक करै ।
आँवन की हौंस कैसे, आक डोंड़े[1] जात है ॥
सुंदर कहत एक, रवि के प्रकास बिनु ।
जँगना[2] की जोति, कहा रजनी[3] बिलात है ॥

(२)

गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो, पुनि खेह लगाइ के देह सँवारी ॥
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समय जु पंचागिनि बारी ॥
भूख सहै रहि रूख तरे, पर सुंदरदास सहै दुख भारी ॥
डासन[4] छाड़ि के कासन ऊपर, आसन मारि पै आस न मारी ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

तू कछु और बिचारत है नर,
तेरो बिचार धर्योहि रहैगो ।
कोटि उपाय करै धन के हित,
भाग लिख्यो तितनोहि लहैगो ॥
भोर कि साँझ घरी पल माँझ सु,
काल अचानक आइ गहैगो ।
राम भज्यो न कियो कछु सुकिरत,
सुंदर यूँ पछताइ रहैगो ॥

(२)

मातु पिता युवती[5] सुत बांधव,
लागत है सब कूँ अति प्यारो ।
लोक कुटुंब खरो हित राखत,
होइ नहीं हम तैं कहुँ न्यारो ॥

(१) मदार का फल या डोंड़ी । (२) जुगनू । (३) रात । (४) बिछौना ।
(५) स्त्री ।

देह सनेह तहाँ लग जानहु,
बोलत है मुख सबद उचारो।
सुंदर चेतन सक्ति गई जब,
बेगि कहै घरबार निकारो॥

॥ उपदेश ॥

(१)

कार उहै अविकार[1] रहै नित, सार[2] उहै जु असारहि नाखै[3]॥
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीतिन भाखै॥
तंत[4] उहै लगि अंत न टूटत, संत उहै अपनो सत राखै॥
नाद[5] उहै सुनि बाद[6] तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै॥

(२)

सोवत सोवत सोइ गयो सठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो॥
गोवत[7] गोवत गोइ धस्यो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो॥
जोवत[8] जोवत बीति गये दिन, बोवत बोवत लै बिष बोयो॥
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहिं ढोयो॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

जा सरीर माहिं तू अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू बिचार या मैं कौन बात भली है।
मेद मज्जा मांस रग रग मैं रकत भस्यो,
पेटहू पिटारी सी मैं ठौर ठौर मली है॥
हाड़न सूँ भस्यो मुख हाड़न के नैन नाक,
हाथ पाँउ सोऊ सब हाड़न की नली है।
सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है॥

(१) विकार रहित। (२) सत्य। (३) फेंक दे। (४) तत्व—यहाँ ध्यान से अभिप्राय है। (५) शब्द। (६) झगड़ा। (७) छिपाना। (८) देखना।

(२)

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और ।
चित्त सोँ न चंदन सनेह सोँ न सेहरा ॥
हृदय सोँ न आसन सहज सोँ न सिंहासन ।
भाव सी न सेज और सून्य सोँ न गेहरा ॥
सील सोँ न स्नान अरु ध्यान सोँ न धूप और ।
ज्ञान सोँ न दीपक अज्ञान तम केहरा ॥
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और ।
आतम सोँ देव नाहिं देह सोँ न देहरा ॥

धरनी दासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११२]

॥ चितावनी ॥

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बैारे,
ऐसा खसम खुदाय कहाई रे ।
दाह[१] भयो दस मास को सुनु रे मन बैारे,
तर सिर ऊपर पाँई रे ॥ १ ॥
आँच लगी जब आग की सुनु रे मन बैारे,
आजिज ह्वै अकुलाई रे ।
कैाल[२] कियो मुख आपने सुनु रे मन बैारे,
नाहक अंक लिखाई रे ॥ २ ॥
अब की करिहैाँ बंदगी सुनु रे मन बैारे,
जो पइहैाँ मुकलाई[३] रे ।

---

(१) गर्भ की जलन। (२) प्रतिज्ञा। (३) मुकलना=भेजना, गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ़ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अब की कष्ट से छुड़ा दो तो बंदगी भक्ति करूँगा ।

जग आये जंगल परे सुनु रे मन बौरे,
भरम रहे अरुझाई रे ॥ ३ ॥
पर की पीर न जानिया सुनु रे मन बौरे,
नाहक छुरी चलाई रे।
बाँधि जँजीरे जाइहौ सुनु रे मन बौरे,
बहुरि ऐसहीं जाई रे ॥ ४ ॥
सतगुरु के उपदेस ले सुनु रे मन बौरे,
दोजख दरद मिटाई रे।
मानुष देह दुरलभ अहै सुनु रे मन बौरे,
धरनी कह समुझाई रे ॥ ५ ॥

॥ बिरह ॥

अजहुँ मिलो मेरे प्रान-पियारे।
दीनदयाल कृपाल कृपानिधि,
करहु छिमा अपराध हमारे ॥ १ ॥
कल न परत अति बिकल सकल तन,
नैन सकल जनु[1] बहत पनारे।
माँस पचो अरु रक्त रहित भे,
हाड़ दिनहुँ दिन होत उघारे ॥ २ ॥
नासा नैन स्रवन रसना रस,
इन्द्री स्वाद जुआ जनु हारे।
दिवस दसो दिसि पंथ निहारत,
राति बिहात[2] गनत जस तारे ॥ ३ ॥
जो दुख सहत कहत न बनत मुख,
अंतरगत के हौ जाननहारे।

(१) जैसे। (२) बीतती है।

घरनी जिव झिलमलित दीप ज्यों,
होत अँधार करो उँजियारे ॥ ४ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

इक पिय मेरे मन मान्यो, पतिव्रत ठानों हो ।
अवरो जे इन्द्र समान, तौ तृन करि जानों हो ॥१॥
जहँ प्रभु बैसि सिंहासन, आसन डासब हो ।
तहवाँ बेनियाँ डोलइबों, बड़ सुख पइबों हो ॥२॥
जहँ प्रभु करहिं लवासन[१], पवढ़हिं आसन हो ।
कर तें पग सुहरैबों, हृदय सुख पइबों हो ॥३॥
धरनी प्रभु चरनामृत. नित्तहिं अचइबों हो ।
सन्मुख रहिबों मैं ठाढ़ि, अंते नहिं जइबों हो ॥४॥

(२)

पिया मोर बसैं गउरगढ़[२], मैं बसौं प्राग[३] हो ।
सहजहिं लागु सनेह, उपजु अनुराग हो ॥१॥
असन बसन तन भूषन, भवन न भावै हो ।
पल पल समुझि सुरति, मन गहबरि[४] आवै हो ॥२॥
पथिक न मिलहि सजन जन, जिनहिं जनावों हो ।
बिहवल बिकल बिलखि चित, चहुँ दिसि धावों हो ॥३॥
होय अस मोहिं ले जाय, कि ताहि ले आवै हो ।
तेकरि होइबों लौंड़िया, जे रहिया बतावै हो ॥४॥
तबहिं त्रिया पत[५] जाय, दोसर जब चाहै हो ।
एक पुरुष समरथ, धन बहुत न चाहै हो ॥५॥

(१) भोजन। (२) स्वेत वा दयाल देश। (३) माया देश। (४) पछताना, घबराना। (५) हुर्मत।

धरनी गति नहिँ आनि, करहु जस जानहु हो ।
मिलहु प्रगट पट[1] खोलि, भरम जनि मानहु हो ॥६॥

(३)

हरि जन हरि के हाथ बिकाने ।
भावै कहो जग धृग जीवन है, भावै कहो बौराने ॥१॥
जाति गँवाय अजाति कहाये, साधु सँगनि ठहराने ।
मेटो दुख दारिद्र परानो[2], जूठन खाय अघाने ॥२॥
पाँच जने परबल परपंची, उलटि परे बंदिखाने ।
छुटी मजूरी भये हजूरी, साहिब के मन माने ॥३॥
निरममता निरबैर सभन तेँ, निरसंका निरबाने ।
धरनी काम राम अपने तेँ, चरन कमल लपटाने ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

प्रभुजी अब जिनि मोहिँ बिसारो ।
असरन-सरन अधम-जन-तारन, जुग जुग बिरद तिहारो॥१
जहँ जहँ जनम करम बसि पायो, तहँ अरुझे रस खारो।
पाँचहुँ के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो ॥२॥
अंध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो ।
मज्जा[3] मुत्र अग्नि मल क्रम जहँ, सहजै तहँ प्रतिपारो ॥३॥
दीजै दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न बिचारो ।
धरनी भजि[4] आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो[5]॥४॥

(२)

तुहि अवलंब हमारे हो ।
भावै पगु नाँगे करो, भावै तुरय[6] सवारे हो ॥ १ ॥

(१) घूँघट । (२) भागा । (३) मज्जा=हड्डी का गूदा या सड़ा पंछा । (४) भाग कर । (५) गाली । (६) घोड़ा ।

जनम अनेकन बादि गे, निजु नाम बिसारे हो।
अब सरनागत रावरी, जन करत पुकारे हो ॥ २ ॥
भवसागर बेरा[1] परो, जल माँझ मँझारे हो।
संतत[2] दीनदयाल हो, करि पार निकारे हो ॥ ३ ॥
धरनी मन बच कर्मना, तन मन धन वारे हो।
अपनो बिरद निबाहिये, नहिं बनत बिचारे हो ॥ ४ ॥

(३)

मो सोँ प्रभु नाहिं दुखित, तुम सोँ सुखदाई ॥ टेक ॥
दीनबन्धु बान तेरो, आइ करु सहाई।
मो सोँ नहिं दीन और, निरखो जग माँई ॥ १ ॥
पतित-पावन निगम कहत, रहत है कित गोई[3]।
मो सोँ नहिं पतित और, देखो जग टोई ॥ २ ॥
अधम के उधारन तुम, चारो जुग ओई।
मो तें अब अधम आहि, कवन धौं बड़ोई ॥ ३ ॥
धरनी मन मनिया, इक ताग में परोई।
आपन करि जानि लेहु, कर्म फंद छोई[4] ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

कबित्त–जीव की दया जेहि जीव ब्यापै नहीं,
भूखे न अहार प्यासे न पानी।
साधु से संग नहिं सबद से रंग नहिं,
बोलि जानै न मुख मधुर बानी ॥
एक जगदीस को सीस अरपै नहीं,
पाँच पच्चीस बहु बात ठानी।
राम को नाम निज धाम बिस्राम नहिं,
धरनी कह धरनि में धृग सो प्रानी[5] ॥

(१) बेड़ा, नाव। (२) निरंतर। (३) गुप्त। (४) छोड़ा कर, काट कर।
(५) पृथ्वी पर ऐसे जीव को धिक्कार है।

जगजीवन साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११७]

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे मन देहु तजि मतवारि ।
जे जे आये जगत महँ इहि, गये ते ते हारि ॥ १ ॥
नाहिं सुमिरयौ नाम काँ, सब गयो काम बिगारि ।
आपु काँ जिन बड़ा जान्यो, काल खायो मारि ॥ २ ॥
जानि आपुहिं छोट जग, रहि रहौ डोरि सँभारि ।
बैठि कै चौगान निरखहु, रूप छबि अनुहारि[१] ॥ ३ ॥
रहौ थिर सतसंग बासी, देहु सकल बिसारि ।
जगजिवन सतगुरु कृपा करि, लेहिं सबै सँवारि ॥ ४ ॥

(२)

अरे मन समुझि करु पहिचान ।
को तैं अहसि कहाँ तैं आयसि, काहे भर्म भुलान ॥१॥
सुधि सँभारु बिचार करिकै, बूझु पाछिल ज्ञान ।
नात यहि दुइ चारि दिन का, अचल नहिं अस्थान ॥२॥
लोक गढ़ यहु कोट काया, कठिन माया बान ।
लाग सब के बचे कोउ नहिं, हरयो सब को ध्यान ॥३॥
खबरदार बेखबर हो नहिं, ओट नाम निरबान ।
जगजिवन सतगुरु राखि लैहैं, चरन रहु लपटान ॥४॥

---

(१) सदृश ।

(३)

मैं तैं जग त्यागि मन, चलिये सिर नाई।
दास जानि दीन हीन, करिये दीनताई ॥ १ ॥
अहंकार गर्व तें, सब गये हैं बिलाई।
रावन के सीस काटि, राम की दुहाई ॥ २ ॥
जिन जिन गुमान कीन्ह, मारि गर्दही मिलाई।
साधि साधि बाँधि प्रीति, ताहि पर सहाई ॥ ३ ॥
परसहु गुरु सीस डारि, दुनिया बिसराई।
जगजीवन आस एक, टेक रहिये लगाई ॥ ४ ॥

(४)

मन महँ नाहिँ बूझत कोय।
नहीं बसि कछु अहै आपन, करै करता होय ॥ १ ॥
कहत मैं तैं सूझि नाहीं, भर्म भूला सोय।
पड़े धारा मोह की बसि, डारि सर्बस खोय ॥ २ ॥
करैं निंदा साध की, परि पाप बूड़े सोय।
अंत फजिहत होहिंगे, पछिताय रहिहैं रोय ॥ ३ ॥
कहैं समुझि बिचारि कै, गहि नाम दृढ़ धरु टोय।
जगजीवन ह्वै रहहु निर्भय, चरन चित्त समोय ॥ ४ ॥

(५)

कहाँ गयो मुरली को बजइया, कहाँ गयो रे ॥ टेक ॥
एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे।
जिन के भाग भये पूर्बज[१] के, ते वहि संग गह्यो रे ॥१॥
खबरि न कोई केहुँ की पाई, को धौं कहाँ गयो रे।
ऐसे करता हरता यहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे ॥२॥

---

(१) पूर्व जन्म।

रे नर बौरे तैं कितान है, केहिँ गनती माँ है रे ।
जगजीवनदास गुमान करहु नहिं, सत्त नाम गहि रहु रे ॥३

॥ विरह ॥

(१)

सखी री करौं मैं कौन उपाई ।
मैं तै। व्याकुल निसि दिन डोलौं, उनहिं दरद नहिं आई॥१
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई।
मैं तै। दासी कलपौं पिय बिनु, घर आँगन न सुहाई ॥२॥
तलफितलफिजलबिनामीनज्यौं, असदुखमोहिँअधिकाई।
निर्गुन नाह[१] बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई ॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिं कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई ।
हूँ जोगिनि मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई ॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरति निरखि कै, यहिँ का देहु मिलाई ।
सुरति सुमति करि मिलहिँ एक हूँ, गगन मँदिलचलिजाई ५
रहि यहि महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई ।
हम तुम उनके सूति रहहिँ सँग, मिटै सबै दुचिताई ॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिँ रहि ठहराई ।
रबि ससि करि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई ॥७

(२)

उनहीं सोँ कहियो मोरी जाय ॥ टेक ॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय ॥१
मैं का करौं मोर बस नाहीं, दीन्ह्यो अहै मोहिँ भटकाय ॥२
ए सखि साईं मोहिँ मिलावहु, देखि दरसमोर नैन जुड़ाय॥३
जगजीवन मन मगन होउँ मैं, रहौं चरन कमल लपटाय ४

---

(१) पति।

(३)

अरी मेरे नैन भये बैरागी ॥ टेक ॥

भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागी।
तलफि तलफि मन तन मन जारयौं, उनहिं दरद नहिं लागी १
निसु बासर मोहिं नींद हरी है, रहत एक टक लागी।
प्रीति सोँ नैनन नीर वहतु है, पीपी पी बिनु जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउँ दरस छबि माँगी।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३

(४)

सखि बाँसुरी[1] बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥

घर की गैल बिसरि गइ मोहिं तेँ, अंग न बस्तु सँभारो।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥१॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागै, सबद बान हिये मारो।
लागि लगन मैं मगन वही सोँ, लोकलाजकुलकानि बिसारो ॥२
सुरत दिखाय मोर मन लीन्ह्यो, मैं तौ चहौँ होय नहिं न्यारो।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौँ सो इहै पुकारो३

(५)

होली

कैानि बिधि खेलैाँ होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥टेक॥

जोगिन ह्वै अँग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी।
ढुँढ़त ढुँढ़त मैं थकित भई हैाँ, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एकै नाहीं, माँगन ना मैं जानी।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम, चरनन मैं लपटानी ॥२॥

---

(१) भँवरगुफा की धुनि।

॥ प्रेम ॥

(१)

ऐसे साईं की मैं बलिहरियाँ री ।

ए सखि संग रंग रस मातिउँ, देखि रहिउँ अनुहरियाँ री॥१

गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, बिनु दीपक उजियरियाँ री

झलकि चमकि तहँ रूप बिराजै, मिटी सकल अँधियरियाँ री२

काहू कहैं कहिबे की नाहीं, लागि जाहि मन मँहियाँ री ।

जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वरियाँ[1] री ॥३॥

(२)

साईं तुम सों लागो मन मोर ॥ टेक ॥

मैं तो भ्रमत फिरौं निसुबासर,

चितवौ तनिक कृपा करि कोर ॥ १ ॥

नहिं बिसरावहु नहिं तुम बिसरहु,

अब चित राखहु चरनन ठौर ॥ २ ॥

गुन ऐगुन मन आनहु नाहीं,

मैं तो आदि अंत को तोर ॥ ३ ॥

जगजीवन बिनती करि माँगै,

देहु भक्ति बर जानि कै थोर ॥ ४ ॥

(३)

गुरु बलिहारियाँ मैं जाउँ ॥ टेक ॥

डोरि लागी पोढ़ि, अब म जपहुँ तुम्हरा नाउँ ।

नाहिं इत उत जात मनुवाँ, गगन बासा गाँउ[2] ॥ १ ॥

महा निर्मल रूप छबि सत, निरखि नैन अन्हाउँ ।

नाहिं दुख सुख भर्म व्यापै, तप्र नीचे आउँ[3] ॥ २ ॥

मारि आसन बैठि थिर ह्वै, काहु नाहिं डेराउँ ।

जगजीवन निरबान भे, सत सदा संगी आउँ ॥ ३ ॥

---

(१) वारी = न्यौछावर । (२) गाँव । (३) हू ।

(४)

जोगिया भँगिया खवाइल, बौरानी फिरौं दिवानी ॥टेक॥
ऐसे जोगिया की बलि बलि जैहौं, जिन्ह मोहिं दरस दिखाइल ॥१
नहिं कर तें नहिं मुखहिं पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३
जगजीवनदास निरखि छबि देखै, जोगिया सुरति मन भाइल ॥४

॥ विनय ॥

(१)

अब की बार तारु मेरे प्यारे। बिनती करि कै कहौं पुकारे१
नहिं बलि अहै केतौ कहि हारे। तुम्हरे अब सब बनहि सवारे॥२
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई। और दूसरो नाहीं कोई ॥३॥
जो तुम चहत करत सो होई। जल थल महँ रहि जोति समोई॥४
काहुक देन हो मंत्र सिखाई। सो भजि अंतर भक्ति दृढ़ाई॥५
कहौं तो कछू कहा नहिं जाई। तुम जानत तुम देन जनाई॥६
जगन भगत केते तुम तारा। मैं अजान केतान विचारा ॥७
चरन सीस मैं नाहीं टारौं। निर्मल मुरति निर्बान निहारौं८
जगजीवन काँ अब विस्वास। राखहु सतगुरु अपने पास॥९॥

(२)

प्रभु गति जानि नाहीं जाइ ।
अहै केतिक बुद्धि केहिं महँ, कहै को गति गाइ ॥ १ ॥
सेस सम्भू थके ब्रह्मा, बिस्नु तारी लाइ ।
है अपार अगाध गति प्रभु, केहू नाहीं पाइ ॥ २ ॥
भान गन ससि तीनि चौथौ, लियौ छिनहिं बनाइ ।
जोति एकै कियौ विस्तर, जहाँ तहाँ समाइ ॥ ३ ॥
सीस दैकै कहौं चरनन, कबहुँ नहिं बिसराइ ।
जगजिवन के सत्य गुरु तुम, चरन की सरनाइ ॥ ४ ॥

(३)

अब मैं कवन गनती आउँ ।
दियो जबहिँ लखाइ महिँ कहँ, तबहिँ सुमिरौ नाउँ ॥१॥
समुझि ऐसे परत महिँ कहँ, बसे सरबस ठाउँ ।
अहो न्यारे कहूँ[1] नाहीं, रूप की बलि जाउँ ॥ २ ॥
नाम का बल दियो जेहि कहँ, राखि निर्भय गाउँ ।
काल को डर नाहिँ उहवाँ, भला पायो दाउँ ॥ ३ ॥
चरन सीसहिँ राखि निरखौ, चाखि दरस अघाउँ ।
जगजिवन गुर करहु दाया, दास तुम्हरा आउँ ॥ ४ ॥

(४)

साईं को केतालि गुन गावै ।
सूझि बूझि सब आवै तेहि काँ, जेहि काँ जौन लखावै ॥१॥
आपुहि भजत है आपु भजावत, आपु अलेख लखावै ।
जेहिँ कहँ अपनी सरनहिँ राखै, सोई भगत कहावै ॥२॥
टारत नहीं चरन तेँ कबहूँ, नहिँ कबहूँ बिसरावै ।
सूरति खैँचि ऐँचि जब राखत, जोतिहिँ जोति मिलावै॥३॥
सतगुर कियो गुरुमुखी तेहिकाँ, दूसर नाहिँ कहावै ।
जगजीवन ते मे सँग बासी, अंत न कोऊ पावै ॥ ४ ॥

(५)

प्रभुजी का बसि अहै हमारी ।
जब चाहत तब भजन करावत, चाहत देत बिसारी ॥१॥
चाहत पल छिन छूटत नाहीं, बहुत होत हितकारी ।
चाहत डारि[2] सूखि पल डारत, डारि देत संसारी ॥ २ ॥
कहँ लहि बिनय सुनावौं तुम तेँ, मैं तौ अहौं अनारी ।
जगजिवन दास पास रहै चरनन, कबहूँ करहु न न्यारी॥३॥

(१) कहीं । (२) डाला ।

(६)

तुम सोँ यह मन लागा मोरा ॥ टेक ॥
करौँ अरदास[१] इतनी सुनि लीजै, तक्यो तनक मोहिँ कोरा ॥१
कहँ लगि ऐगुन कहौँ आपना, कामी कुटिल लोभी औ चोरा २
तब के अब के बहु गुनाह भे, नाहिँ अंत कछु छोरा ॥३
साईँ अब गुनाह सब मेटहु, चितै आपनी ओरा ॥ ४ ॥
जगजीवन कै इतनी बिनती, टूटै प्रीति न डोरा ॥ ५ ॥

(७)

बालक बुद्धि हीन मति मेरी। भरमत फिरौँ नाहिँ दृढ़ डोरी१
सूरति राखौ चरनन मोरी। लागि रहै कबहूँ नहिँ तोरी[२] २
निरखत रहौँ जाउँ बलिहारी। दास जानिकै नाहिँ बिसारी ॥३
तुमहिँ सिखाय पढ़ायो ज्ञाना। तबमैँ धर्यौं चरन कै ध्याना॥४
साईं समरथ तुम हो मोरे। बिनती करौँ ठाढ़ कर जोरे ॥५
अब दयाल ह्वै दाया कीजै। अपने जन कहँ दरसन दीजै ॥६
नाम तुम्हार मोहिँ है प्यारा। सोई भजे घट भा उजियारा॥७
जगजीवन चरनन दियो माथ। साहिब समरथ करहु सनाथ॥८

(८)

तेरा नाम सुमिरि ना जाय।
नहीं बस कछु मोर आहै, करहुँ कौन उपाय ॥ १ ॥
जबहिँ चाहत हितू करि कै, लेत चरनन लाय।
बिसरि जब मन जात आहै, देत सब बिसराय ॥ २ ॥
अजब ख्याल अपार लीला, अंत काहु न पाय।
जीव जंत पतंग जग महँ, काहु ना बिलगाय ॥ ३ ॥
करौँ बिनती जोरि दोउ कर, कहत अहौँ सुनाय।
जगजिवन गुरु चरन सरनं, ह्वै तुम्हार कहाय ॥ ४ ॥

(१) अर्ज़दाश्त, प्रार्थना। (२) तोड़ी।

(६)

साईं मोहिं भरोस तुम्हारा।
मोरे बस नहिं अहै एकौ, तुमहिं करो निस्तारा ॥ १ ॥
मैं अज्ञान बुद्धि है नाहीं, का करि सकौं विचारा।
जब तुम लेत पढ़ाय सिखावत, तब मैं प्रगट पुकारा ॥२॥
बहुतन भवसागर महँ बूड़त, तेहिं उबारि कै तारा।
बहुतन काँ जब कष्ट भयो है, तिन कै कष्ट निवारा ॥३॥
अब तौ चरन कि सरनहिं आयौं, गह्यौं मैं पच्छ तुम्हारा।
जगजीवन के साईं समरथ, मोहिं बल अहै तुम्हारा ॥४॥

(१०)

साहिब अजब क़ुदरत तोर।
देखि गति कहि जात नाहीं, केतिक मति है मोर ॥१॥
नचत सब कोउ काछि कछनी, भ्रमत फिर बिन डोर।
होत औगुन आप तेँ, सब देत साहिब खोर[१] ॥ २ ॥
कौल करि जग पठै दीन्ह्यो, तैान डार्‌यो तोर[२]।
करत कपट संत तेतौं, कहँ मोरी मोर ॥ ३ ॥
ऐसी जग की रीति आहै, कहा कहिये टेर।
जगजिवनदास चरन गुरू के, सुरत करिये पोढ़ ॥ ४ ॥

(११)

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिं सनाथ।
दास करिकै जानी ॥ १ ॥
बूड़ा सब जग्त सार, सूझै नहिं वार पार।
देखि नैनन बूझिय हित आनी ॥ २ ॥
सुमति मोहिं देउ सिखाय, आनि मैं न रहि लुभाय।
बुद्धिहीन भजनहीन, सुद्धि नाहिं आनी ॥ ३ ॥

---

(१) दोष। (२) तोड़।

सहस फन तें सेस गावै, संकर तेहिं ध्यान लावै ।
ब्रह्मा वेद परगट कहै बानी ॥ ४ ॥
कहौं का कहि जात नाहिं, जोती वा सर्ब माहिं ।
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ॥ ५ ॥

(१२)

आरत अरज लेहु सुनि मोरी ।
चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी ॥ १ ॥
कबहुँ निकट तें टारहु नाहीं ।
राखहु मोहिं चरन की छाहीं ॥ २ ॥
दीजै केतिक बास यहँ कीजै ।
अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै ॥ ३ ॥
दासन दास हूँ कहौं पुकारी ।
गुन मोहिं नहिं तुम लेहु सँवारी ॥ ४ ॥
जगजीवन काँ आस तुम्हारी ।
तुम्हरी छबि मूरति पर वारी ॥ ५ ॥

(१३)

केतिक बूझि, का आरति करऊँ । जैसे राखिहहिं तैसे रहऊँ ॥१
नाहीं कछु ब[illegible] आहै मेरी । हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२
जस चाहौ तस नाच नचावहु । ज्ञान बास करि ध्यान लगावहु ॥३
तुमहिं जपत तुमहीं बिसरावत । तुमहिं चिताइ सरन लै आवत ॥४
दूसर कवन एक हौ सोई । जेहिं काँ चाहौ भक्त सो होई ॥५
जगजीवन करि बिनय सुनावै । साहिब समरथ नहिँ बिसरावै ॥६

(१४)
होली

यहि जग होरी, अरी मोहिं तें खेलि न जाई ।
साइँ मोहिं बिसराय दियो है, तब तें परयौं भुलाई ॥१॥

सुख परि सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिँ आई ।
अनहित हित करि जानि बिषै महँ, रह्यो ताहि लपटाई ॥२
यहि साँचे महँ पाँचौ नाचैँ, अपनि अपनि प्रभुताई ।
मैँ का करौँ सोर बस नाहीँ, राखत हैँ अरुझाई ॥ ३ ॥
गगन मँदिल चलि थिर ह्वै रहिये, तकि छबि छकि निरधाई।
जगजीवन सखि साईँ समरथ, लेहैँ सबै बनाई ॥ ४ ॥

॥ साध ॥

(१)

जब मन मगन भा मस्तान ।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिँ आवै आन ॥ १ ॥
डोरि लागी पोढ़ि गुरु तैँ, जग्त तैँ बिलगान ।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥ २ ॥
अहैँ ऐसे जग्त माँ कोइ, कहत आहैँ ज्ञान ।
ऐसे निरमल ह्वै रहे हैँ, जैसे निरमल भान ॥ ३ ॥
बड़ा बल है ताहि के रे, छमा है असमान ।
जगजिवन गुरु चरन परि कै, निर्गुन धरि ध्यान ॥ ४ ॥

(२)

गऊ निकसि बन जाहीँ । बाछा उन घर ही माहीँ ॥ १ ॥
तन चरहिँ चित्त सुत पासा। यहि जुक्ति साध जग बासा॥२
साध तैँ बड़ा न कोई । कहि राम सुनावत सोई ॥ ३ ॥
राम कही हम साधा । रस एक मता औराधा ॥ ४ ॥
हम साध साध हम माहीँ। कोउ दूसर जानै नाहीँ ॥५॥
जिन दूसर करि जाना । तेहिँ होइहि नरक निदाना ॥६॥
जगजिवन चरन चित लावै। सो कहि के राम समुझावै ॥७

॥ भेद ॥

(१)

जा के लगी अनहद तान हो, निरवान निरगुन नाम को॥१॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर ररंकार की ॥ २ ॥
जा के लगी अजपा गगन झलकै, जोति देख निसान की॥३
मद्ध मुरली मधुर बाजै, बाँए किंगरी सारँगी ॥ ४ ॥
दहिने जो घंटा संख बाजै, गैब धुन झनकार की ॥५॥
अकह की यह कथा न्यारी, सीखा नाहीं आन है ॥ ६ ॥
जगजिवन प्रानहि सोधि के, मिलि रहे सतनाम है ॥ ७ ॥

(२)

गगरिया मोरी चित सोँ उतरि न जाय ॥ टेक ॥
इक कर करवा[1] एक कर उबहनि[2], बतियाँ कहैँ अरथाय॥१
सास ननद घर दारुन आहै, ता सोँ जियरा डेराय ॥२॥
जो चित छूटै गागर फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहैँ गोहराय ॥४॥

॥ ज्ञान ॥

आनंद के सिंध मैँ आन बसे,
तिन को न रह्यो तन को तपनो ।
जब आपु मैँ आपु समाय गये,
तब आपु मैँ आपु लह्यो अपनो ॥
जब आपु मैँ आपु लह्यो अपनो,
तब अपनो ही जाप रह्यो जपनो ।
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो,
जगजीवन होय रह्यों सपनो ॥

---

(१) डाल । (२) रस्सी ।

॥ कर्म भर्म ॥

कोउ बिन भजन तरिह नाहिँ ।
करैँ जाय अचार केतो, प्रात निस्त अन्हाहिँ ॥ १ ॥
दान पुन्यं करि तपस्या, बर्त बहुत रहाहिँ ।
त्यागि बस्ती बैठि बन महँ, कंदमूरहिँ खाहिँ ॥ २ ॥
पाठ करि पढ़ि बहुत बिद्या, रैन दिनहिँ बकाहिँ ।
गाय बहुत बजाय बाजा, मनहिँ समुझत नाहिँ ॥ ३ ॥
करहिँ स्वासा बंद कष्टित, भाँड़ की गति आहिँ ।
साधि पवन चढ़ाय गगनहिँ, कमल उलटै नाहिँ ॥ ४ ॥
साध नहिँ केहु कीन्ह ऐसे, सीखि बहुत कहाहिँ ।
प्रीति रस मन नाहिँ उपजत, परे ते भव माहिँ ॥ ५ ॥
जस सँजोग बिजोग तैसे, तत अच्छर दुइ आहिँ ।
रटत अंतर भेँट गुरु तेँ, मंत्र अजपा माहिँ ॥ ६ ॥
कहैँ प्रगट पुकारि जेहि के, प्रीति अंतर आहिँ ।
जगजिवन दास रीति अस, तब चरन महँ मिलि जाहिँ॥७

॥ उपदेश ॥

(१)

अरे मन चरन तेँ रहु लागि ।
जोरि दुइ कर सीस दैकै, भक्ति बर ले माँगि ॥ १ ॥
और आसा झूँठि आहै, गरम जैसे आगि ।
परहिँगे सो जरहिँगे पै, देहु सर्ब तियागि ॥ २ ॥
समौ फिरि एहु पाइहै नहिँ, सोउ नहिँ गहि जागि ।
चेतु पाछिल सुद्धि करिकै, दरस रस रहु पागि ॥ ३ ॥
कठिन माया है अपरबल, संग सब के लागि ।
सूल तेँ कोइ बचे बिरले, गगन बैठे भागि ॥ ४ ॥

भर्म नहिँ तहँ भयो निर्भय, सत्त रत बैरागि ।
जगजीवन निरबान भे, गुरु दया जागे भागि ॥ ५ ॥

(२)

मन तन खाक करि कै जानु ।
नीच तेँ हूँ नीच, तेहि तेँ नीच आपुहि मानु ॥ १ ॥
त्यागु मैँ तैँ दीन ह्वै रहु, तजहु गर्ब गुमान ।
देतु हैाँ उपदेस याहै, निरखु सो निरबान ॥ २ ॥
कर्म धागा लाय बाँधा, हिंदु मूसलमान ।
खैँचि लीन्ह्यो तोरि धागा, बिरल कोइ बिलगान ॥३॥
खाक है सब खाक होइहि, समुझि आपन ज्ञान ।
सबद सत कहि प्रगट भाखैा, रहहि नाम निदान ॥ ४ ॥
काल को डर नाहिँ तिन्ह काँ, चैाथ[१] रहि चैागान ।
जगजीवन दास सतगुरु के, चरन रहि लपटान ॥ ५ ॥

(३)

मन मैँ जेहिँ लागी जस भाई ।
सो जानै तैसे अपने मन, का सैाँ कहै गोहराई ॥ १ ॥
साँची प्रीति की रीति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई ।
झूँठे कहुँ सिखि लेत अहहिँ पढ़ि, जहँ तहँ झगरा लाई ॥२
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहिँ दुचिताई ।
ते मस्ताने तिनहीँ जाने, तिनहिँ को देइ जनाई ॥ ३ ॥
राखत सीस चरन तेँ लागा, देखत सीस उठाई ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाई ॥ ४ ॥

(४)

जो कोइ घरहिँ बैठा रहै ।
पाँच संगत करि पचीसैा, सबद अनहद लहै ॥ १ ॥

(१) चैाथे लोक मैँ ।

दीन सीतल लीन मारग, सहज बाहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहिँ, नाम पावक दहै ॥ २ ॥
मारि मैँ तैँ लाय डोरी, पवन थाम्हे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥ ३ ॥
राति दिन छिन नाहिँ छूटै, भक्त सोई अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सबद की गति कहै ॥ ४ ॥

(५)

सत्त नाम बिना कहै, कैसे निस्तरिहै ॥ टेक ॥
कठिन अहै माया जार, जा को नहिँ वार पार,
कहै काह करिहै ॥ १ ॥
हो सचेत चैाँकि जागु, ताहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहै ॥ २ ॥
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिँ रोइ हाँसि,
कैान धीर धरिहै ॥ ३ ॥
लागहि नहिँ कोइ गोहारि, लेइहि नहिँ कोइ उबारि,
मनहिँ रोइ रहिहै ॥ ४ ॥
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिँ कहा कहिहै ॥ ५ ॥
काहुक नहिँ कोऊ जगत, मनहिँ अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहै ॥६॥
सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहै ॥ ७ ॥
जगजीवनदास रहै, बैठे सतगुरु के पास,
चरन सीस धरि रहिहै ॥ ८ ॥

यारी साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२०]

॥ गुरुदेव ॥

झूलना

गुरु के चरन की रज लै के, दोउ नैन के बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजियार हुआ, निरंकार पिया को देखिलिया॥
कोटि सुरज तहँ छिपे घने, तीनि लोक धनी धन पाइ पिया।
सतगुरु ने जो करी किरपा, मरि के यारी जुग जुग जीया॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

झिलमिल झिलमिल बरखै नूरा,
नूर जहूर सदा भरपूरा ॥ १ ॥
रुनझुन रुनझुन अनहद बाजै,
भँवर गुँजार गगन चढ़ि गाजै ॥ २ ॥
रिमझिम रिमझिम बरखै मोती,
भयो प्रकास निरंतर जोती ॥ ३ ॥
निरमल निरमल निरमल नामा,
कह यारी तहँ लियो बिस्रामा ॥ ४ ॥

(२)

सुब्ह के मुकाम में बेचून[1] की निसानी है ॥ १ ॥
जिकिर[2] रूह सोई अनहद बानी है ॥ २ ॥
अगम को गम्म नाहीं झलक पिसानी[3] है ॥ ३ ॥
कहै यारी आपा चीन्हे सोई ब्रह्मज्ञानी है ॥ ४ ॥

(१) मालिक। (२) सुमिरन। (३) पेशानी माथा।

॥ प्रेम ॥

(१)

बिरहिनी मंदिर दियना बार ॥ टेक ॥
बिन बाती बिन तेल जुगति सोँ, बिन दीपक उँजियार ॥१
प्रान पिया मेरे गृह आयो, रचि पचि सेज सँवार ॥ २ ॥
सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निर्गुन निरकार ॥३॥
गावहु री मिलि आनँद मंगल, यारी मिलि कै यार ॥४॥

(२)

होली

हैाँ तो खेलैाँ पिया सँग होरी ॥ १ ॥
दरस परस पतिबरता पिय की, छबि निरखत भइ बैारी ॥२
सोरह कला सँपूरन देखैाँ, रबि ससि भे इक ठैारी ॥ ३ ॥
जब तेँ दृष्टि परो अबिनासी, लागो रूप ठगैारी ॥४॥
रसना रटत रहत निस बासर, नैन लगो यहि ठैारी ॥५॥
कह यारी भक्ती करू हरि की, कोई कहै सो कहैा री ॥६॥

॥ भेद ॥

(१)

भूलना

दोउ मूँदि के नैन अंदर देखा, नहिँ चाँद सुरज दिन राति है रे।
रोसन समा बिनु तेल बाती, उस जोति सोँ सबै सिफाति[1] है रे॥
गोता मारि देखो आदम, कोउ अवर नाहिँ सँगसाथि है रे।
यारी कहै तहकीक किया, तू मलकुलमैात[2] की जाति है रे ॥

(२)

भूलना

जमीँ बरखै असमान भींजै, बिन बातिहिँ तेल जलाइये जी।
जहाँ नूर तजल्ली[3] बीच है रे, बेरंगी रंग दिखाइये जी ॥

(१) गुन। (२) जमराज। (३) प्रकाश।

फूल विना जदि फल होवै, नहि हीर[1] की लज्जत पाइये जी।
यारी कहै यहि कौन बूझै, यह का सौँ बात जनाइये जी॥

॥ उपदेश ॥

(१)

कवित्त

गहने के गढ़े तेँ कहाँ सोनो भी जातु है ।
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोन है ॥
भीतर भी सोनो और बाहर भी सोन दीसै ।
सोनो नो अचल अंत गहनो को मीच[2] है ॥
सोन को तो जानि लीजै गहनो बरबाद कीजै ।
यारी एक सोनो ता मैँ ऊँच कवन नीच है॥

(२)

झूलना

बिन बंदगी इस आलम मेँ, खाना तुझे हराम है रे।
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमत मेँ आठो जाम है रे ॥
यारी मौला बिसारि के, तू क्या लागै बेकाम है रे ।
कुछ जीते बंदगी करले, आखिर को गोर[3] मुकाम है रे॥

॥ मिश्रित ॥

कवित्त

आँधरे को हाथी हरि, हाथ जा को जैसो आयो ।
बूझो जिन जैसो, तिन तैसोई बतायो है ॥ १ ॥
टकाटोरी दिन रैन, हिये हू के फूटे नैन ।
आँधरे को आरसी मेँ, कहा दरसायो है ॥ २ ॥
मूल की खबरि नाहिँ, जा सोँ यह भयो मुलुक ।
वा को बिसारि भौँदू, डारै[4] अरुझायो है ॥ ३ ॥
आपनो सरूप रूप, आपु माहिँ देखै नाहिँ ।
कहै यारी आँधरे ने, हाथी कैसो पायो है ॥४॥

---

(१) तत्व, गूदा। (२) मृत्यु। (३) क़बर। (४) शाखा मेँ।

दरिया साहिब (बिहार वाले)

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२१]

॥ अनहद ॥

होरी सद संत समाज संतन गाइया ॥ टेक ॥
बाजा उमँग झाल झनकारा, अनहद धुन घहराइया ।
झरि झरि परत सुरंग रंग तहँ, कौतुक नभ मेँ छाइया ॥१॥
राग रबाब अघोर तान तहँ, झिनझिन जंतर लाइया ।
छवो राग छत्तीस रागिनी, गंधर्ब सुर सब गाइया ॥२॥
पाँच पचीस भवन मेँ नाचहिँ, भर्म अबीर उड़ाइया ।
कह दरिया चित चन्दन चर्चित, सुन्दर सुभग सुहाइया ॥३॥

॥ बिरह ॥

अमर पति प्रीतम काहे न आवो ।
तुम सत बर्ग हौ [illegible] सुहावन, किमि नहिँ उर गहि लावोँ ॥१
बरषा बिबिधि प्रकार पवन अति, गरजि घुमरि घहरावो ।
बुन्द अखंडित मंडित महि पर, छटा चमकि चहुँ जावो ॥२
झींगुर झनकि झनकि झनकारहि, बान बिरह उर लावो ।
दादुर मोर सोर सघन बन, पिय बिनु कछु न सुहावो ॥३॥
सरिता उमडि घुमडि जल छावो, लघु दिर्घ सब बढ़ियावो ।
थाके पंथ पथिक नहिँ आवत, नैनन मेँ झरि लावोँ ॥४॥
केहि पूछौँ पछितावत दिल मेँ, जो पर होइ उड़ि धावोँ ।
जो पिय मिलैँ तो मिलौँ प्रेम भरि, अमि भाजन भरि लावोँ[१] ॥५॥
है बिस्वास आस दिल मेरे, फिरि दृग दर्सन पावोँ ।
कह दरिया धन भाग सुहागिनि, चरन कँवल लपटावो ॥६॥

---

(१) अमृत से बरतन को भर लूँ ।

॥ प्रेम ॥

तुम मेरो साईं मैं तेरो दास, चरन कँवल चित मेरो बास ॥१॥
पल पल सुमिरौं नाम सुबास, जीवन जग मैं देखो दास ॥२॥
जल मैं कुमुदिनि चन्द अकास, छाड़ रहा छबि पुहुप बिलास ॥३
उनमुनि गगन भया परगास, कह दरिया मेटा जम त्रास॥४

॥ विनय ॥

(१)

अब के बार बकस मोरे साहिब ।
तुम लायक सब जोग हे ॥ १ ॥
गुनह[1] बकसिहौ सब भ्रम नसिहौ ।
रखिहौ आपन पास हे ॥ २ ॥
अछै बिरिछि तरि लै बैठैहौ ।
तहवाँ धूप न छाँह हे ॥ ३ ॥
चाँद न सुरज दिवस नहिं तहवाँ ।
नहिं निसु होत बिहान हे ॥ ४ ॥
अमृत फल मुख चाखन दैहौ ।
सेज सुगन्धि सुहाय हे ॥ ५ ॥
जुग जुग अचल अमर पद दैहौ ।
इतनी अरज हमार हे ॥ ६ ॥
भौसागर दुख दारुन मिटि है ।
छुटि जैहै कुल परिवार हे ॥ ७ ॥
कह दरिया यह मंगल मूला ।
अनूप फुलै जहाँ फूल हे ॥ ८ ॥

(२)

मैं जानहुँ तुम दीन-दयाल ।
तुम सुमिरे नहिं तपत काल ॥ १ ॥

---

(१) पाप, दोष ।

ज्यौं जननी प्रतिपाले सूत[1] ।
गर्भ बास जिन दियो अकूत ॥ २ ॥
जठर अगिनि तेँ लियो है काढ़ि ।
ऐसो वा की ठवर गाढ़ि ॥ ३ ॥
गाढ़े जो जन सुमिरन कीन्ह ।
परघट जग मेँ तेहि गति दीन्ह ॥ ४ ॥
गरबी मारेउ गैब बान ।
संत को राखेउ जीव जान ॥ ५ ॥
जल मेँ कुमुदिनि इन्दु[2] अकास ।
प्रेम सदा गुरु चरन पास ॥ ६ ॥
जैसे पपिहा जल से नेह ।
बुन्द एक बिस्वास तेह ॥ ७ ॥
स्वर्ग पताल मृत मंडल तीनि ।
तुम ऐसो साहिब मैँ अधीन ॥ ८ ॥
जानि आयो तुम चरन पास ।
निज मुख बोलेउ कहेउ दास ॥ ९ ॥
सत पुरुष बचन नहिँ होहिँ आन ।
बलु पुरब से पच्छिम उगहि भान ॥ १० ॥
कह दरिया तुम हमहिँ एक ।
ज्यौँ हारिल की लकड़ी टेक[3] ॥ ११ ॥

॥ भेद ॥

मानु सबद जो करु बिबेक ।
अगम पुरुष जहँ रूप न रेख ॥ १ ॥

(१) पुत्र । (२) चंद्रमा । (३) हारिल चिड़िया चंगुल में लकड़ी पकड़े बिना ज़मीन पर नहीं उतरती ।

अठदल कँवल सुरति लौ लाय ।
अजपा जपि के मन समुझाय ॥ २ ॥
भँवरगुफा मेँ उलटि जाय ।
जगमग जोति रहे छबि छाय ॥ ३ ॥
बंक नाल गहि खैँचे सूत ।
चमके बिजुली मोती बहुत ॥ ४ ॥
सेत घटा चहुँ ओर घनघोर ।
अजरा जहवाँ होय अँजोर ॥ ५ ॥
असिय कँवल निज करो बिचार ।
चुवत बुन्द जहँ अमृत धार ॥ ६ ॥
छव चक्र खोजि करो निवास ।
मूल चक्र जहँ जिव को बास ॥ ७ ॥
काया खोजि जोगी भुलान ।
काया बाहर पद निरबान ॥ ८ ॥
सतगुर सबद जो करै खोज ।
कहैँ दरिया तब पूरन जोग ॥ ९ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पेड़ को पकरु तब डारि पालो मिलै ।
डारि गहि पकर नहिँ पेड़ यार[१] ॥
देख दिब दृष्टि असमान मेँ चन्द्र है ।
चन्द्र की जोति अनगिनित तारा ॥ १ ॥
आदि औ अंत सब मध्य है मूल मेँ ।
मूल मेँ फूल घौं केति डारा ॥

(१) हे यार पेड़ पकड़ने से डाल पत्ती भी मिल जायगी पर डाल के पकड़ने से पेड़ नहीँ हाथ आवैगा ।

नाम निर्गुन निर्लेप निर्मल अरै ।
एक से अनँत सब जगत सारा ॥ २ ॥
पढ़ि बेद कितेब बिस्तार बक्ता कथै ।
हारि बेचून वह नूर न्यारा ॥
निर्पेच निर्बान निःकर्म निःभर्म वह ।
एक सर्वज्ञ सत नाम प्यारा ॥ ३ ॥
तजु मान मनी करु काम को काबु[1] यह ।
खोजु सतगुरू भरपूर सूरा ॥
असमान कै बुन्द गरकाब[2] हूआ ।
दरियाव की लहरि कहि बहुरि मूरा[3] ॥ ४ ॥

(२)

भीतर मैलि चहल[4] कै लागी, ऊपर तन का धोवै है ॥१॥
अविगति मुरति महल के भीतर, वा का पंथ न जोवै है ॥२॥
जुगुति बिना कोइ भेद न पावै, साधु सँगति का गोवै है ॥३
कह दरिया कुटने वे गीदी[5], सीस पटकि का रोवै है ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

सत सुकृत दूनौं खंभा हो, सुखमनि लागलि डोरि ।
अरध उरध दूनौं मचवा[6] हो, इँगला पिंगला झकझोरि ॥१
कौन सखी सुख बिलसै हो, कौन सखी दुख साथ ।
कौन सखिया सुहागिनि हो, कौन कमल गहि हाथ ॥२॥
सत सनेह सुख बिलसै हो, कपट करम दुख साथ ।
पिया-मुख सखिया सुहागिनि हो, राधा कमल गहि हाथ ॥३

(१) बस में। (२) पानी में डूब गया। (३) मुड़ा। (४) कीचड़। (५) भोंदू, मूढ़। (६) मचिया या खटोला जिस पर बैठ कर हिंडोला झूलते हैं।

कौन झुलावै कौन झूलहिं हो, कौन बैठलि खाट ।
कौन पुरुष नहिं झूलहिं हो, कौन रोकै बाट ॥ ४ ॥
मन रे झुलावै जिव झूलहिं हो, सक्ति बैठलि खाट ।
सत्त पुरुष नहिं झूलहिं हो, कुमति रोकै बाट ॥ ५ ॥
सुर नर मुनि सब झूलहिं हो, झूलहिं तीनि देव ।
गनपति फनपति[1] झूलहिं हो, जोगि जती सुकदेव ॥६॥
जीव जंतु सब झूलहिं हो, झूलहिं आदि गनेस ।
कल्प कोटि लै झूलहिं हो, कोइ कहै न सँदेस ॥ ७ ॥
सत्त सब्द जिन पावल हो, भयो निर्मल दास ।
कहै दरिया दर देखिय हो, जाय पुरुष के पास ॥ ८ ॥

दरिया साहिब (मारवाड़ वाले)

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२६]

॥ नाम ॥

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै ॥ टेक ॥
साध संग औ राम भजन बिन, काल निरंतर लूटै ॥ १ ॥
मल सेती जो मल को धोवै, सो मल कैसे छूटै ॥ २ ॥
प्रेम का साबुन नाम का पानी, दुइ मिलि ताँता टूटै ॥ ३ ॥
भेद अभेद भरम का भाँडा, चौड़े परि परि फूटै ॥ ४ ॥
गुरुमुख सबद गहै उर अंतर, सकल भरम से छूटै ॥ ५ ॥
राम का ध्यान धरहु रे प्रानी, अमृत का मेँह बूटै[2] ॥६॥
जन दरियाव अरप दे आपा, जरा मरन तब टूटै ॥ ७ ॥

---

(१) शेष नाग । (२) बरसै ।

॥ प्रेम ॥

(१)

बाबल[१] कैसे बिसरा जाई ।
यदि मैं पति सँग रल खेलूँगी, आपा धरम समाई ॥टेक॥
सतगुर मेरे किरपा कीन्ही, उत्तम बर परनाई[२] ।
अब मेरे साईं को सरम पड़ैगी, लेगा चरन लगाई ॥१॥
थे[३] जानराय मैं बाली भोली, थे निर्मल मैं मैली ।
वे बतरायैं[४] मैं बोल न जानूँ, भेद न सकूँ सहेली ॥ २ ॥
थे ब्रह्म भाव मैं आतम कन्या, समझ न जानूँ बानी ।
दरिया कहै पति पूरा पाया, यह निस्चय करि जानी ॥३॥

(२)

कहा कहूँ मेरे पिउ की बात ।
जो रे कहूँ सोइ अंग सुहात ॥ टेक ॥
जब मैं रही थी कन्या क्वारी ।
तब मेरे करम हता[५] सिर भारी ॥ १ ॥
जब मेरी पिउ से मनसा दौड़ी ।
सतगुर आन सगाई जोड़ी ॥ २ ॥
तब मैं पिउ का मंगल गाया ।
जब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥ ३ ॥
हथलेवा दै बैठी संगा ।
तब मोहिं लीन्ही बायें अंगा ॥ ४ ॥
जन दरिया कहै मिटि गइ दूती[६] ।
आपा अरपि पीव सँग सूती ॥ ५ ॥

---

(१) बाप । (२) ब्याह कराया । (३) तुम । (४) बात करैं । (५) था । (६) द्वैत भाव ।

॥ भेद ॥

पतिब्रता पति मिली है लाग।
जहँ गगन मँडल में परम भाग ॥ टेक ॥
जहँ जल बिन कँवला बहु अनंत।
जहँ बपु[1] बिन भौंरा गोह[2] करंत ॥ १ ॥
अनहद बानी अगम खेल।
जहँ दीपक जरै बिन बाती तेल ॥ २ ॥
जहँ अनहद सबद है करत घोर।
बिन मुख बोलै चात्रिक मोर ॥ ३ ॥
बिन रसना गुन उदत[3] नार।
बिन पग पातर निरतकार[4] ॥ ४ ॥
जहँ जल बिन सरवर भरा पूर।
जहँ अनँत जोत बिन चंद सूर ॥ ५ ॥
बारह मास जहँ रितु बसंत।
ध्यान धरैं जहँ अनँत संत ॥ ६ ॥
त्रिकुटी सुखमन चुवत छीर।
बिन बादल बरखै मुक्ति नीर ॥ ७ ॥
अमृत धारा चलै सीर[5]।
कोइ पीवै बिरला संत धीर ॥ ८ ॥
ररंकार धुन अरूप एक।
सुरत गही उनहीं की टेक ॥ ९ ॥
जन दरिया बैराट चूर।
जहँ बिरला पहुँचै संत सूर ॥ १० ॥

---

(१) शरीर। (२) गुंजार। (३) गाती है। (४) बेश्या नाचती है। (५) ठंडी।

॥ पारख ॥

जा के उर उपजी नहिँ भाई ।
सो क्या जाने पीर पराई ॥ टेक ॥
ब्यावर[1] जानै पीर की सार ।
बाँझ नार क्या लखै बिकार ॥ १ ॥
पतिब्रता पति के। ब्रत जानै ।
बिभचारिनि मिलि कहा बखानै ॥ २ ॥
हीरा पारख जौहरि पावै ।
मूरख निरख के कहा बतावै ॥ ३ ॥
लागा घाव कराहै सोई ।
कौतुकहार[2] के दर्द न कोई ॥ ४ ॥
राम नाम मेरा प्रान-अधार ।
सोई राम रस पीवनहार ॥ ५ ॥
जन दरिया जानैगा सोई ।
(जाके) प्रेम की भाल कलेजे पोई ॥ ६ ॥

॥ मिश्रित ॥

संतो कहा गृहस्थ कहा त्यागी ।
जेहि देखूँ तेहि बाहर भीतर, घट घट माया लागी ॥टेक॥
माटी की भीत पवन का थंभा, गुन औगुन से छाया ।
पाँच तत्त आकार मिलाकर, सहजाँ गिरह बनाया ॥१॥
मन भयो पिता मनसा भइ माई, दुख सुख दोनोँ भाई ।
आसा तृस्ना बहिनेँ मिलकर, गृह की सौंज[3] बनाई ॥२॥
मोह भयो पुरुष कुबुधि भइ घरनी[4], पाँचो लड़का जाया ।
प्रकृति अनंत कुटुंबी मिलकर, कलहल[5] बहुत उपाया ॥३॥

(१) लड़कोरी। (२) बनावट करने वाला, तमाशा देखने वाला। (३) सामान। (४) स्त्री। (५) झगड़ा।

लड़कों के सँग लड़की जाई, ना का नाम अधीरी।
बन में बैठी घर घर डोलै, स्वारथ संग खपी री ॥ ४ ॥
पाप पुन्न दोउ पाड़ पड़ोसी, अनँन बासना नाती।
राग द्वेष का बंधन लागा, गिरह बना उतपाती ॥ ५ ॥
कोइ गृह माँडि[1] गिरह में बैठा, बैरागी बन बासा।
जन दरिया इक राम भजन बिन, घट घट में घर बासा ॥६॥

दूलनदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १३३]

॥ नाम महिमा ॥

(१)

कोइ बिरला यहि बिधि नाम कहै ॥ टेक ॥
मंत्र अमोल नाम दुइ अच्छर, बिनु रसना रट लागि रहै ॥१॥
होठ न डोलै जीभ न बोलै, सूरति धरनि दिढ़ाइ गहै ॥२॥
दिन औ राति रहै सुधि लागी, यहि माला यहि सुमिरन है ॥३॥
जन दूलन सतगुरन बतायो, ता की नाव पार निबहै ॥४॥

(२)

बाजत नाम नौबति आज।
है सावधान सुचित्त सीतल, सुनहु गैब अवाज ॥ १ ॥
सुख-कंद अनहद नाद सुनि, दुख दुरित[2] क्रम भ्रम भाज।
सतलोक बरसो पानि, धुनि निर्बान यहि मन बाज ॥२॥
तोइँ चेत चित दै प्रेम मगन, अनंद आरति साज।
घर राम आये जानि, भइनि[3] सनाथ बहुरा[4] राज ॥३॥

---

(१) बनाकर। (२) दूर हुए। (३) हुई। (४) पलटा, लौटा।

जगजिवन सतगुरु कृपा पूरन, सुफल भे जन काज।
धनि भाग दूलनदास तेरे, भक्ति तिलक बिराज ॥ ४ ॥

(३)

मन वहि नाम की धुनि लाउ।
रटु निरंतर नाम केवल, अवर सब बिसराउ ॥ १ ॥
साधि सूरति आपनो, करि सुवा[1] सिखर[2] चढ़ाउ।
पोखि प्रेम प्रतीत तेँ, कहि राम नाम पढ़ाउ ॥ २ ॥
नामही अनुरागु निसु दिन, नाम के गुन गाउ।
बनी तैा का अबहिँ, आगे और बनी बनाउ ॥ ३ ॥
जगजिवन सतगुरु बचन साचे, साच मन माँ लाउ।
करु बास दूलनदास सत माँ, फिरि न यहि जग आउ॥४॥

(४)

जब गज अरध नाम गुहरायो।
जब लगि आवै दूसर अच्छर, तब लगि आपुहि धायो ॥१॥
पाँय पियादे भे करुनामय, गरुड़ासन बिसरायो।
धाय गजंद गोद प्रभु लीन्हो, आपनि भक्ति दिढ़ायो ॥२॥
मीरा को बिष अमृत कीन्हो, बिमल सुजस जग छायो।
नामदेव हित कारन प्रभु तुम, मिर्तक गाय जियायो॥३॥
भक्त हेत तुम जुग जुग जनमेउ, तुमहिँ सदा यह भायो।
बलि बलि दूलनदास नाम की, नामहिँ तेँ चित लायो॥४॥

॥ भेद ॥

(१)

साईं तेरो गुप्त मर्म हम जानी।
कस करि कहैाँ बखानी ॥ टेक ॥
सतगुरु संत भेद मोहिँ दीन्हा, जग से राखा छानी।
निज घर का कोउ खोज न कीन्हा, करम भरम अटकानी ॥१

(१) तोता। (२) पहाड़ की चोटी।

निज घर है वह अगम अपारा, जहाँ विराजै स्वामी ।
ता के परे अलोक अनामी, जा का रूप न नामी ॥२॥
ब्रह्म रूप धरि सृस्टि उपाई, आप रहा अलगानी ।
वेद कितेब की रचन रचाई, दस औतार धरानी ॥ ३ ॥
निज माता सीता सोइ राधा, जिन पितु राम सुवामी ।
दोउ मिलि जीवन वृंद छुड़ाया, निज पद मैँ दिया ठामी ॥४॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, निज सुत जक्त पठानी ।
मुक्ति द्वार की कूँची दीन्हीं, ता तेँ कुलुफ खुलानी ॥५॥

दोहा

दूलन यह मत गुप्त है, प्रगट न करौ बखान ।
ऐसे राखु छिपाय मन, जस बिधवा औधान ॥ ६ ॥

(२)

देख आयोँ मैं तो साईं की सेजरिया ।
साईं की सेजरिया सतगुरु की डगरिया ॥ १ ॥
सबदहि ताला सबदहि कूँची, सबद की लगी है जँजिरिया ॥२
सबद ओढ़ना सबद बिछौना, सबद की चटक चुनरिया ॥३॥
सबद सरूपी स्वामी आप बिराजैं, सीस चरन मैं धरिया ॥४
दूलनदास भजु साईं जगजीवन, अगिन से अहँग उजरिया ५

॥ चितावनी ॥

(१)

पछितात क्या दिन जात बीते, समुझ करु नर चेत रे ।
अंध तेरे कंध सिर पर, काल डंका देत रे ॥ १ ॥
हुसियार ह्वै गुन गाव प्रभु के, ठाढ़ रहु गुरु खेत रे ।
ताके रहै छूटै नहीं, जिमि राहु रबि ससि केत रे ॥ २ ॥
जम द्वार तर सब पीसिगे, चर अचर निन्दक जेत रे ।
नहिँ पियत अमृत नाम रस, भरि स्वास सुरति सचेत रे ॥३

मद मोह महुवा दाख दुख, बिष का पियाला लेत रे ।
जग नात गोत बिसारि सब, हर दम गुरू से हेत रे ॥४॥
सगलै सुपन अपना वही, जिस रोज परत सँकेत रे ।
वह आइ सिरजनहार हरि, सतनाम भौजल सेत रे ।
जन टूलन सतगुरु चरन बंदत, प्रेम प्रीति समेत रे ॥५॥

(२)

तू काहे के जग मेँ आया, जो पै नाम से प्रीति न लाया रे ॥टेक
तृस्ना काम सवाद घनेरे, मन से नहिँ बिसराया रे ।
भोग बिलास आस निस बासर, इतउत चित भरमाया रे॥१
त्रिकुटी तिरथ प्रेम जल निर्मल, सुरत नहीँ अन्हवाया रे ।
दुर्मति करम मैल सब मन के, सुमिरि सुमिरि न छुड़ाया रे ॥२
कहँ से आये कहँ के जैहै, अंत खोज नहिँ पाया रे ।
उपजि उपजि के बिनसि गये सब, काल सबै जग खाया रे॥३
कर सतसंग आपने अंतर, तजि तन मोह औ माया रे ।
जन दूलन बल बल सतगुरु के, जिन मोहिँ अलख लखाया रे॥४

॥ उपदेश ॥

(१)

बोल मनुआँ राम राम ॥ टेक ॥

सत्त जपना और सुपना, जिकर लावो अष्ट जाम ॥ १ ॥
समुझि बूझि बिचारि देखो, पिंड पिंजरा घूम घाम ॥ २ ॥
बालमीकि हवाल पूछो, जपत उलटा सिद्ध काम ॥ ३ ॥
दास दूलन आस प्रभु की, मुक्ति-करता सत्तनाम ॥ ४ ॥

दोहा

राम नाम दुइ अच्छरै, रटै निरंतर कोय ।
दूलन दीपक बरि उठै, मन परतीत जु होय ॥ ५ ॥

(२)

जागु जागु आतमा, पुरान दाग धोउ रे।
कर्म भर्म दूर करु, कीच काम खोउ रे ॥ १ ॥
अपनी सुधि भूलि गई, और की क्या टोउ रे।
सत्त बात झूठ करै, झूठ ही को गोउ[1] रे ॥ २ ॥
इहै बात जानि जानि, द्वार द्वार रोउ रे।
सत्तर पानी साबुन का, प्रेम पानी भोउ[2] रे ॥ ३ ॥
लाग दाग धोय डारु, वाह वाह होउ रे।
दूलन बेकूफ[3] काम, गाफिल ह्वै न सोउ रे ॥ ४ ॥

(३)

चलो चढ़ो मन यार महल अपने ॥ टेक ॥
चौक चाँदनी तारे झलकैं, बरनत बनत न जात गने ॥ १ ॥
हीरा रतन जड़ाव जड़े जहँ, मोतिन कोटि किलान बने ॥२
सुखमन पलँग सहज बिछौना, सुख सोवो को करै मने ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, को आवै यह जग सुपने ॥४॥

(४)

जोगी चेत नगर में रहो रे ॥ टेक ॥
प्रेम रंग रस ओढ़ चदरिया, मन तसबीह गहो रे ॥ १ ॥
अन्तर लाओ नामहि की धुनि, करम भरम सब धो रे ॥ २॥
सूरत साधि गहो सत मारग, भेद न प्रगट कहो रे ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, भवजल पार करो रे ॥ ४ ॥

(५)

प्रानी जपि ले तू सतनाम ॥ टेक ॥
मात पिता सुत कुटुम कबीला, यह नहिं आवैं काम।
सब अपने स्वारथ के संगी, संग न चलै छदाम ॥ १ ॥

(१) छिपा कर रखना, पकड़े रहना। (२) थोड़े पानी से भिँगाना। (३) मूर्ख।

देना लेना जो कुछ होवै, करिले अपना काम ।
आगे हाट बजार न पावै, कोइ नहिँ पावै ग्राम ॥ २ ॥
काम क्रोध मद लोभ मोह ने, आन बिछाया दाम ।
क्यौं मतवारा भया बावरे, भजन करो निःकाम ॥ ३ ॥
यह नर देही हाथ न आवै, चल तू अपने धाम ।
अब की चूक माफ नहिँ होगी, दूलन अचल मुकाम ॥ ४ ॥

(६)

राम राम रटु रामराम सुनु, मनुवाँ सुवा सलोना रे ॥टेक॥
तनहरियाले बदन[1] सुलाले, बोल अमोल सुहैाना रे ॥१॥
सत्त तंत्र अरु सिद्ध मंत्र पढ़ु, सोई मृतक जियैाना रे ॥२॥
सुबचन तेरे भैाजल बेरे[2], आवागवन मिटैाना रे ॥३॥
दुलनदास के साईँ जगजीवन, चरन सनेह दृढ़ैाना रे ॥४॥

(७)

मन रहि जा चरनन सीस धरी, लागि रहै धुनि हरी हरी ॥१
तोहि समझावौं घरी घरी, कुमति बिपति तोरि जाय टरी॥२
पाँच पचीसो एक करी, पियहु दरस रस पेट भरी ॥ ३ ॥
हारे बहुत बहुत रबरी[3], चरन प्रीति बिन कछु न सरी॥४॥
चरन प्रभाव जानु कुबरी[4], परसत गैातम नारि तरी[5] ॥५॥
साईँ जगजीवन कृपा करी, जन दूलन परतीत परी ॥६॥

॥ विनय ॥

(१)

साईँ हो गरीब निवाज ॥ टेक ॥
देखि तुम्हैँ घिन लागत नाहीं, अपने सेवक के साज ॥१॥
मोहिं अस निलज न यहि जग कोऊ, तुम ऐसे प्रभु लाज जहाज ॥२

(१) चिहरा। (२) बेड़ा, नाव। (३) थक कर। (४) कुबजा जिसकी पीठ का कूब श्रीकृष्ण ने अपने चरण से सीधा किया। (५) गैातम की नारी अहिल्या जो सराप बस शिला बनी पड़ी थी और श्रीरामचन्द्र के चरण लगाने से तरी।

और कछू हम चाहित नाहीं, तुम्हरे नाम चरन तें काज ॥३॥
दूलनदास गरीब निवाजहु, साईं जगजीवन महराज ॥४॥

(२)

साईं दरस माँगौं तोर, आपनो जन जानि साईं मान राखहु मोर ॥१॥
अपथ[1] पंथ न सूझि इत उत, प्रबल पाँचो चोर ।
भजन केहि बिधि करौं साईं, चलत नाहीं जोर ॥ २ ॥
नात लाइ दुरात[2] काहे, पतित जन की दौर ।
बचन अवधि[3] अधार मेरे, आसरा नहिं और ॥ ३ ॥
हेरिये करि कृपा जन तन, ललित[4] लोचन कोर ।
दास दूलन सरन आयो, राम बंदी-छोर ॥ ४ ॥

(३)

साईं तेरे कारन नैना भये बैरागी ।
तेरा सत दरसन चहौं, कछु और न माँगी ॥ १ ॥
निसु बासर तेरे नाम की, अंतर धुनि जागी ।
फेरत हौं माला मनौं[5], अँसुवन झरि लागी ॥ २ ॥
पलक तजी इत उक्ति तें[6], मन माया त्यागी ।
दृष्टि सदा सत सनमुखी, दरसन अनुरागी ॥ ३ ॥
मदमाते राते मनौं[5], दाधे बिरह आगी ।
मिलि प्रभु दूलनदास के, करु परम सुभागी ॥ ४ ॥

(४)

सुनहु दयाल मोहिं अपनावहु ॥ टेक ॥
जन मन लगन सुधारन साईं, मोरि बनै जो तुमहिं बनावहु ॥१
इत उत चित्त न जाइ हमारा, सूरत चरन कमल लपटावहु ॥२
तबहूँ अब मैं दास तुम्हारा, अब जिनि बिसरै। जिनि बिसरावहु ॥३
दूलनदास के साईं जगजीवन, हमहूँ काँ भक्तन माँ लावहु ॥४

(१) कुराह। (२) हटाते हो। (३) प्रतिज्ञा। (४) सुंदर, मोहनी। (५) गोया कि। (६) इधर अर्थात संसार की चतुरता (उक्ति) की ओर से आँख मूँद ली।

(५)

साईं सुनहु बिनती मोरि ॥ टेक

बुधिबल सकल उपाय-हीन मैं, पाँयन परौं दोऊ कर जोरि॥१॥
इत उत कतहूँ जाइ न मनुवाँ, लागि रहै चरनन माँ डोरि॥२॥
राखहु दासहिं पास आपने, कस को सकिहै तोरि ॥३॥
आपन जानि के मेटहु मेरे, औगुन सब क्रम भ्रम खोरि[१]॥४॥
केवल एक हितू तुम मेरे, दुनियाँ भरी लाख करोरि ॥५॥
दुलनदास के साईं जगजीवन, माँगौं सत दरस निहोरि ॥६॥

(६)

साईं भजन ना करि जाइ ।
पाँच तसकर संग लागे, मोहिं हरकत[२] धाइ ॥ १ ॥
चहत मन सतसंग करनो, अधर बैठि न पाइ ।
चढ़त उतरत रहत छिन छिन, नाहिं तहँ ठहराइ ॥२॥
कठिन फाँसी अहै जग की, लियो सबहिं बझाइ ।
पास मन मनि नैन निकटहिं, सत्य गयो भुलाइ ॥ ३ ॥
जगजिवन सतगुरु करहु दाया, चरन मन लपटाइ ।
दास दूलन बास सत माँ, सुरत नहिं अलगाइ ॥ ४ ॥

(७)

प्रभु तुम किहेउ कृपा बरियाईं[३] ।
तुम कृपाल मैं कृपा अलायक,[४] समुझि निवजतेहु साईं ॥१॥
कूकुर धोये होइ न बाछा,[५] तजै न नीच निचाईं ।
बगुला होइ न मानस-बासी,[६] बसहि जे बिषै तलाईं ॥२॥

(१) कसर, ऐब । (२) रोकते हैं । (३) ज़बरदस्ती । (४) अजोग ।
(५) गऊ का बच्चा । (६) मानसरोवर का वासी ।

प्रभु सुभाउ अनुहारि चाहिये, पाय चरन सेवकाई।[१]
गिरगिट पौरुष करै कहाँ लगि, दौरि कँड़ौरे[२] जाई ॥३॥
अब नहिं बनत बनाये मेरे, कहत अहौं गोहराई।
दूलनदास के साईं जगजीवन, समरथ लेहु बनाई ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

धनि मोरि आज सुहागिन घड़िया ॥ टेक ॥
आज मोरे अँगना सन्त चलि आये, कौन करौं मिहमनिया॥१
निहुरि निहुरि मैं अँगना बहारौं, मानो मैं प्रेम लहरिया ॥२
भाव कै भात प्रेम कै फुलका, ज्ञान की दाल उतरिया ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, गुरु के चरन बलिहरिया ॥४॥

(२)

जागु री मोरि सुरत पियारी।
चरन कमल छबि झलक निहारी ॥ १ ॥
बिसरि जाइ दे यह संसारी।
धरहु ध्यान मन ज्ञान बिचारी ॥ २ ॥
पाँच पचीसो दे झझकारी[३]।
गहहु नाम की डोरि सँभारी ॥ ३ ॥
साईं जगजीवन अरज हमारी।
दूलनदास को आस तुम्हारी ॥ ४ ॥

(३)

सतनाम तें लागी अँखिया, मन परिगै जिकिर[४] जँजीर हो॥१
सखि नैना बरजे ना रहैं, अब ठिरे[५] जात वोहि तीर[६] हो॥२॥

(१) ईश्वर सरीखा स्वभाव बन जाय तब उस के चरनों में बासा मिलै। (२) कंडों या उपलों का ढेर। (३) फटकार या डाँट। (४) स्मरण या सुमिरन। (५) विशेष शीतलता से जम जाने को "ठिरना" कहते हैं—प्रतिलिपि में "टरे" है जिसके अर्थ खिँचने के हैं। (६) पास।

नाम सनेही बावरे, द्रुग भरि भरि आवत नीर हो ॥३॥
रस-मतवाले रस-मसे[1], यहि लागी लगन गँभीर हो ॥४॥
सखि इस्क पिया से आसिकाँ, तजि दुनिया दौलत भीर हो[2]॥५
सखि गोपीचन्दा भरथरी, सुलताना भयो फकीर हो ॥६॥
सखि दूलन का से कहै, यह अटपटि[3] प्रेम की पीर हो ॥७॥

(४)

हुआ है मस्त मंसूरा, चढ़ा सूली न छोड़ा हक़ ।
पुकारा इश्क़बाज़ों को, अहै मरना यही बरहक़ ॥ १ ॥
जो बोले आशिक़ाँ यारों, हमारे दिल में है जी शक ।
अहै यह काम सूरों का, लगाये पीर से अब तक ॥ २ ॥
शम्सतबरेज़ की सीफ़त, जहाँ में ज़ाहिरा अब तक ।
निज़ामुद्दीन सुलताना, सभी मेटे दुनी के धक ॥ ३ ॥
निरख रहे नूर अल्लह का, रहे जीते रहे जब तक ।
हुआ हाफ़िज़ दिवाना भी, भये ऐसे नहीं हर यक ॥ ४ ॥
सुना है इश्क़ मजनूँ का, लगी लैला कि रहती ज़क ।
जलाकर ख़ाक तन कीन्हा, हुए वह भी उसी माफ़िक़ ॥५॥
दुलन जन को दिया मुरशिद, पियाला नाम का थकथक ।
वही है शाह जगजीवन, चमकता देखिये लक़लक़ ॥६॥

(५)

अब तो अफ़सोस मिटा दिल का, दिलदार दीद में आया है ।
संतों की सुहबत में रह कर, हक़ हादी को सिर नाया है ॥१॥
उपदेस उग्र गहि सत्त नाम, सोइ अष्ट जाम धुनि लाया है ।
मुरशिद की मेहर हुई योँ कर, मज़बूत जोश उपजाया है ॥२॥

(१) रस में पगे। (२) प्रेमी जन जिन की प्रीति प्रीतम से लगी है उन्हें संसार और धन माल की चिन्ता नहीं रहती। (३) अड़बड़, अनोखी।

हर वक्त नसीवर मैं सूरन, सूरन अंदर झलकाया है ।
बूअली कलंदर औ फ़रीद, तबरेज़ वही मत गाया है ॥३॥
कर सिद्क़ सबूरी लामकान, अल्लाह अलख दरसाया है ।
लखि जन दूलन जगजिवन पीर, महबूब मेरे मन भाया है॥
खाविन्द खास गैबी हुजूर, वह दिल अंदर मैं आया है॥४॥

(६)

ऐसा रँग रँगैहैाँ, मैं तो मतवालिन होइहौं ॥ टेक ॥
भट्ठी अधर लगाइ, नाम की सोज[१] जगैहौं ।
पवन सँभारि उलटि दै झोंका, करकट कुमति जलैहैाँ ॥१
गुरुमति लहन[२] सुरति भरि गागरि, नरिया नेह लगैहौं ।
प्रेम नीर दै प्रीति पुचारी, यहि बिधि मदवा चुवैहौं ॥२॥
अमल अगारी नाम खुमारी, नैनन छबि निरतैहैाँ ।
दै चित चरन भयूँ सत सन्मुख, बहुरि न यहि जग ऐहौं ॥३॥
ह्वै रस मगन पियौं भर प्याला, माला नाम डोलैहौं ।
कह दूलन सतसाईं जगजीवन, पिउ मिलि प्यारी कहैहौं॥४

॥ करुना ॥

(१)

हमारे तो केवल नाम अधार ।
पूरन काम नाम दुइ अच्छर, अंतर लागि रहै खुटकार॥१॥
दासन पास बसै निसु बासर, सोवत जागत कबहुँ न न्यार।
अरध नाम टेरत प्रभु धाये, आय तुरत गज गाढ़ निवार॥२
जन मन-रंजन सब दुख-भंजन, सदा सहाय परम हित प्यार।
नाम पुकारत चीर बढ़ायो, द्रुपदी लज्या के रखवार ॥३॥

(१) तपन, बिरह । (२) जामन जिस से शराब का खमीर जल्द उठ आता है ।

गौरि गनेस औ सेष रटत जेहिं, नारद सुक[1] सनकादि पुकार।
चारहु मुख जेहिं रटत बिधाता[2], मंत्रराज सिव मन सिंगार ४

(२)

भक्तन राम चरन धुनि लाई ॥ टेक ॥
चारिहु जुग गोहारि प्रभु लागे, जब दासन गोहराई ॥१॥
हिरनाकुस रावन अभिमानी, छिन माँ खाक मिलाई ॥२॥
अबिचल भक्ति नाम की महिमा, कोऊ न सकत मिटाई ॥३॥
कोउ उसवास[3] न एकौ मानहु, दिन दिन की दिनताई ॥४॥
दुलनदास के साइँ जगजीवन, है सतनाम दुहाई ॥ ५ ॥

॥ झूलना ॥

(१)

पंखा चँवर मुरछल ढुरैं, सूबा सबै खिजमत करैं।
जरबफ़्त को तंबू तन्यो, बैठक बन्यो मसनंद का ॥
दिन रात झाँगरि बाजती, सुथरी सहेली नाचती।
पिलसूज[4] आगे यों जलै, उजियार मानौ चंद का ॥
एकै अतर चोवा चमेली, बेला खुसबोई लिये।
एकै कटोरे मैं किये, सरबत सलोना कंद का ॥
हिन्दू तुरुक दुइ दीन आलम, आपनी ताबीन[5] मैं।
यह भी न दूलन खूबहै, करु ध्यान दसरथ-नंद का ॥

(२)

बर[6] जे अठारह बरन मैं, बितपन्न[7] ह ब्याकरन मैं।
पहिरे खराऊँ चरन मैं, जानैं न स्वाद सरीर का ॥
कुस मुद्रिका कर राखते, जे देव-बानी भाखते।
नहिं अन्न आमिष[8] चाखते, नित पान करते छीर का॥

(१) सुकदेव। (२) ब्रह्मा। (३) संशय। (४) पतील-सोज़ यानी चौमुखी दीवट। (५) तावेदारी। (६) श्रेष्ठ। (७) प्रवीन, कुशल। (८) मांस।

धोती उपरना अंग मैं, रत वेद बिद्या रंग मैं ।
बिद्यारथी बहु संग मैं, जिन्ह बास तीरथ तीर का ॥
सूतहिं सदा भुइँ सेज जे, पूरे तपस्या तेज के ।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान श्री रघुबीर का ॥

(३)

राखे जटा जिन्ह माथ मैं, बीभूति लाये गात मैं ।
तिरसूल तौंबी हाथ मैं, छोड़ेउ सकल सुख धाम का ॥
भावै जहाँ जावैं तहाँ, पुर बीच मैं आवैं नहीं ।
रुद्राच्छ का माला गरे, आला[1] बिछावन चाम का ॥
दसहूँ दिसा जिन्ह घूमि कै, कीन्हेउ प्रदच्छिन[2] भूमि कै ।
फिरि मौन होइ बैठेउ तज्यो, मजकूर दौलत दाम का[3] ॥
करि जोग देहीं जारते, हरताल पारा मारते ।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान स्यामा स्याम का ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

साहिब अपने पास हो, कोइ दरद सुनावै ॥ टेक ॥
साहिब जल थल घट घट ब्यापत, धरती पवन अकास हो ॥१
नीची अटरिया की ऊँची दुअरिया, दियना बरत अकास हो ॥२
सखिया इक पैठो जल भीतर, रटत पियास पियास हो ॥३॥
मुख नहिं पिये चिरुआ नहिं पीयै, नैनन पियत हुलास हो ॥४
साईं सरवर[4] साईं जगजीवन[5], चरनन दूलनदास हो ॥५॥

(२)

नीक न लागे बिनु भजन सिंगरवा ॥ टेक ॥
का कहि आयौ हियाँ बरत्यो नाहीं,
भूलि गयल तोरा कौल करारवा ॥ १ ॥

---

(१) उत्तम । (२) फेरा । (३) फिर मौन (चुप) साध कर बैठे और धन दौलत की चर्चा छोड़ दी । (४) तालाव । (५) संसार के प्राण-आधार ।

साचा रँग हिये उपजत नाहीं,
भेष बनाय रँग लीन्हो कपरवा ॥ २ ॥
बिन रे भजन तोरी ई गति होइहै,
बाँधल जैबे तू जम के दुवरवा ॥ ३ ॥
दुलनदास के साईं जगजीवन,
हरि के चरन पर हमरो लिलरवा ॥ ४ ॥

बुल्ला साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४०]

॥ गुरुदेव ॥

बलि हैाँ बलि हैाँ सतगुरु की ॥ टेक ॥
जिन ध्यान दियो परमेसुर को ।
त्रिकुटी संगम जिन राह निबेरी ॥ १ ॥
प्रेम बिलास अकास मैं बास है ।
आवागवन रहित भै फेरी ॥ २ ॥
अनहद बाजे झनकार कि बानी ।
बिन सरवन तहँ सुनत है टेरी ॥ ३ ॥
बुल्ला हिरदे बिचारि बोलै ।
ब्रह्म ज्ञान कि बात सुनो मेरी ॥ ४ ॥

॥ नाम ॥

साईं के नाम की बलि जावँ ।
सुमिरत नाम बहुत सुख पायो, अंत कतहुँ नहि ठाँव ॥१॥
नाम बिना मन स्वान मँजारी,[1] घर घर चित लै जाँव ॥२॥

---

(१) कुत्ता बिल्ली ।

बिन दरसन परसन मन कैसे, ज्यों लूले को गाँव[1] ॥३॥
पवन मथानी हिरदे ढूँढ़ो, तब पावै मन ठाँव ॥४॥
जन बुल्ला बोलहि कर जोरे, सतगुरु चरन समाँव ॥५॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

सोहं हंसा लागलि डोर ।
सुरति निरति चढु मनवाँ मोर ॥ १ ॥
झिलिमिलि झिलिमिलि त्रिकुटी ध्यान ।
जगमग जगमग गगन तान ॥ २ ॥
गह गह गह अनहद निसान ।
प्रान-पुरुष तहँ रहत जान ॥ ३ ॥
लहरि लहरि उठि पछिंव[2] घाट ।
फहरि फहरि चल उतर बाट ॥ ४ ॥
सेत बरन तहँ आवै आप ।
कह बुल्ला सोइ माइ बाप ॥ ५ ॥

(२)
अरिल

स्याम घटा घन घेरि चहूँ दिसि आइया ।
अनहद बाजे घोर जो गगन सुनाइया ॥
दामिनि दमकि जो चमकि त्रिबेनी न्हाइया ।
बुल्ला हृदे बिचार तहाँ मन लाइया ॥

(३)
अरिल

सामहिं उगवे सूर भोर ससि जागई ।
गंग जमुन के संगम अनहद बाजई ॥

---

(१) जिस तरह लूला अपने पैरों से चल कर गाँव (मुक़ाम) को नहीं पहुँच सकता इसी तरह बिना नाम के दरस परस के मन की हालत है यानी अंतर में चाल नहीं चलती । (२) पच्छिम ।

अजपा जापहिँ जाप सोहं डोरि लागई ।
बुल्ला ता मैं पैठि जोति मैं गाजई ॥

॥ विरह ॥

(१)

देखो पिया काली घटा मो पै भारी ॥ १ ॥
सूनी सेज भयावन लागी, मरौं विरह की जारी ॥ २ ॥
प्रेम प्रीति यहि रीति चरन लगु, पल छिन नाहिँ बिसारी॥३
चितवत पंथ अंत नहिँ पायो, जन बुल्ला बलिहारी ॥४॥

(२)

नैना मोरे निपट बिकट ठैार अटके ॥ १ ॥
सुख के साथ सबै कोइ चाहे, दुखहिँ परे पर छटके ॥२॥
भौंह कमान नैन दोउ गाँसी, जहाँ लगे तहँ लटके ॥३॥
जन बुल्ला दाया सतगुरु की, देखु सकल जग भटके ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

साची भक्ति गोपाल की, मेरो मन माना ।
मनसा बाचा कर्मना, सुनु संत सुजाना ॥ १ ॥
लँगरा लुंजा है रहो, बहिरा अरु काना ।[१]
राम नाम सोँ खेल है, दीजै तन दाना ॥ २ ॥
भक्ति हेतु गृह छोड़िये, तजि गर्व गुमाना ।
जन बुल्ला पायो बाक[२] है, सुमिरो भगवाना ॥ ३ ॥

(२)

या बिधि करहु आपुहिँ पार ।
जस मोन जल की प्रीति जानै, देखु आपु बिचार ॥ १ ॥

---

(१) मन की बहिरमुख धावना बंद करो तब मालिक की ओर अंतर मेँ चाल चलेगी । (२) बचन ।

जस सीप रहत समुद्र माहीं, गहत नाहिन बार[1] ।
वा की सुरत आकास लागी, स्वाँति बुंद अधार ॥ २ ॥
(जस) चकोर चन्द सोँ दृष्टि लावै, अहार करत अँगार ।
दहत नाहिन पान कीन्हे, अधिक होत उजार[2] ॥ ३ ॥
कीट भृंग की रहनि जानो, जाति पाँति गँवाय ।
बरन अबरन एक मिलि भे, निरंकार समाय ॥ ४ ॥
(अस) दास बुल्ला आस निरखहि, राम चरन अपार ।
देहु दरसन मुक्ति परसन, आवागवन निवार ॥ ५ ॥

॥ बेहद ॥

(१)

प्रभु निराधार अधार उज्जल, विन्दु सकल बिराजई ।
अनन्त रूप सरूप तेरो, मो पै बरनि न जावई ॥ १ ॥
बाँधि पवनहिं साधि गगनहिं, गरज गरज सुनावई ।
तहँ हंस मुनि जन चूगते मनि, रस परसि परसि अघावई॥२
बिना कर मुख बेनु[3] बाजै, बीन खनन गुंजई ।
बिना नैनन दरस देखो, अगति गतिहिं जनावई ॥ ३ ॥
वा के जाति पाँति न नेम धर्मा, भर्म सकल गँवावई ।
आपु आपु बिचारि देखो, ऐसो है वह रावई[4] ॥ ४ ॥
जीति पाँच पचीस तीनोँ, चैाथे जा ठहरावई ।
तब दास बुल्ला लियो गढ़, जब गुरू दीन्ह लखावई ॥५॥

(२)

अनहद ताल द्रुग थेइ थेइ बाजै, सकल भुवन जाको जोति बिराजै ॥१
ब्रह्मा बिस्नु खड़े सिव द्वारे, परम जोति सो करहिं जुहारे[5]॥२

---

(१) पानी । (२) चकोर आग खाने से नहीं जलता बल्कि उस में चेतन्यता बढ़ती है । (३) एक लम्बा बाजा जो मुँह से बजाया जाता है । (४) राजा । (५) दक्वगी ।

गगन मँडल महँ निर्तन होय, सतगुरु मिलै तो देखै सोय॥३
आठ पहर जन बुल्ला गाजै, भक्ति भाव माथे पर छाजै ॥४॥

॥ बिनती ॥

(१)

अब कि बार मो पै होहु दयाल, रोम रोम जन होइ निहाल१
जन बिनवै अठौ पहवार[१], तुम्हरे चरन पर आपा वार॥२॥
तुम तौ राम हहु निरगुन सार, मोरे हिये महँ तुम आधार३
तुम बिन जीवन कौने काज, बार बार मो को आवै लाज।४
सतगुरु चरनन साज समाज, बुल्ला माँगै भक्ती राज ॥५॥

(२)

ऐसो बिनय सुनहु अबिनासी ।
अब की बार काटहु जम फाँसी ॥ १ ॥
भया प्रकास मिटा अँधियारा ।
आदि अंत मध सो उजियारा ॥ २ ॥
रूप रेख तहँ बरनि न जासी ।
निरंकार आपुहिँ अबिनासी ॥ ३ ॥
जन बुल्ला तहँ रहे हजूरा ।
पूरन ब्रह्म देखा जहँ नूरा ॥ ४ ॥

॥ भेद ॥

सुखमनि सुरति डोरि बनाव ।
मेटिहै सब कर्म जिय के, बहुरि इतहिँ न आव ॥ १ ॥
पैठि अंदर देखु कंदर[२], जहाँ जिय को बास ।
उलटि प्रान अपान मेटो, सेत सब्द निवास ॥ २ ॥
गंग जमुना मिलि सरसुती, उमँगि सिखर बहाव ।
लवकंति[३] बिजुली दामिनी, अनहद गरज सुनाव ॥ ३ ॥

(१) पहर । (२) गुफा । (३) चमकती है ।

जीति आया आपहीं, गुरु यारि सबद सुनाव ।
तब दास बुल्ला भक्ति ठानो, सदा रामहिं गाव ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

घटोही खोजहु क्यौं नहिं आप, सुमिरहु अजपा जाप॥टेक॥
बिन खोजे कहुँ राह न पैहो, कोटिन करहु बिलाप ॥१॥
निकटहिं राम नाम अभि अंतर, जानहि जाहि मिलाप॥२॥
हाजिर हजूर त्रिवेनी संगम, झिलमिलि नूर जो जाप ॥३॥
जन बुल्ला महबूब नूर मँ, यारी पीर[1] प्रताप ॥ ४ ॥

(२)

होली

होरी खेलो रंग भरी, सब सखियन संग लगाई । टेक॥
फागुन आयो मास अनँद मो, खेलि लेहु नर नारी ।
ऐसा समय बहुरि नहिं पैहो, जैहो जनम जुआ हारी ॥१॥
तीर त्रिबेनो होरी खेलो, अनहद डंक बजाई ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस तिनोँ जन, रहे चरन लिपटाई ॥२॥
बनि बनि आवैँ दरस दिखावैँ, अद्भुत कला बनाई ।
जन बुल्ला ऐसि होरी खेले, रहे नाम लै लाई ॥ ३ ॥

(३)

अरिल

मुरगी यह संसार चेहुँ चेहुँ करत है ।
आतम राम के नाम हृदे नहिँ धरत है ॥
बिना राम नहिँ मुक्ति झूठ सब कहत है ।
बुल्ला हृदे बिचारि राम सँग रहत है ॥

---

(१) गुरू ।

केशवदास जी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४१]

॥ चितावनी ॥

कवित्त

दौलत निसान बान धरे खुदी अभिमान,
करत न दाया काहू जीव की जगत मैं ।
जानत है नीके यह फीको है सकल रंग,
गहे फिरै काल फंद मारैगो छिनक मैं ॥
घेरा डेरा गज बाजि[1] झूठो है सकल साजि,
बादि[2] हरि नाम कोऊ काज नाहिं अंत के ।
बार बार कहैं तोहि छोड़ु मान माया मोह,
केसो काहे को करै छोभ मोह काम के ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

निरमल कंत संत हम पाया ।
कोटि सूर जा की निर्मल काया ॥ १ ॥
प्रेम बिलास अमृत रस भरिया ।
अनुभौ चंवर रैन दिन ढुरिया ॥ २ ॥
आनँद मंगल सोहं गावैं ।
सुख सागर प्रभु कंठ लगावैं ॥ ३ ॥
सत्य पुरुष धुनि अति उजियारी ।
कोटि भानु ससि छबि पर वारी ॥ ४ ॥
तेज पुंज निर्गुन उजियारा ।
कह केसो सोइ कंत हमारा ॥ ५ ॥

(१) घोड़ा । (२) सिवाय ।

(२)

पिय थारे रूप भुलानी हो ।
प्रेम ठगौरी मन हरो, बिन दाम बिकानी हो ॥ १ ॥
भँवर कँवल रस बोधिया, सुख स्वाद बखानी हो ।
दीपक ज्ञान पतंग सोँ, मिलि जोति समानी हो ॥ २ ॥
सिंधु भरा जल पूरना, सुख सीप समानी हो ।
स्वाँति बुंद सोँ हेतु है, ऊरध-मुख आनी हो ॥ ३ ॥
नैन स्रवन मुख नासिका, तुम अंतर जानी हो ।
तुम बिन पलक न जीजिये, जस मीन रु पानी हो ॥४॥
व्यापक पूरन दसो दिसि, परगट पहिचानी हो ।
केसो यारी गुरु मिले, आतम रति मानी हो ॥ ५ ॥

(३)

म्हारे हरिजु सूँ जुरलि सगाई हो ।
तन मन प्रान दान दै पिया को, सहज सरूपम पाई हो ॥१॥
अरध उरध के मध्य निरंतर, सुखमन चैाक पुराई हो ।
रवि ससि कुंभक अमृत भरिया, गगन मँडल मठ छाई हो॥२
पाँच सखी मिलि मंगल गावहिं, आनँद तूर बजाई हो ।
प्रेम तत्त दीपक उँजियारो, जगमग जोति जगाई हो ॥३॥
साध संत मिलि कियो बसीठी[१], सतगुरु लगन लगाई हो ।
दरस परस पतिबरता पिव की, सिव घर सक्ति बसाई हो॥४
अमर सुहाग भाग उँजियारो, पूर्व प्रीति प्रगटाई हो ।
रोम रोम मन रस के बसि भइ, केसो पिय मन भाई हो॥५॥

(१) दूत या बिचैालिया का काम

॥ घट मठ ॥

धनि सो घरी धनि बार, जबहिं प्रभु पाइये ।
प्रगट प्रकास हजूर, दूर नहिं जाइये ॥ १ ॥
नहिं जाइ दूर हजूर साहिब, फूलि सब तन मैं रह्यो ।
अमर अछय सदा जुगन जुग, जक्त दीपक उगि रह्यो ॥२॥
निरखी दसव दिसि सर्ब सोभा, कोटि चंद सुहावनं ।
सदा निरभय गाज नित सुख, सोई केसो ध्यावनं ॥३॥
पूरन सर्ब निधान, जानि सोइ लीजिये ।
निर्मल निर्गुन कंत, ताहि चित दीजिये ॥ ४ ॥
दीजिये चित रीझि कै उत, बहुरि इतहिं न आइये ।
जहँ तेज पुंज अनंत सूरज, गगन मैं मठ छाइये ॥ ५ ॥
लये घट पट खोलि कै प्रभु, अगम गति तब गति करी ।
बढ़ा अधिक सुहाग केसो, बीछुरत नहिं इक घरी ॥६॥
अद्भुत भेष बनाय, अलेख मनाइये ।
निसु बासर करि प्रेम, तो कंठ लगाइये ॥ ७ ॥
लाइये घट छाड़ि कै मठ, उमँगि सोहं भरि रहो ।
बढ़ो अधिक सुहाग सुंदरि, अलख स्वामी रमि रहो ॥८॥
मिलो प्रभू अनूप उदै अति, सर्ब गति जा सैाँ भई ।
आदि अंत रु मध्य सोई, मिलि पिया केसो मई ॥ ९ ॥
फूलि रह्यो सब ठाँव, तो धरनि अकास मैँ ।
सो त्रिभुवन-पति नाथ, निरखि लयो आप मैँ ॥१०॥
निरखि आपु अघात नाहीँ, सकल सुख रस सानिये ।
पिवहि अमृत सुरति भर करि, संत बिरला जानिये ॥११॥

कोटि बिस्नु अनंत ब्रह्मा, सदा सिव जेहि ध्यावहीं ।
सोइ मिलो सहज सरूप केसो, अनँद मंगल गावहीं ॥१२॥

चरनदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४२]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

गुरु बिन और न जान, मान मेरो कहो ।
चरनदास उपदेस, बिचारत ही रहो ॥ १ ॥
बेद रूप गुरु होहिं, कि कथा सुनावहीं ।
पंडित को धरि रूप, कि अर्थ बतावहीं ॥ २ ॥
कलपबृच्छ गुरुदेव, मनोरथ सब सरैं ।
कामधेनु गुरुदेव, छुधा तृस्ना हरैं ॥ ३ ॥
गुरु ही सेस महेस, तोहि चेतन करैं ।
गुरु ब्रह्मा गुरु बिस्नु, होय खाली भरैं ॥ ४ ॥
गंगा सम गुरु होय, पाप सब धोवहीं ।
सूरज सम गुरु होय, तिमिर हरि[1] लेवहीं ॥ ५ ॥
गुरु ही को करु ध्यान, नाम गुरु को जपै ।
आपा दीजै भेंट, पुजन गुरु ही थपै ॥ ६ ॥
समरथ स्रो सुकदेव, कहा महिमा करौं ।
अस्तुति कही न जाय, सीस चरनन धरौं ॥ ७ ॥

(१) खींच ।

(२)

गुरु दूती[१] बिन है सखी, पीव न देखो जाय ।
भावै तुम जप तप करि देखौ, भावै तीरथ न्हाय ॥ १ ॥
पाँच सखी पच्चीस सहेली, अति चातुर अधिकाय ।
मोहिं अयानी जानि कै, मेरो बालम लियो लुकाय[२]॥२॥
बेद पुरान सबै जो ढूँढ़े, स्तुति सिमरित सब धाय ।
आन धर्म औ क्रिया कर्म सूँ, दीन्हो मोहिं भरमाय ॥३॥
भटकत भटकत जनमै हारी, चरन सखी गहे आय ।
सुकदेव साहिब किरपा करिकै, दीन्हो अलख लखाय॥४॥
देखत ही सब भ्रम भय भागे, सिर सूँ गई बलाय ।
चरनदास जब प्रीतम पायो, दरसन कियो अघाय ॥५॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

अनहद सबद अपार दूर सूँ दूर है ।
चेतन निर्मल सुद्ध दैह भरपूर है ॥ १ ॥
निःअच्छर है ताहि और निःकर्म है ।
परमातम तेहि मानि वही परब्रह्म है ॥ २ ॥
या के कीन्हे ध्यान होत है ब्रह्म हीं ।
धारै तेज अपार जाहिं सब भर्म हीं ॥ ३ ॥
या को छोड़ै नाहिं सदा रहै लीन हीं ।
यही जो अनहद सार जानि परबीन हीं ॥ ४ ॥

(२)

जब से अनहद घोर सुनी ।
इन्द्री थकित गलित मन हूवा, आसा सकल भुनी ॥१॥
घूमत नैन सिथिल भइ काया, अमल जु सुरत सनी ।
रोम रोम आनंद उपज करि, आलस सहज भनी ॥२॥

(१) बिचौलिया । (२) छिपाय ।

मतवारे ज्यौं सबद समाये, अंतर भींज कनी ।
करम भरम के बंधन छूटे, दुबिधा बिपति हनी ॥३॥
आपा बिसरि जक्त कूँ बिसरो, कित रहिं पाँच जनी ।
लोक भोग सुधि रही न कोई, भूले ज्ञान गुनी ॥४॥
हो तहँ लीन चरनहीं दासा, कहैं सुकदेव मुनी ।
ऐसा ध्यान भाग सूँ पैये, चढ़ि रहै सिखर अनी[1] ॥५॥

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे नर हरि का हेत न जाना ।
उपजाया सुमिरन के काजे, तैं कछु औरै ठाना ॥१॥
गर्भ माहिं जिन रच्छा कीन्ही, ह्याँ खाने कूँ दीन्हा ।
जठर अगिन सों राखि लियो है, अँग संपूरन कीन्हा ॥२॥
बाहर आय बहुत सुधि लीन्ही, दसन[2] बिना पय प्यायो ।
दाँत भये भोजन बहु भाँती, हित सों तोहिं खिलायो ॥३॥
और दिये सुख नाना बिधि के, समुझि देखु मन माहीं ।
भूलो फिरत महा गर्बायो, तू कछु जानत नाहीं ॥४॥
तुव कारन सब कछु प्रभु कीन्हो, तू कीन्हा निज काजा ।
जग ब्यौहार पगो ही डोलै, तोहि न आवै लाजा ॥५॥
अजहूँ चेत उलट हरि सौंही[3], जन्म सुफल करु भाई ।
चरनदास सुकदेव कहैं यौं, सुमिरन है सुखदाई ॥६॥

(२)

कछु मन तुम सुधि राखौ वा दिन की ।
जा दिन तेरी देह छुटैगी, ठौर बसौगे बन की ॥१॥
जिन के संग बहुत सुख कीन्हे, मुख ढकि ह्वैहैं न्यारे ।
जम का त्रास होय बहु भाँती, कौन छुटावनहारे ॥२॥

(१) नोक। (२) दाँत। (३) ओर, तरफ़।

देहरी लौं तेरी नारि चलैगी, बड़ी पौरि लौं माई ।
मरघट लौं सब बीर भतीजे, हंस अकेला जाई ॥३॥
द्रव्य गड़े अरु महल खड़े ही, पूत रहैं घर माहीं ।
जिन के काज पचे दिन राती, सो सँग चालत नाहीं॥४॥
देव पितर तेरे काम न आवैं, जिन की सेवा लावै ।
चरनदास सुकदेव कहत ह, हरि बिन मुक्ति न पावै॥५॥

(३)

अपना हरि बिन और न कोई ।
मातु पिता सुत बंधु कुटुँब सब, स्वारथ ही के होई ॥१॥
या काया कूँ भोग बहुत दै, मरदन करि करि धोई ।
सो भी छूटत नेक तनिक सी, संग न चाली वोई ॥२॥
घर की नारि बहुत ही प्यारी, तिन मैं नाहीं दोई[१] ।
जीवत कहती साथ चलूँगी, डरपन लागी सोई ॥३॥
जो कहिये यह द्रव्य आपनो, जिन उज्जल मति खोई।
आवत कष्ट रखत रखवारी, चलत प्रान ले जोई ॥४॥
या जग मैं कोइ हितू न दीखै, मैं समझाऊँ तोई ।
चरनदास सुकदेव कहैं यों, सुनि लीजै नर लोई ॥५॥

॥ बिरह ॥

(१)

सुधि बुधि सब गइ खोय री, मैं इश्क दिवानी ।
तलफत हूँ दिन रैन ज्यों, मछली बिन पानी ॥ १ ॥
बिन देखे मोहिं कल न परत है, देखत आँख सिरानी[२]।
सुधि आये हिय मैं दव[३] लागै, नैनन बरखत पानी ॥२॥
जैसे चकोर रटत चंदा को, जैसे पपिहा स्वाँती ।
ऐसे हम तलफत पिय दरसन, बिरह बिथा यहि भाँती ॥३॥

(१) एक जान दो क़ालिब। (२) सीतल हुई। (३) आग।

जब तें मीत बिछोहा हुआ, तब तें कछु न सुहानी ।
अंग अंग अकुलात सखी री, रोम रोम मुरझानी ॥४॥
बिन मनमोहन भवन अँधेरो, भरि भरि आवै छाती ।
चरनदास सुकदेव मिलावो, नैन भये सोहिं घाती[१] ॥५॥

(२)

हमारो नैना दरस पियासा हो ।
तन गयो सूखि हाय हिये बाढ़ी, जीवत हूँ वोहि आसा हो ॥१
बिछुरन थारो[२] मरन हमारो, मुख मैं चलै न ग्रासा[३] हो ।
नींद न आवै रैनि बिहावै, तारे गिनत अकासा हो ॥२॥
भये कठोर दरस नहिं जाने, तुम कूँ नेक न साँसा[४] हो ।
हमरो गति दिन दिन औरे ही, बिरह बियोग उदासा हो३
सुकदेव प्यारे मत रहु न्यारे, आनि करो उर बासा हो।
रनजीता[६] अपनो करि जानो, निज करि चरनन दासा हो॥४

(३)

मो बिरहिन की बात, हेली बिरहिन हो सोइ जानि है ।
नैन बिछोहा जानती, हेली बिरहै कीन्हो घात ॥ १ ॥
या तन कूँ बिरहा लगो, हेली ज्यौं घुन लागो काठ ।
निस दिन खाये जातु है, हेली देखूँ हरि की बाट ॥ २॥
हिरदे मैं पावक जरै, हेली तपि नैना भये लाल ।
आँसूँ पर आँसू गिरैं, हेली यही हमारो हाल ॥ ३ ॥
प्रीतम बिन कल ना परै, हेली कलकल[७] सब अकुलाहिं।
डिगी[८] पकूँ सत[९] ना रह्यो, हेली कब पिय पकरैं बाँहिं ॥४॥

(१) दुखदाई, जीवलेवा । (२) तेरा । (३) लुक़मा या कौर । (४) चितती है ।
(५) फुरसत । (६) चरनदासजी की मा बाप का रक्खा हुआ नाम । (७) व्याकुल ।
(८) गिरी । (९) सत्ता, बल ।

गुरु सुकदेव दया करैं, हेली मोहिं मिलावैं काल ।
चरनदास दुख सब भजैं, हेली सदा रहूँ पति नाल[1] ।।५।।

॥ प्रेम ॥

गुरु हमरे प्रेम पियायो हो ।
ता दिन तैं पलटो भयो, कुल गोत नसायो हो ॥ १ ॥
अमल चढ़ो गगनै लगो, अनहद मन छायो हो ।
तेज पुंज की सेज पै, प्रीतम गल लायो हो ॥ २ ॥
गये दिवाने देसड़े, आनँद दरसायो हो ।
सब किरिया सहजै छुटी, तप नेम भुलायो हो ॥ ३ ॥
त्रैगुन तैं ऊपर रहूँ, सुकदेव बसायो हो ।
चरनदास दिन रैन नहिं, तुरिया पद पायो हो ॥ ४ ॥

॥ बिनती ॥

पतित उधारन बिरद[2] तुम्हारो ।
जो यह बात साच है हरि जू, तौ तुम हम कूँ पार उतारो ॥१
बालपने औ तरुन अवस्था, और बुढ़ापे माहीं ।
हम से भई सभी तुम जानौ, तुम से नेक छिपानी नाहीं ॥२
अनगिन पाप भये मनमाने, नखसिख औगुन धारी ।
हिरिफिरि कै तुम सरनै आयौ, अब तुम को है लाज हमारी॥३
सुभ करमन को मारग छूटो, आलस निद्रा घेरो ।
एकहिं बात भली बनि आई, जग में कहायो तेरो चेरो ॥४
दीनदयाल कृपाल बिसंभर, स्री सुकदेव गुसाईं ।
जैसे और पतित घन[3] तारे, चरनदास की गहियो बाहीं ॥५

(२)

राखो जी लाज गरीब-निवाज ।
तुम बिन हमरे कौन सँवारै, सबही बिगरे काज ॥ १ ॥

(१) साथ । (२) कीर्त्ति, प्रण । (३) घने, अनेक ।

भक्त बछल हरि नाम कहावो, पतित उधारनहार ।
करो मनोरथ पूरन जन की, सीतल दृष्टि निहार ॥ २ ॥
तुम जहाज मैं काग तिहारो, तुम तजि अंत न जाउँ ।
जो तुम हरि जू मारि निकासो, और ठैार नहिं पाउँ ॥३॥
चरनदास प्रभु सरन तिहारी, जानत सब संसार ।
मेरी हँसी सो हँसी तुम्हारी, तुम हूँ देखु बिचार ॥४॥

॥ उपदेश ॥

सोई सोहागिल नारि, पिया मन भावई ।
अपने घर को छोड़ि, न पर घर जावई ॥ १ ॥
अपने पिय का भेद, न काहू दीजिये ।
तन मन सुरति लगाय के, सेवा कीजिये ॥ २ ॥
पति की अज्ञा चाल पाल, पिय को कहो ।
लाज लिये कुलवंत, जतन हीं सूँ रहो ॥ ३ ॥
धन धनि है जग माहिं, पुरुष बहु हित धरै ।
सब सूँ नायक[1] होय जो, सिर बर[2] को करै ॥ ४ ॥
पिय कूँ चाहो रूप, सिँगार बनाइये ।
पतिबरता कुल दोय मैं, सोभा पाइये ॥ ५ ॥
नौधा बस्तर पहिरि, दया रँग लाल है ।
भूखन बस्तर धारि, बिचित्तर बाल है ॥ ६ ॥
रंगमहल निर्दोष, वहँ झिलमिल नूर है ।
निरगुन सेज बिछाय, सभी करि दूर भै[3] ॥ ७ ॥
मंदिर दीपक बारि, बिन बाती घीव की ।
सुघर चतुर गुन रासि, लाड़िली पीव को ॥ ८ ॥
कहैं गुरू सुकदेव, योँ बालम मोहिये ।
चरनदास ले सखी, जो प्रेम समोइये ॥ ९ ॥

(१) बड़ी । (२) पति । (३) भय, डर ।

॥ ब्राह्मन ॥

ब्राह्मन सो जो ब्रह्म पिछानै, बाहर जाता भीतर आनै ॥१॥
पाँचौ बस करि झूँठ न भाखै, दया जनेऊ हिरदे राखै ॥२॥
आतम बिद्या पढ़ै पढ़ावै, परमातम का ध्यान लगावै ॥३॥
काम क्रोध मद लोभ न होई, चरनदास कहै ब्राह्मन सोई ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

बसंत

मेरे सतगुरु खेलत नित बसंत ।
जा की महिमा गावत साध संत ॥ १ ॥
ज्ञान बिबेक के फूले फूल ।
जहँ साखा जोग अरु भक्ति मूल ॥ २ ॥
प्रेम लता जहँ रही फूल ।
सत संगति सागर के कूल ॥ ३ ॥
जहँ धर्म उड़त है ज्योँ गुलाल ।
अरु चोवा चरचै निरचै बाल ॥ ४ ॥
जहँ सील छिमा को बरसै रंग ।
काम क्रोध को मान भंग ॥ ५ ॥
हरि चरचा जित है अनंत ।
सुनि मुक्त होत सब जीव जंत ॥ ६ ॥
आन धर्म सब जाहिँ खोय ।
राम नाम की जैजै होय ॥ ७ ॥
जहँ अपने पिय कूँ ढूँढ़ि लेव ।
अरु चरन कँवल मेँ सुरति देव ॥ ८ ॥
कहै चरनदास दुख दुंद जाहिँ ।
जब प्रीतम सुकदेव गहैँ बाँहिँ ॥ ९ ॥

बुल्ले शाह

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १५१]

॥ चितावनी ॥

(१)

अब तो जाग मुसाफ़र प्यारे, रैन घटी लटके सब तारे ॥टेक
आवागौन सराईं डेरे, साथ तयार मुसाफ़र तेरे ।
अजे[1] न सुन दा कूच नगारे ॥ १ ॥
करले आज करन दी वेला[2], बहुरि न होसी आवन तेरा।
साथ तेरा चल चल्ल पुकारे ॥ २ ॥
आपो अपने लाहे[3] दौड़ी, क्या सरधन क्या निरधन बौरी।
लाहा नाम तू लेहु सँभारे ॥ ३ ॥
बुल्ले सहु[4] दी पैरी परिये, गफ़लत छोड़ हीला[5] कुछ करिये।
मिरग जतन बिन खेत उजारे ॥ ४ ॥

(२)

माटी खुदी करैंदी यार ॥ टेक ॥
माटी जोड़ा माटी घोड़ा, माटी दा असवार ॥ १ ॥
माटी माटी नूँ मारन लागी, माटी दे हथियार ॥ २ ॥
जिस माटी पर बहुती माटी, तिस माटी हंकार ॥ ३ ॥
माटी बाग बगीचा माटी, माटी दी गुलजार ॥ ४ ॥
माटी माटी नूँ देखन आई, माटी दी बहार ॥ ५ ॥
हंस खेल फिर माटी होई, पैंदी[6] पाँव पसार ॥ ६ ॥
बुल्ले साह बुझारत[7] बूझी, लाह सिरों भोँ मार[8] ॥ ७ ॥

(१) अब भी । (२) समय, अवसर । (३) लाहा=लाभ । (४) ख़ाविन्द । (५) कोशिश, जतन । (६) पड़ जायगी । (७) बूझ । (८) सिर से बोझ [लाह] उतार कर ज़मीन [भोँ] पर पटक दिया ।

॥ बिरह ॥

कद मिलसी मैं बिरहोँ सताई नूँ ॥ टेक ॥

आप न आवे नाँ लिख भेजे, भट्ठि अजे ही लाई नूँ[1]॥१॥

तैं जेहा[2] कोइ होर[3] नाँ जाणा, मैं तनि सूल सवाई नूँ ॥२॥

रात दिनैं आराम न मैं नूँ, खावे बिरह कसाई नूँ ॥३॥

बुल्ले साह धृग[4] जीवन मेरा, जौं लग दरस दिखाई नूँ ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

घूँघट चक[5] प्यारे, हुन[6] सरमाँ केहियाँ रखियाँ वे[7] ॥टेक॥

प्रीत लगा के मन हर लीना, फिर तैं अपना दरस न दीना।

जहर पियाला आपे पीना, सी मैं अक्कलोँ कचियाँ वे[8] ॥१॥

जुलफ कुँडल ने घेरा पाया, बिसियर[9] हो के डंक चलाया।

तै नूँ देख तरस ना आया, मैं इसक तेरे ने पटियाँ वे[10] ॥२॥

प्रेम कटारी कस कर मारी, हुन मैं होइयाँ बेदल[11] भारी।

तैं ताँ सार[12] न लई हमारी, लाके खूनी अँखियाँ वे ॥३॥

दो नैनाँ दा तीर चलाया, मुझ आजिज[13] दे सीने लाया।

घायल करके मुक्ख छपाया, (तैनूँ) एह चोरियाँ किन दसियाँ[14] वे ॥४

मैं बंदी दा जे तू साईं, कदी तो आवीं फेरा पाँईं।

मिहर करीं ते मुख दिखलाईं, मैं काग उड़ाँदी थकियाँ वे॥५

बुल्ले साह मैं मुखोँ न बोलाँ, हर सूरत बिच तैनूँ टोलाँ[15]।

साईं लोकाँ भेद न खोलाँ, डर दी आख[16] न सकियाँ वे॥६

---

(१) व्यर्थ ऐसी प्रीत लगाई। (२) जैसा। (३) और। (४) धिक्कार है। (५) हटाओ। (६) अब। (७) हम से क्योँ शर्म करते हो। (८) मैं अनसमझ थी। (९) ज़हरीला फोड़ा, विच्छू। (१०) मैं तेरे इश्क़ में उजड़ गई। (११) अधीर। (१२) सुध, ख़बर। (१३) दीन। (१४) सिखलाया। (१५) ढूँढ़ा। (१६) बोल।

(२)

ओल्हे वह वह झाकी दा, हुन पड़दा किस तोँ राखीदा ॥टेक[1]
जिस तन इसक दा जोर हुआ, वह बेखुद हो बेहोस हुआ।
वह क्योँकर रहे खमोस हुआ, जिन प्याला पीता साकी[2]दा१
तुसीँ आप असाँवल[3] आये हो,किस कोलोँ[4]भेद छपाये हो।
किते[5] आदम[6] पीर[7] बन आये हो, विच पड़दा रखिया खाकी[8] दा ॥२॥
तुसीँ आपे कहँदे सारे हो, तुसीँ आपे कहँदे न्यारे हो ।
तुसीँ आपे लई नजारे हो, किते ला ला नैन झमाकी दा ॥३॥[9]
तू ना कर इतना झेड़ा है, तुझ बाझोँ दूजा केहड़ा है ।
असाँ देख्या बड़ा अँधेरा है, अपने आप नूँ दूजा आखी दा॥४॥[10]
किते रूमी हो किते सामी हो, तुसीँ आपने आप तमामी[11]हो
किते साहिब किते सलामी[12] हो, कीन्हूँ खोटा खरा सुलाकी[13] दा॥५
मनसूर नूँ सूली चाढ़ा है, साह सम्मस पोस उतारा है[14]।
हुन मिसकीनाँ वल आया है, कुछ लेखा रहँदा बाकी दा[15]॥६
बुल्ले इस तन दी तू भाठी कर, बाल हड्डुाँ नूँ काठी कर[16]।
ज्ञान अगन सोँ ताती कर,फिर तिस पर मधुआ[17]चाखीदा७

---

(१) छिप कर [ओल्हे] बैठे बैठे [वह वह] दर्शन देते हैा अब किस से परदा रखते हो। (२) शराब पिलाने वाला अर्थात प्रीतम । (३) अपने से। (४) से। (५) कहीँ। (६) बड़े । (७) गुरू। (८) मिट्टी अर्थात तन। (९) तुम्हीँ आप सब मेँ बोलते हो और तुम्हीँ अलग बोलते हो, तुम्हीँ आप झमकड़ा मार कर दर्शन देते हो। (१०) तू इतना झगड़ा मत कर हमेँ तेरे बिन [बाझो] दूसरा [दूजा] कौन [केहड़ा] है, पर हम घोर अंधकार मेँ पड़े हुए हैँ कि अपने को तुझ से न्यारा समझते ह । (११) समस्त। (१२) सलाम करने वाले। (१३) टाँकी दिया हुआ सिक्का। (१४) शम्स तबरेज़ जिन्होँ-ने अपनी खाल [पोस] आप उतार दी थी। (१५) अब हम आधीन की ओर [वल] बाक़ी हिसाब चुकाने को आया है। (१६) हड्डियोँ की लकड़ी [काठी] की तरह जला [बाल] दे। (१७) शराब।

(३)

मन अटक्या बेपरवाहे नाल ॥ टेक ॥

नैन फँसे दिल मिलया लोड़े, मूरख लोक असानूँ मोड़े।
मेरा हर दम जाँदा आहे नाल ॥ १ ॥[१]

मुल्लाँ काजी नमाज पढ़ावन, हुक्म सरा दा भय दिखलावन।
साडे इसक नूँ की सरा दे नाल ॥ २ ॥[२]

नदियोँ पार सजन दा ठाना, कीते कैाल जरूरी जाना।
कुछ करले सलाह मलाहे नाल ॥ ३ ॥[३]

आसिक सोई जेहड़ा[४] इसक कमावे, जित वल[५] प्यारा उते वल जावे।
बुल्ले साह जा मिल तू अलाहे[६] नाल ॥४॥

॥ उपदेश ॥

टुक बूझ कवन छप आया है।

इक नुकते मैँ जो फेर पड़ा, तब ऐन गैन[७] का नाम धरा।
जब मुरसद नुक़ता दूर किया, तब ऐनोँ ऐन[८] कहाया है॥१॥
तुसीँ इलम किताबाँ पढ़दे हो, केहे उलटे माने[९] करदे हो।
बेमूजब ऐवेँ लड़दे हो, केहा[१०] उलटा बेद पढ़ाया है ॥२॥
दुई दूर करो कोई सोर नहीँ, हिंदु तुरक कोइ होर[११] नहीँ।
सब साधु लखो कोइ चोर नहीँ, घट घट मैँ आप समाया है३

(१) मेरी आँखेँ प्रीतम से लग गई हैँ और दिल मिलने को तरसता है, मूरख लोग बरजते हैँ [मोड़े] पर मेरी हर साँस आह के साथ निकलती है। (२) क़ाज़ी मुल्ला नमाज़ पढ़ने को कहते हैँ और शरअ् [मुसलमानोँ के कर्मकांड] के हुक्म का डर दिखलाते हैँ लेकिन हमारे इश्क़ के शरअ् की क्या परवाह है। (३) हमारे प्रीतम का स्थान [ठाना] भवसागर के पार है उसको बचन दिया है कि ज़रूर आऊँगा तो अब केवट अर्थात सतगुरु से सलाह करले। (४) जो। (५) तरफ़। (६) अल्लाह के। (७) फ़ारसी हर्फ़ोँ मैँ ऐन [ع] पर एक नुक़ता लगा देने से ग़ैन [غ] हो जाता है। (८) आँख। (९) अर्थ। (१०) किसने। (११) और, न्यारे न्यारे।

ना मैं मुल्ला ना मैं काजी, ना मैं सुन्नी ना मैं हाजी ।
बुल्ले साह नाल लाई[1] बाजी, अनहद सबद बजाया है ॥४॥

सहजो बाई

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी-संग्रह भाग १ पृष्ठ १५४]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

हमारे गुरु पूरन दातार ।
अभय दान दीनन को दीन्हे, किये भवजल पार ॥ १ ॥
जन्म जन्म के बंधन काटे, जम की बंध निवार ।
रंक हुते सो राजा कीन्हे, हरि धन दियौ अपार ॥ २ ॥
देवैं ज्ञान भक्ति पुनि देवैं, जोग बतावनहार ।
तन मन बचन सकल सुखदाई, हिरदे बुधि उँजियार ॥३॥
सब दुख-गंजन पातक-भंजन, रंजन ध्यान बिचार ।
साजन दुर्जन जो चलि आवै, एकहि दृष्टि निहार ॥ ४ ॥
आनँद रूप सरूप-मई है, लिप्त नहीं संसार ।
चरनदास गुरु सहजो केरे, नमो नमो बारम्बार ॥ ५ ॥

(२)

राम तजूँ पै गुरु न बिसारूँ, गुरु के सम हरि कूँ न निहारूँ ॥१
हरि ने जन्म दियो जग माहीं, गुरु ने आवागवन छुटाहीं ॥२
हरि ने पाँच चोर दिये साथा, गुरु ने लई छुटाय अनाथा ॥३
हरि ने कुटँब जाल मैं गेरी, गुरु ने काटी ममता बेरी[2] ॥४
हरि ने रोग भोग उरझायौ, गुरु जोगी करि सबै छुटायौ ॥५
हरि ने कर्म भर्म भरमायौ, गुरु ने आतम रूप लखायौ ॥६

---

(१) लगाई । (२) बेड़ी ।

हरि ने मो सूँ आप छिपायौ, गुरु दीपक दै ताहि दिखायौ॥७
फिर हरि बंध-मुक्ति[१] गति लाये, गुरु ने सबही भर्म मिटायेद
चरनदास पर तन मन वारूँ, गुरु न तजूँ हरि कूँ तजि डारूँ॥९

॥ चितावनी ॥

(१)

पानी का सा बुलबुला, यह तन ऐसा होय ।
पीव मिलन की ठानिये, रहिये ना पड़ि सोय ॥
रहिये ना पड़ि सोइ, बहुरि नहिँ मनुखा देही ।
आपन ही कूँ खोजु, मिलै तब राम सनेही ॥
हरि कूँ भूले जो फिरैं, सहजो जीवन छार ।
सुखिया जब ही होयगो, सुमिरैगो करतार ॥

(२)

चौरासी भुगती घनी, बहुत सही जम मार ।
भरमि फिरे तिहुँ लोक मैं, तहू न मानी हार ॥
तहू न मानी हार, मुक्ति की चाह न कीन्ही ।
हीरा दैही पाइ, मोल माटी के दीन्ही ॥
मूरख नर समुझै नहीं, समुझाया बहु बार ।
चरनदास कहैं सहजिया, सुमिरै ना करतार ॥

॥ प्रेम ॥

मुकट लटक अटकी मन माहीं ।
निरतत[२] नटवर मदन मनोहर, कुंडल झलक पलक बिथुराई१
नाक बुलाक हलत मुक्ताहल, होठ मटक गति भौंह चलाई ।
ठुमक ठुमक पग धरत धरनि पर, बाँह उठाय करत चतुराई२
झुनक झुनक नूपुर झनकारत, तताथेई थेई रीझ रिझाई ।
चरनदास सहजो हिये अंतर, भवन करौ जित रहौ सदाई३

---

(१) ऐसी मुक्ति जिसमें झीनी माया का बंधन लगा रहता है। (२) नाचते हैं।

॥ विनय ॥

(१)

अब तुम अपनी ओर निहारो ।

हमरे औगुन पै नहिं जावो, तुमहीं अपनी बिरद सम्हारो१
जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, वेद पुरानन गाई ।
पतित-उधारन नाम तुम्हारो, यह सुन के मन दृढ़ता आई२
मैं अजान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी ।
मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हौ किरपाल दयालहि स्वामी३
हाथ जोरि के अरज करत हैं, अपनाओ गहि बाँहीं ।
द्वार तिहारे आय परी हौं, पौरुष गुन मो मैं कछु नाहीं ४
चरनदास सहजिया तेरी, दरसन की निधि पाऊँ ।
लगन लगी और प्रान अड़े हैं, तुम को छोड़ि कहो कित जाऊँ५

(२)

हम बालक तुम माय हमारी, पल पल माहिं करो रखवारी १
निस दिन गोदी ही मैं राखो, इत वित बचन चितावन भाखो२
बिषै ओर जाने नहिं देवो, ढुरि ढुरि जाउँ तो गहि गहि लेवो३
मैं अनजान कछू नहिं जानूँ, बुरी भली को नहिं पहिचानूँ४
जैसी तैसी तुमहीं चीन्हेव, गुरु ह्वै ध्यान खिलौना दीन्हेव५
तुम्हरी रच्छा ही से जीऊँ, नाम तुम्हारो अमृत पीऊँ ॥६
दिष्टि तिहारी ऊपर मेरे, सदा रहूँ मैं सरनै तेरे ॥७॥
मारौ झिड़कौ तौ नहिं जाऊँ, सरकि सरकि तुमहीं पै आऊँ८
चरनदास है सहजो दासी, हो रच्छक पूरन अबिनासी॥९

॥ उपदेश ॥

सो बसंत नहिं बार बार । तैं पाई मानुष देह सार ॥१॥
यह औसर बिरथा न खोव । भक्ति बीज हिये धरती बोव२
सतसंगत को सींच नीर । सतगुरु जी सों करौ सीर॥३॥

नीकी बार बिचार देव । परन राखि या कूँ जु सेव ॥४॥
रखवारी करू हेत हेत । जब तेरी होवै जैत जैत ॥५॥
खोट कपट पंछी उड़ाव । मोह प्यास सबही जलाव ॥६॥
सँभलै बाड़ी नऊ अंग । प्रेम फूल फुलै रंग रंग ॥७॥
पुहुप गूँध माला बनाव । आदि पुरुष कूँ जा चढ़ाव ॥८॥
तौ सहजो बाई चरनदास । तेरे मन की पुरवैं सकल आस९

दया बाई

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १६७]

गुरु बिन ज्ञान ध्यान नहिँ होवै ।
गुरु बिन चौरासी मग जोवै ॥ १ ॥
गुरु बिन राम भक्ति नहिँ जागै ।
गुरु बिन असुभ कर्म नहिँ त्यागै ॥ २ ॥
गुरु ही दीन-दयाल गुसाईं ।
गुरु सरनै जो कोई जाईं ॥ ३ ॥
पलटैं करैं काग सूँ हंसा ।
मन को मेटत हैं सब संसा ॥ ४ ॥
गुरु हैं सब देवन के देवा ।
गुरु को कोउ न जानत भेवा ॥ ५ ॥
करुना-सागर कृपा-निधाना ।
गुरु हैं ब्रह्म रूप भगवाना ॥ ६ ॥
दै उपदेस करैं भ्रम नासा ।
"दया" देत सुख-सागर बासा ॥ ७ ॥

गुरु को अहि निसि[1] ध्यान जो करिये ।
विधिवत सेवा मैं अनुसरिये[2] ॥ ८ ॥
तन मन सूँ अज्ञा मैं रहिये ।
गुरु अज्ञा बिन कछू न करिये ॥ ९ ॥

गरीबदास जी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १८१]

—:०:—

॥ चितावनी ॥

(१)

सुनिये संत सुजान, गरब नहिँ करना रे ॥ टेक ॥
चार दिनाँ की चिहर[3] बनी है, आखिर तो कूँ मरना रे॥१
तू जाने मेरि ऐसी निभेगी, हर दम लेखा भरना रे ॥२॥
खाय ले पी ले बिलस ले हंसा, जोरि जोरि नहिँ धरना रे ॥३
दास गरीब सकल मैं साहिब, नहीँ किसी सूँ अड़ना रे॥४

अरिल

(२)

मरदाने मरि जाहिँ मनी पर मार है ।
ऐसा महल अनूप पलक मैं छार है ॥ १ ॥
जोरा[4] बुरी बलाय जीव जग भूँच[5] है ।
पलक पहर छिन माहिँ नगारा कूँच है ॥ २ ॥
सुरत सोहंगम नेस पेस है बावरे ।
बदी बिदारो[6] बेग धनी कूँ ध्याव रे ॥ ३ ॥

---

(१) दिन रात। (२) लगिये। (३) चिड़ियों के किलोल की जगह जो साँझ पड़े बसेरे को उड़ जाती ह। (४) जुल्म। (५) गँवार। (६) फाड़ डालो. नाश करो।

दम को डोरा खोज दरीबा[१] खूब है ।
अगर दीप सतलोक अजब महबूब है ॥ ४ ॥
सुता[२] पुत्र गृह नारि छार सब गात रे ।
का सूँ लाया नेह संग नहिं साथ रे ॥ ५ ॥
हंस अकेला जाय हिरंबर हेत रे ।
सबद हमारा मान नाम निज चेत रे ॥ ६ ॥
कोतल घोड़े पीनस[३] रथ सँग पालकी ।
गज गैबर[४] दल ठाठ निसानी काल की ॥ ७ ॥
हक हलाल पहिचान बदी कर दूर रे ।
यह मुरगी रब रूह गऊ क्या सूर[५] रे ॥ ८ ॥
तीतर चिड़ी बटेर भखे हलवान रे ।
मुल्ला बाँग पुकार अलह रहमान रे ॥ ९ ॥
रमजानी रमजान घास चोखा दिया ।
पकड़ पछाड़ी रूह कहो यह क्या किया ॥ १० ॥
खूनी खून मँझार खाल क्यूँ काढ़ता ।
देखै रब रहमान गला क्यूँ बाढ़ता[६] ॥ ११ ॥
ऐसे बूड़े नाव होत हैं गरक रे ।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब नाम निज परख रे ॥१२

अरिल
(३)

यह सौदा सतभाय[७] करो परभात रे ।
तन मन रतन अमोल बटाऊ[८] साथ रे ॥ १ ॥
बिछुर जायँगे मीत मता सुन लीजिये ।
बहुर न मेला होय कहो क्या कीजिये ॥ २ ॥

(१) झोपड़ा । (२) बेटी । (३) एक तरह की छोटी पालकी । (४) हाथियों का झुंड । (५) सूअर । (६) काटता । (७) सत्त भाव । (८) डाकू ।

सील सँतोष बिबेक दया के धाम हैं ।
ज्ञान रतन गुलजार सँघाती राम हैं ॥ ३ ॥
धरम धजा फरकंत फरहरै लोक रे ।
ता मध अजपा नाम सु सैादा रोक[१] रे ॥ ४ ॥
चलै बनिजवा[२] ऊठ[३] हूँठ गढ़ छाड़ रे ।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब लगै जम डाँड़ रे ॥५॥

॥ बेहद ॥

अरिल छंद

(१)

बिना मूल अस्थूल, गगन में रमि रहा ।
कोई न जाने भेव, सकल सब भ्रमि रहा ॥ १ ॥
अछै बृच्छ बिस्तार, अपार अजोख है ।
नहीं गाम नहिं धाम, भुक्त नहिं मोख है ॥ २ ॥
छत्र सिंघासन सेत, पुरुष का रूप है ।
बरन अबरन बिचार, न छाया धूप है ॥ ३ ॥
देख पदम उँजियार, परख नहिं आवहीं ।
करम लिखा सो होय, टरै नहिं भावही[४] ॥ ४ ॥
अबिगत पूरन ब्रह्म, परम परवान रे ।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब, सबद पहिचान रे ॥५॥

॥ विनय ॥

दीन के दयाल, भक्ति बिर्द[५] दीजिये ।
खानाजाद गुलाम, अपन कर लीजिये ॥ १ ॥
खानाजाद गुलाम, तुम्हारा है सही ।
मिहरबान महबूब, जुगन जुग पत रही ॥ २ ॥

(१) नक़्द दाम से मिलने का । (२) बंजारा, प्राण । (३) उठना । (४) भावी=होनहार । (५) साख, बरदान ।

बाँदी-जाद[1] गुलाम, गुलाम गुलाम है ।
खड़ा रहै दरबार, सु आठो जाम है ॥ ३ ॥
सेवक तलबदार[2], तुम्हरे दर कूकहीं ।
औगुन अनँत अपार, परी मोहिं चूक हीं ॥ ४ ॥
मैं घर का बन्दाजादा, अरज मेरि मानिये ।
कहता दास गरीब, अपन कर जानिये ॥ ५ ॥

॥ साध महिमा ॥

सोई साध अगाध है, आपा न सरावै[3] ।
पर-निंदा नहिं संचरै, चुगली नहिं खावै ॥ १ ॥
काम क्रोध त्रिस्ना नहीं, आसा नहिं राखै ।
साचे सूँ परचा भया, जब कूड़ न भाखै ॥ २ ॥
एकै नजर निरंजना, सबही घट देखै ।
ऊँच नीच अंतर नहीं, सब एकै पेखै ॥ ३ ॥
सोई साध सिरोमनी, जप तप उपकारी ।
भूले कूँ उपदेस दे, दुर्लभ संसारी ॥ ४ ॥
अकल[4] यकीन पठाय दे, भूले कूँ चेतै ।
सो साधू संसार मैं, हम बिरले भैंटे ॥ ५ ॥
सूतक[5] खोवै सत कहै, साचे सूँ लावै ।
सो साधू संसार मैं, हम बिरले पावै ॥ ६ ॥
निरख निरख पग धरत हैं, जिव हिंसा नाहीं ।
चैारासी तारन तरन, आये जग माहीं ॥ ७ ॥
इस सैादे कूँ ऊतरे, सैादागर सोई ।
भरे जहाज उतारि दे, भैासागर लोई ॥ ८ ॥

(१) लैाँडी-बच्चा । (२) तनख़ाह पाने वाले । (३) सराहै । (४) बुद्धि ।
(५) अशुद्धता ।

भेष धरैं भागे फिरैं. बहु साखी सीखैं ।
जानैं नहीं बिबेक कूं, खर के ज्यूं रीकैं[१] ॥९॥
खास मुकामा दरस है, जो अरस रहंता ।
उनमुन मैं तारी लगी, जहँ अजप जपंता ॥१०॥
सुन्न महल अस्थान है, जहँ इस्थिर डेरा ।
दास गरीब सुभान[२] है, सत साहिब मेरा ॥११॥

॥ सारगहनी ॥

मन मगन भया जब क्या गावै ॥ टेक ॥
ये गुन इंद्री दमन करेगा, वस्तु अमोली सो पावै ॥१॥
तिरलोकी की इच्छा छाड़ै, जग मैं बिचरै निर्दावै ॥२॥
उलटी सुलटी निरति निरंतर, बाहर से भीतर लावै ॥३॥
अधर सिंघासन अविचल आसन, जहँवाँ सूरति ठहरावै॥४
त्रिकुटी महल मैं सेज बिछी है, द्वादस[३] अंदर छिप जावै ॥५॥
अजर अमर निज मूरत सूरत, ओअं सोहं दम ध्यावै ॥६॥
सकल मनोरथ पूरन साहिब, बहुरि नहीं भैाजल आवै ॥७॥
गरीबदास सतपुरुष बिदेही, साचा सतगुरु दरसावै ॥८॥

॥ उपदेश ॥

(१)

घट ही मैं चंद चकोरा साधो, घट ही चंद चकोरा ॥टेक॥
दामिनि दमकै घनहर[४] गरजै, बोलै दादुर मोरा ।
सतगुरु गस्ती गस्त फिरावै, फिरता ज्ञान ढँढोरा ॥१॥
अदली राज अदल बादसाही, पाँच पचीसो चोरा ।
चीन्हो सबद सिंध घर कीजै, होना गारतगोरा[५] ॥२॥

(१) यह नवीं कड़ी भगली साधू और भेष के लक्षण बतलाती है। (२) पवित्र। (३) द्वादस दल=कमल त्रिकुटी। (४) बादल। (५) नाश।

त्रिकुटी महल मैं आसन मारो, जहँ न चलै जम जोरा।
दास गरीब भक्ति के कीजो, हुआ जात है भोरा[१] ॥३॥

(२)

राम सुमिर राम सुमिर, राम सुमिर लै रे।
जम और जहान जीत, तीन लोक जै रे ॥१॥
इन्द्री अदालत चोर, पकड़ो मन अहि[२] रे।
अनहद टंकोर घोर, सुनै क्यूँ न बहिरे ॥२॥
सुरत निरत नाद बिंद, मन पवना गहि रे।
उनमुनी अलेल[३] रूप, निराकार लहि रे ॥३॥
धनुष[४] ध्यान मार बान[५], दुरजन से फहिरे[६]।
देखत के सीत कोट, भरम बुर्ज ढहि रे ॥४॥
साचे से प्रीत कीन, झूठा मन महि[७] रे।
कहत है गरीबदास, कुटिल बचन सहि रे ॥५॥

(३)

मग[८] पूछत हैँ परतीत नहीं, नादी[९] बादो[१०] झगड़ा ठानैं।
मुकता जुगता नहिं राह लहैं, नहिं साध असाध कूँ जानतहैं॥१
देवल जाहीं मसजिद माहीं, साहिब का सिरजा भानतहैं[११]।
पंडित काजी डोबी[१२] बाजी, नहिं नीर खीर[१३] कूँ छानत हैं २
चेतन का गल काटत हैं, धर पत्थर पाहन मानत हैं।
कहै दास गरीब निरास चले, धिरकार जनम नर लानत है॥३

॥ जाति पाँति भेद खंडन ॥

कैसे हिंदू तुरक कहाया। सबही एकै द्वारे आया ॥१॥
कैसे ब्राम्हन कैसे सूद्रं। एकै हाड़ चाम तन गूदं ॥२॥

---

(१) सबेरा। (२) साँप। (३) बेपरवाह। (४) कमान। (५) तीर। (६) दूर रहो, बचो। (७) मथ लो अर्थात छाछ की तरह अलग कर दो। (८) राह। (९) भेष। (१०) पंडित। (११) मालिक के पैदा किये हुए जीवोँ की हिंसा करते हैं। (१२) डुबा दी। (१३) दूध।

एकै बिंद एक भग द्वारा । एकै सब घट बोलनहारा ॥३॥
कौम छतीस एकही जाती । ब्रह्मबीज सब की उतपाती॥४
एकै कुल एकै परिवारा । ब्रह्मबीज का सकल पसारा ॥५॥
ऊँच नीच इस बिधि है लोई । कर्म कुकर्म कहावै दोई ॥६॥
गरीबदास जिन नाम पिछाना। ऊँच नीच पद ये परमाना॥७

गुलाल साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २०८]

॥ नाम ॥

नाम रस अमरा है भाई, कोउ साध संगति तेँ पाई ॥टेक॥
बिन घोटे बिन छाने पीवे, कौड़ी दाम न लाई ।
रंग रँगीले चढ़त रसीले, कबहीँ उतरि न जाई ॥ १ ॥
छके छकाये पगे पगाये, झूमि झूमि रस लाई ।
बिमल बिमल बानी गुन बोलै, अनुभव अमल चलाई ॥२॥
जहँ जहँ जावै थिर नहिँ आवै, खोल[1] अमल लै धाई ।
जल पत्थल पूजन करि मानत, फोकट गाढ़ बनाई[2] ॥३॥
गुरु परताप कृपा तेँ पावै, घट भरि प्याल[3] फिराई ।
कहै गुलाल मगन ह्वै बैठे, भगिहै हमरि बलाई ॥४॥

॥ अनहद शब्द ॥

रे मन नामहिँ सुमिरन करै ।
अजपा जाप हृदय लै लावो, पाँच पचीसो तीन मरै ॥१॥

(१) थोथा । (२) सँत मेँ गढ़ के बनाया है। (३) प्याला ।

अष्ट कमल मेँ जीव बसतु है, द्वादस मेँ गुरु दरस करै ।
सोरह ऊपर बानि उठतु है, दुइ दल अमी झरै ॥२॥
गंगा जमुना मिली सरसुती, पदुम झलक तहँ करै ।
पच्छिम दिसा है गगन मँडल मेँ, काल बली सोँ लरै ॥३॥
जम जीतो है परम पद पायो, जोती जगमग बरै ।
कह गुलाल सोइ पूरन साहिब, हर दम मुक्ति फरै ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

अबिगत जागल हो सजनी ।
खोजत खोजत सतगुरु पावल,
ताहि चरनवाँ चितवा लागल हो सजनी ॥टेक॥
साँझि समय उठि दीपक बारल,
कटल करमवा मनुवाँ पागल[१] हो सजनी ॥ १ ॥
चललि उबटि बाट छुटलि सकल घाट,
गरजि गगनवा अनहद बाजल हो सजनी ॥ २ ॥
गइली अलँदपुर भइली अगम सूर,
जिसली मैदनवाँ नेजवा गाड़ल हो सजनी ॥ ३ ॥
कहै गुलाल हम प्रभुजी पावल,
फरल लिलरवा पपवा भागल हो सजनी ॥ ४ ॥

(२)

जो पै कोई प्रेम को गाहक होई ।
त्याग करै जो मन की कामना, सीस दान दै सोई ॥१॥
और अमल की दर जो छोड़ै, आपु अपन गति जोई ।
हर दम हाजिर प्रेम पियाला, पुलकि पुलकि रस लेई ॥२॥

(१) पगा या लीन हुआ ।

जीव पीव महँ पीव जीव महँ, ज्ञानी बोलत सोई ।
सोई समन महँ हंस सबहन महँ, बूझत बिरला कोई ॥३॥
वा की गती कहा कोइ जानै, जो जिय साचा होई ।
कह गुलाल वे नाम समाने, भ्रम भूले नर लोई ॥४॥

(२)

आनँद बरखत बुन्द सुहावन ।
उमँगि उमँगि सतगुरु बर राजित, समय सुहावन भावन ॥१॥
चहूँ ओर घनघोर घटा आई, सुन्न भवन मन-भावन ।
तिलक तत्त बँदी पर झलकत, जगमग जोति जगावन ॥२॥
गुरु के चरन मन मगन भयो जब, त्रिमल विमल गुन गावन ।
कहै गुलाल प्रभु कृपा जाहि पर, हर दम भादों सावन ॥३॥

(४)

होली

सतगुरु सँग होरी खेलो, अनहद तूर बजाई ॥ टेक ॥
काया नगर मैं होरी खेलो, प्रेम कै परल धमारी ।
पाँच पचीस मिलि चाचरि गावहिं, प्रभुजी की बलिहारी॥१
सहज कै फाग पर्यो निस बासर, भरि छूटै पिचुकारी ।
नाद बिंदहीं गाँठि पर्यो जब, परलि परस्पर मारी ॥२॥
तारी दै दै भाँवरि नावहिं, एक तेँ एक पियारी ।
तत्त अबीर उड़ावत कर धरि, काहू कोउ न सँभारी ॥३॥
अब खेलो मन महा मगन है, तन मन सर्बस वारी ।
कह गुलाल हम प्रभु सँग खेलल, पूजलि आस हमारी ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

दीना-नाथ अनाथ यह, कछु पार न पावै ।
बरनौं कवनी जुक्ति से, कछु उक्ति न आवै ॥१॥

यह मन चंचल चोर है, निस बासर धावै ।
काम क्रोध मैं मिलि रह्यो, ईहै मन भावै ॥२॥
करुनामय किरपा करहु, चरनन चित लावै ।
सतसंगति सुख पाइ कै, निसु बासर गावै ॥३॥
अबकि बार यह अंध पर, कछु दाया कीजै ।
जन गुलाल बिनती करै, अपनो करि लीजै ॥४॥

(२)

प्रभुजी बरषा प्रेम निहारो ।
ऊठत बैठत छिन नहिं बीतत, याही रीति तुम्हारो ॥१॥
समय होय भा असमय होवै, भरत न लागत बारो ।
जैसे प्रीति किसान खेत सैाँ, तैसो है जन प्यारो ॥२॥
भक्त-बछल है बान तिहारो, गुन औगुन न बिचारो ।
जहँ जहँ जावँ नाम गुन गावत, जम के सोच निवारो॥३॥
सोवत जागत सरन धरम यह, पुलकित मनहिं बिचारो ।
कह गुलाल तुम ऐसो साहिब, देखत न्यारो न्यारो ॥४॥

॥ भेद ॥

(१)

उलटि देखो, घट मैँ जोति पसार ।
बिनु बाजे तहँ धुनि सब होवै, बिगसि कमल कचनार॥१॥
पैठि पताल सूर ससि बाँधैा, साधैा त्रिकुटी द्वार ।
गंग जमुन के वार पार बिच, भरतु है अमिय करार॥२॥
इँगला पिंगला सुखमन सोधो, बहत सिखर-मुख[१] धार ।
सुरति निरति ले बैठु गगन पर, सहज उठै झनकार ॥३॥

(१) ऊँचे की ओर।

सोहं डोरी मूल गहि बाँधो, मानिक बरत लिलार।
कह गुलाल सतगुरु बर पायो, भरो है मुक्ति भँडार ॥४॥

(२)
वसंत

मन मधुकर खेलत वसंत।
बाजत अनहद गति अनंत ॥ १ ॥
बिगसत कमल भयो गुंजार।
जोति जगामग करि पसार ॥ २ ॥
निरखि निरखि जिय भयो अनंद।
बाझल[१] मन तब परल फंद ॥ ३ ॥
लहरि लहरि बहै जोति धार।
चरन कमल मन मिलो हमार ॥ ४ ॥
आवै न जाइ मरै नहिँ जीव।
पुलकि पुलकि रस अमिय पीव ॥ ५ ॥
अगम अगोचर अलख नाथ।
देखत नैनन भयो सनाथ ॥ ६ ॥
कह गुलाल मोरी पुजलि आस।
जम ज़ीत्यो भयो जोति बास ॥ ७ ॥

॥ उपदेश ॥
(१)

हरि नाम न लेहु गँवारा हो।
काम क्रोध मेँ रटत फिरत है, कबहुँ न आप सँभारा हो ॥१॥
आपु अपन कै सुधि नहिँ जानहु, बहुत करत बिस्तारा हो।
नेम धरम ब्रत तिरथ करतु है, चैारासी बहु धारा हो ॥२॥
तस्कर[२] चोर बसहिँ घट भीतर, मूसहिँ सहन भँडारा हो।
सन्यासी बैरागी तपसी, मनुवाँ देत पछारा हो ॥३॥

(१) फँसा। (२) डाकू।

धंधा धोख रहत लपटाने, मोह रतो संसारा हो ।
कहै गुलाल सतगुरु बलिहारी, जग तैं भयो नियारा हो ॥४॥

(२)

अवधू निर्मल ज्ञान बिचारो ।
ब्रह्म रूप अखंडित पूरन, चौथे पद सों न्यारो ॥१॥
ना वह उपजै ना वह बिनसै, ना भरमै चौरासी ।
है सतगुरु सतपुरुष अकेला, अजर अमर अबिनासी ॥२॥
ना वा के बाप नहीं वा के माता, वा के मोह न माया ।
ना वा के जोग भोग वा के नाहीं, ना कहुँ जाय न आया ॥३॥
अद्भुत रूप अपार बिराजै, सदा रहै भरपूरा ।
कहै गुलाल सोई जन जानै, जाहि मिलै गुरु सूरा ॥४॥

(३)

मन तूँ हरि गुन काहे न गावै ।
ता तैं कोटिन जनम गँवावै ॥ १ ॥
घर मैं अमृत छोड़ि कै, फिरि फिरि मदिरा पावै ।
छोड़हु कुमति मूढ़ अब मानहु, बहुरि न ऐसो दावै ॥२॥
पाँच पचीस नगर के बासी, तिनहिं लिये सँग धावै ।
बिन पर उड़त रहै निसि बासर, ठौर ठिकान न आवै ॥३॥
जोगी जती तपी निर्बानी, कपि ज्यों बाँधि नचावै ।
सन्यासी बैरागी मौनी, धै धै नरक मिलावै ॥४॥
अबकी बार दाव है मेरो, छोड़ौं न राम दुहाई ।
जन गुलाल अवधूत फकीरा, राखों जँजीर भराई ॥५॥

॥ माया ॥

संतो कठिन अपरबल नारी ।
सबहीं बरलहि[१] भोग कियो है, अजहूँ कन्या क्वारी ॥१॥

(१) ब्याह करके।

जननी[1] है के सब जग पाला, बहु विधि दूध पियाई ।
सुंदर रूप सरूप सलोना, जोय[2] होइ जग खाई ॥२॥
मोह जाल सोँ सबहिं अरूझायो, जहँ तक है तन-धारी ।
काल सरूप प्रगट है नारी, इन कहँ चलहु सँभारी ॥३॥
ज्ञान ध्यान सब ही हरि लीन्हो, काहु न आप सँभारी ।
कहै गुलाल कोऊ कोउ उबरे, सतगुरु की बलिहारी ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

तत्त हिंडोलवा सतगुरु नावल तहवाँ मनुवाँ झूलत हमार॥टेक
बिनु डोरी बिनु खंभे पौढ़ल, आठ पहर झनकार ॥१॥
गावहु सखियाँ हिंडोलवा हो, अनुभौ मंगलचार ॥२॥
अब नहिँ अवना जवना हो, प्रेम पदारथ भइल निनार॥३
छुटल जगत कर झुलना हो, दास गुलाल मिलो है यार ॥४॥

भीखा साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २१०]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

मेरो हित सोइ जो गुरु ज्ञान सुनावै ॥ टेक ॥
दूजी दृष्टि दुष्ट सम लागै, मन उनमेख[3] बढ़ावै ।
आतम राम सूछम सरूप, केहि पटतर[4] दै समझावै ॥१॥
सबद प्रकास बिनाहिँ[5] जोग बिधि, जगमग जोति जगावै।
धन्य भाग ता चरन रेनु ले, भीखा सीस चढ़ावै ॥२॥

---

(१) मा । (२) स्त्री । (३) तरंग । (४) उपमा । (५) बग़ैर ।

कुंडलिया

(२)

जौ भल चाहो आपनो, तौ सतगुरु खोजहु जाइ ॥
सतगुरु खोजहु जाइ, जहाँ वै साहिब रहते ।
निसि दिन इहै बिचार, सदा हरि को गुन कहते ॥
समुझै बूझि बिचारि कै, तन मन लावै सेव ।
कृपा करहिँ तब रीझि कै, नाम देहिँ गुरुदेव ॥
भीखा बिछुरे जुगन के, पल महँ देहिँ मिलाइ ।
जौ भल चाहो आपनो, तौ सतगुरु खोजहु जाइ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

धुनि बजत गगन महँ बीना, जहँ आपु रास रस भीना ॥टेक
भेरी[१] ढोल संख सहनाई, ताल मृदंग नवीना ।
सुर जहँ बहुतै मैाज सहज उठि, परत है ताल प्रबीना ॥१॥
बाजत अनहद नाद गहागह, धुधुकि धुधुकि सुर झीना ।
अँगुरी फिरत तार सातहुँ पर, लय निकसत भिन भीना[२] ॥२
पाँच पचीस बजावत गावत, निर्त चारु[३] छबि दीन्हा ।
उघटत तननन धिृतां धिृतां, कोउ ताथेइ थेइ तत कीन्हा३
बाजत ताल तरँग बहु, मानो जंत्री जंत्र कर लीन्हा ।
सुनत सुनत जिव थकित भयो, मानो ह्वै गयो सबद अधीना४
गावत मधुर चढ़ाय उतारत, रुनझुन रुनझुन धीना[४] ।
कटि किंकिनि पगु नूपुर की छबि, सुरति निरति लैालीना ५
आदि सबद ओंकार उठतु है, अटुट रहत सब दीना[५] ।
लागी लगन निरंतर प्रभु सैाँ, भीखा जल मन भीना ॥६॥

---

(१) एक बाजे का नाम । (२) भिन्न भिन्न या भाँति भाँति की । (३) सुन्दर ।
(४) ताधिन ताधिन । (५) सब दिन यानी सदा एक रस रहता है ।

॥ चितावनी ॥

मन मानि ले तू कहल हमार ।
फिरि फिरि मानुष जनम न पैहौ, चौरासी औतार ॥टेक॥
पागा माया बिषै मिठाई, काम क्रोध रत सोई ।
सुर नर मुनि गन गंधर्ब कछु कछु, चाखत है सब कोई॥१॥
त्रिविधि ताप को फंद परो है, सूझत वार न पारा ।
काल कराल बसै निकटहिं, धरि मारि नर्क महँ डारा ॥२॥
संत साध मिलि हाट लगाये, सैादा नाम भराई ।
जो जा को अधिकार होत तिन, तैसी बस्तु मोलाई ॥३॥
सब भक्तन धन धाम सकल लै, सरनागति मैं डारा ।
समझो बूझि बिचारि उतारो, अपने सिर को भारा ॥४॥
जोग जुक्ति कै परचा पैहौ, सुरति निरति ठहराई ।
अर्ध उर्ध के मध्य निरंतर, अनहद धुनि घहराई ॥५॥
सुरति मगन परमारथ जागै, करम होहि जरि छारा, ।
ज्ञान ध्यान कै खानि खुलै जब, तब छूटै संसारा ॥६॥
भक्ति भाव कल्पद्रुम छाया, ताप रहै नहिं देई ।
चारि पदारथ अज्ञाकारी, पर[२] सोँ कबहिं न लेई ॥७॥
राम नाम फल मिलो जाहि को, प्रेम सुधा रस धारा ।
पुलकि पुलकि मन पान करो तुम, निस दिन बारम्बारा॥८॥
गुरु परताप कहाँ लगि बरनौं, उक्ती एक न आई ।
रसना जो कहिं होयँ सहसदस, उपमा गाइ न जाई ॥९॥

(१) राज। (२) पराया या दूसरा

आतम राम अखंडित आपै, निज साहिब बिस्तारा ।
भीखा सहज समाधी लावो, औसर इहै तुम्हारा ॥१०॥

॥ प्रेम ॥

(१)

प्रीति की यह रीति बखानौं ॥ टेक ॥
कितनौ दुख सुख परै दँह पर, चरन कमल कर ध्यानौ ॥१॥
हो चेतन्य बिचारि तजौ भ्रम, खाँड़ धूर जनि सानौ ॥२॥
जैसे चात्रिक स्वाँति बुन्द बिनु, प्रान समरपन ठानौ ॥३॥
भीखा जेहि तन राम भजन नहिं, काल रूप तेहि जानौ ॥४॥

(२)

कहा कोउ प्रेम बिसाहन[1], जाय ।
महँग बड़ा गथ[2] काम न आवै, सिर के मोल बिकाय ॥टेक॥
तन मन धन पहिले अरपन करि, जग के सुख न सुहाय ।
तजि आपा आपुहिं ह्वै जीवै, निज अनन्य[3] सुखदाय ॥१॥
यह केवल साधन को मत है, ज्यों गूँगे गुड़ खाय ।
जानहि भले कहै सो का सोँ, दिल की दिलहिं रहाय ॥२॥
बिनु पग नाच नैन बिनु देखै, बिन कर ताल बजाय ।
बिन सरवन धुनि सुनै बिबिधि बिधि, बिन रसना गुन गाय॥३॥
निर्गुन मेँ गुन क्याँकर कहियत, व्यापकता समुदाय[4] ।
जहँ नाहीं तहँ सब कछु दिखियत, अँधरन की कठिनाय॥४॥
अजपा जाप अकथ को कथनो, अलख लखन किन पाय ।
भीखा अविगत की गति न्यारी, मन बुधि चित न समाय॥५॥

(१) मोल लेना, ख़रीद करना । (२) सोच समझ । (३) बेमिलौनी, केवल ।
(४) सब जगह ।

॥ समरथ ॥

ए हरि मीत बड़े तुम राजा ।
व्यापक जहाँ तहाँ लगु तुम्हरे हुकुम बिना कहुँ सरै न काजा॥टेक
तिरगुन सूबा मौज बनाया, भिन्न भिन्न तहँ फौज रखाया ।
हय[1] गय[2] रथ सुखपाल बहूता, माया बढ़ी करै को कूता ।
कहत बनै नहिं अनघड़ साजा, ए हरि मीत० ॥ १ ॥
चारो दिसा कनात गड़ा है, असमान तंबू बिन चोब खड़ा है।
पानी अगिनि पवन है पायक, जो कछु काम सो करिबे लायक
अनहद ढोल दमामा बाजा, ए हरि मीत० ॥ २ ॥
तारागन पैदल समुदाई, अज्ञा ले तहँ तहँ चलि जाई ।
चाँद सूर निस बासर आई, आवत जात मसाल दिखाई।
ध्रुव कियो थीर अचल मन धाजा[3], ए हरि मीत० ॥३॥
सहजादा है मन बुधि काला, कीन्हेव सकल जगत पैमाला।
काल बड़ा उमराव है भारी, डरे सकल जहँ लग तन धारी ।
तुम्हरो दंड सकल सिर ताजा, ए हरि मीत० ॥ ४ ॥
सत्त सतोगुन मंत्र ढ़ुढ़ावा, ज्ञान आदि दे पुत्र बुलावा ।
अमल करहु तुम जग मेँ जाई, फेरहु केवल राम दुहाई ।
नाम प्रताप प्रकास को छाजा, ए हरि मीत० ॥ ५ ॥
चतुरंगिनि उज्जल दल देखा, जोग बिराग बिचार को लेखा।
छिमा सील संतोष को भाऊ, परमारथ स्वारथ नहिँ चाऊ।
स्वारथ-रत पर पारहु गाजा[4], ए हरि मीत० ॥ ६ ॥
रज गुन तम गुन कीन्ह्यो मेला, सबहीं भयो सतोगुन चेला।
हम तुम आइ कछू नहिँ कीन्हा, अज्ञाईस सीस पर लीन्हा।
मरत बहुत डेर आपु की लाजा, ए हरि मीत० ॥ ७ ॥

(१) घोड़ा। (२) हाथी। (३) ध्वजा, फरहरा। (४) जो स्वार्थी है उस पर बिजली गिराते हैं।

पठयौ काम क्रोध मद लोभा, जा तैं कीन्ह सकल तन छोभा।
केवल नाम भजै सो बाचै, नाहिं तै। और सकल मनकाचै।
भीखा तुम बिन कैान निवाजा[१], ए हरि मीत बड़े तुम राजा॥८॥

॥ बिनती ॥

(१)

प्रभु जी करहु अपनो चेर।
मैं तो सदा जनम को रिनिया[२], लेहु लिखि मोहिं केर॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह यह, करत सबहिन जेर।
सुर नर मुनि सब पचि पचि हारे, परे करम के फेर॥२॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, ऐसे ऐसे ढेर।
खोजत सहज समाधि लगाये, प्रभु को नाम न नेर॥३॥
अपरंपार अपार हैं साहिब, हैं अधीन तन हेर।
गुरु परताप साध की संगति, छुटे सो काल अहेर[३]॥४॥
त्राहि त्राहि सरनागत आयो, प्रभु दरवो[४] यहि बेर।
जन भीखा को उरिन कीजिये, अब कागद जिनि हेर॥५॥

(२)

अस करिये साहिब दाया॥ टेक॥

कृपा कटाच्छ होइ जेहि तैं प्रभु, छूटि जाय मन माया॥१॥
सोवत मोह निसा निस बासर, तुमहीं मोहिं जगाया॥२॥
जनमत मरत अनेक बार, तुम सतगुरु होय लखाया॥३॥
भीखा केवल एक रूप हरि, ब्यापक त्रिभुवन राया॥४॥

(३)

यार हो हँसि बोलहु मो सोँ, भरम गाँठि छूटै प्रभु तो सोँ॥१॥
पालन करि आये मो कहँ तुम, खाय जियाय कियो घर पोसो॥२॥

(१) दया या पर्वरिश करना। (२) क़रज़दार। (३) शिकार। (४) दया कीजिये।

बचन मेटि मैं कहीं गरज बसि, दरद्वंदप्रभुकरौनगोसो[१]॥३
हो करता करमन के दाता, आगे बुधि आवत नहिं होसो ॥४
तुम अंतरजामी सब जानो, भीखा कहा करहि अपसोसो॥५

(४)

मोहिं रांखो जी अपनी सरन ॥ टेक ॥
अपरम्पार पार नहिं तेरो, काह कहौं का करन ॥१॥
मन क्रम बचन आस इक तेरी, होउ जनम या मरन ॥२॥
अबिरल भक्ति के कारन तुम पर, ह्वै ब्राम्हन देउँ धरन[२] ॥३॥
जन भीखा अभिलाख इहै, नहिं चहौं मुक्ति गति तरन ॥४॥

॥ अद्वैत ॥

कवित

खुद एक भुम्मि[३] आहि, बासन[४] अनेक ताहि,
रचना बिचित्र रंग, गढ़ेउ कुम्हार है ।
नाम एक सोन आस[५], गहना ह्वै द्वैत भास,
कहूँ खरा खोँट रूप, हेमहिं[६] अधार है ॥
फेन बुदबुद अरु लहरि तरंग बहु,
एक जल जानि लीजै, मीठा कहूँ खार है ।
आतमा त्यौं एक जाते[७], भीखा कहै याहि मते,
ठग सरकार के, बटोही[८] सरकार के ॥

॥ साध महिमा ॥

भजन तैं उत्तम नाम फकीर ।
छिमा सील संतोष सरल चित, दरदवंद पर-पीर ॥टेक॥
कोमल गदगद गिरा[९] सुहावन, प्रेम सुधा रस छीर ।
अनहद नाद सदा फल पायो, भोग खाँड़ घृत खीर ॥१॥

---

(१) गुस्सा । (२) धरना । (३) मिट्टी । (४) बरतन । (५) असल । (६) सोना । (७) एक ही जाति की । (८) मुसाफ़िर । (९) बानी ।

ब्रह्म प्रकास को भेष बनायो, नाम मेखला चीर ।
चमकत नूर जहूर जगामग, ढाँके सकल सरीर ॥ २ ॥
रहनि अचल इस्थिर कर आसन, ज्ञान बुद्धि मति धीर।
देखत आतम राम उघारे, ज्यों दरपन मधि हीर ॥३॥
मोह नदी भ्रम भँवर कठिन है, पाप पुन्य दोउ तीर ।
हरि जन सहजे उतरि गये ज्यों, सूखे ताल को झीर[1] ॥४
जग परपंच करम बहुता है, जैसे पवन रु नीर ।
गुरु गम सबद समुद्रहिं जावे, परत भयो जल थीर ॥५॥
केलि करत जिय लहरि पिया सँग, मति बड़ गहिर गँभीर।
ताहि काहि पटतरो[2] दीजिये, जिन तन मन दियो सीर[3] ॥६
मन मतंग मतवार बड़ो है, सब ऊपर बल बीर ।
भीखा हीन मलीन ताहि को, छीन भयो जस जीर ॥७॥

॥ उपदेश ॥

(१)

मन तूँ राम से लौ लाव ।
त्यागि के परपंच माया, सकल जगहिँ नचाव ॥ १ ॥
साच की तू चाल गहि ले, झूठ कपट बहाव ।
रहनि सों लौ लीन ह्वै, गुरु-ज्ञान ध्यान जगाव ॥ २ ॥
जोग की यह सहज जुक्ति बिचार कै ठहराव ।
प्रेम प्रीति सोँ लागि के घट, सहजहीं सुख पाव ॥ ३ ॥
दृष्टि तैं आदृष्ट देखो, सुरति निरति बसाव ।
आतमा निर्धार निर्भौ, बानि[4] अनुभव गाव ॥ ४ ॥
अचल इस्थिर ब्रह्म सेवो, भाव चित अरुझाव ।
भीखा फिर नहिँ कबहुँ पैहौ, बहुरि ऐसो दाव ॥ ५ ॥

(१) छिछला पानी। (२) उपमा। (३) सिर अर्थात अहं। (४) बाणी।

॥ रेखता ॥

(२)

करो बिचार निर्धार[1] अवराधिये[2],
सहज समाधि मन लाव भाई ।
जब जक्त की आस तेँ होहु नीरास,
तब मोच्छ दरबार की खबरि पाई ॥
न तो भर्म अरु कर्म बिच मोग भटकन लग्यो,
जरा अरु मरन तन वृथा जाई ।
भीखा मानै नहीं कोटि उपदेस सठ,
थक्यो बेदांत जुग चारि गाई ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

अगह तुम्हरो न गहना है । अकह तुम कहा कहना है ॥१॥
सबद अरु ब्रह्म अधिकारी । चेतन तुम रूप तन धारी ॥२॥
अविगति तुम्हरी न गति पावै । कहाँ अस ज्ञान बुधि आवै ३
तुम्हरो कहिं वार नहिं पारा । केतो अनुमान करि हारा ॥४॥
अगम का गम कवन पावै । जहाँ नहिं चित्त मन जावै ॥५॥
प्रगट तुम गुप्त सब माहीँ । बियापक तुम कहाँ नाहीँ ॥६॥
सुनहु सब की कहहु सब से । देखहु सब को मिलो तन से ॥७॥
जहाँ लगि सकल है तुमहीँ । धोख यह बीच हम हमहीँ ॥८॥
छुटै जब तैँ व मैँ मेरा । तहाँ ठाकुर न कोउ चेरा ॥९॥
केवल सोइ आपु आपै है । दुइत सोइ जाय जा पै है ॥१०॥
उभै[3] हम एक है तुम हीं । हमैँ तुम्हैँ भेद कम कमहीँ ॥११॥
भीखा तजो भरम के ताईं । चीन्हो निज आपनो साईँ ॥१२॥

(१) निरंतर । (२) आराधना करो । (३) दो ।

(२)

कुंडलिया

जीव कहा सुख पावई बेमुख बहु घर माहिँ ॥
बेमुख बहु घर माहिँ एक तेँ एक अपर्बल ।
तेहू तेँ हैँ अधिक अधिक तेँ अधिक महाबल ॥
तेहि मेँ मन अरु पवन त्रिगुन के डोरि लगाई ।
बाँधे सब जग जाल छुटै कोऊ नाहिँ पाई ॥
जौ भीखा सुमिरै राम को तौ सकल अर्थ होइ जाहि।
जीव कहा सुख पावई बेमुख बहु घर माहिँ ॥

पलटू साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २१३]

॥ नाम ॥

अरिल

जो कोइ चाहै नाम तो नाम अनाम है ।
लिखन पढ़न मेँ नाहिँ निअच्छर काम है ॥
रूप कहीँ अनरूप पवन अनरेख ते ।
अरे हाँ पलटू गैब दृष्टि से संत नाम वह देखते ॥

॥ शब्द ॥

फूटि गया असमान सबद की धमक मेँ ।
लगी गगन मेँ आग सुरति की चमक मेँ ॥
सेसनाग औ कमठ लगे सब काँपने ।
अरे हाँ पलटू सहज समाधि कि दसा खबर नहिँ आपने ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

कहवाँ से जिव आये, कहवाँ समाने हो साधो ।
का देखि रहेउ भुलाय, कहाँ लिपटाने हो साधो ॥१॥

निर्गुन से जिव आये, सर्गुन समाने हो साधो ।
भूलि गये हरि नाम, माया लिपटाने हो साधो ॥२॥
जैसे तुरकी घोड़ खैंचि, लट बागा हो साधो ।
ऊँच सीस भये नीच, चुगन लागे कागा हो साधो ॥३॥
आठ काठ के पिंजरा, दस दरवाजा हो साधो ।
छिनिक निकसा प्रान, कौन दिसि भागा हो साधो ॥४॥
रोवन घर की नारि, केस लट खोले हो साधो ।
आज मँदिर भयो सून, कहाँ गये राजा हो साधो ॥५॥
आलहि[1] बाँस कटाइनि, डँड़िया फँदाइनि हो साधो ।
पाँच पचीस बराती, लेइ सब धाये हो साधो ॥६॥
तीरे दिहिन उतारि, सकल नहवावैं हो साधो ।
करि सोरहो सिंगार, सकल जुरि आये हो साधो ॥७॥
आलहि चँदन कटाइनि, घेरि घर छाइनि हो साधो ।
लोग कुटुम परिवार, दिहिनि पहुड़ाई[2] हो साधो ॥८॥
लाइ दिहिनि मुख आग, काठ करि भारा हो साधो ।
पुत्र लिये कर बाँस सीस गहि मारा हो साधो ॥९॥
चहुँ दिसि पवन झकोरै, तरवर डोलै हो साधो ।
सूझत वार न पार, कौन दिसि जाना हो साधो ॥१०॥
इहवाँ नाहिँ कोइ आपन, जे से मैं बोलौं हो साधो ।
जस पुरइनि[3] कर पात, अकेला मैं डोलौं हो साधो ॥११॥
बिष बोयोँ संसार अमृत, कस पावौं हो साधो ।
पुरब जनम करि पाप, दोस केहि लावौं हो साधो ॥१२॥
भौसागर की नदिया, पार कस जावौं हो साधो ।
गुरु बैठे मुख मोड़ि, मैं केहि गोहरावौं हो साधो ॥१३॥

---

(१) जल्दी । (२) लेटाया । (३) कोई ।

जेहि बैरिन कर मूल, ताहि हित मान्योँ हो साधो ।
पलटुदास गुरु ज्ञान सुनत, अलगान्योँ हो साधो ॥१४॥

(२)

कुंडलिया

खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार ॥
बीती जात बहार सम्बत लगने पर आया ।
लीजै डफ्फ बजाय सुभग मानुष तन पाया ॥
खेलो घूँघट खोलि लाज फागुन मैं नाहीं ।
जे कोउ करिहै लाज काज ना सुपनेहुँ माँहीं ॥
प्रेम की माट भराय सुरति की करु पिचुकारी ।
ज्ञान अबीर बनाय नाम की दीजै गारी ॥
पलटू रहना है नहीं सुपना यह संसार ।
खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार ॥

(३)

कुंडलिया

क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत ॥
चाला जात बसंत कंत ना घर मैं आये ।
धृग जीवन है तोर कंत बिन दिवस गँवाये ॥
गर्ब गुमानी नारि फिरै जोबन की माती ।
खसम रहा है रूठि नहीं तू पठवै पाती ॥
लगै न तेरो चित्त कंत को नाहिं मनावै ।
का पर करै सिँगार फूल की सेज बिछावै ॥
पलटू ऋतु भरि खेलि ले फिर पछितैहै अंत ।
क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत ॥

(४)

कुंडलिया

माया की चक्की चलै पासि गया संसार ॥
पीसि गया संसार बचै ना लाख बचावै ।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै ॥
काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसनहारे ।
निरगुन डारै झोंक[१] पकरि कै सबै निकारे ॥
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै ।
करम तवा मैं धारि सेंकि कै साबित होवै ॥
तृस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला ।
काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला ॥
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरै पार ।
माया की चक्की चलै पासि गया संसार ॥

॥ ध्यान ॥

कुंडलिया

कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥
सो ध्यानी परमान सुरत से अंडा सेवै ।
आपु रहै जल माहिँ सूखे मैँ अंडा देवै ॥
जस पनिहारी कलस भरे मारग मैँ आवै ।
कर छोड़े मुख वचन चित्त कलसा मैँ लावै ॥
फनि मनि धरै उतारि आप चरने को जावै ।
वह गाफिल ना पड़ै सुरत मनि माहिँ रहावै ॥
पलटू सब कारज करै सुरत रहै अलगान ।
कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥

(१) मुट्ठी मुट्ठी अनाज जो चक्की मैँ डालते हैँ ।

॥ बिरह ॥

जेकरे अँगने नौरँगिया, सो कैसे सोवै हो ।
लहर लहर बहु होय, सबद सुनि रोवै हो ॥१॥
जेकर पिय परदेस, नींद नहिं आवै हो ।
चौंकि चौंकि उठै जागि, सेज नहिं भावै हो ॥२॥
रैन दिवस मारै बान, पपीहा बोलै हो ।
पिय पिय लावै सोर, सवति होइ डोलै हो ॥३॥
बिरहिनि रहै अकेल, सो कैसे कै जीवै हो ।
जेकरे अमी कै चाह, जहर कस पीवै हो ॥४॥
अभरन देहु बहाय, बसन धै फारौ हो ।
पिय बिनु कैान सिंगार, सीस दै मारौ हो ॥५॥
भूख न लागै नींद, बिरह हिये करकै हो ।
माँग सेँदुर मसि पोछ[१], नैन जल ढरकै हो ॥६॥
का पर[२] करै सिंगार, सो काहि दिखावै हो ।
जेकर पिय परदेस, सो काहि रिझावै हो ॥७॥
रहै चरन चित लाइ, सोई धन आगर हो ।
पलटुदास कै सबद, बिरह कै सागर हो ॥८॥

॥ प्रेम ॥

(१)

गाँठि परी पिय बोले न हम से ॥ टेक ॥
निसि दिन जागौं मैं पिया की सेजिया ।
नैना अलसाने निकरि गे घर से ॥ १ ॥
जो मैं जनतिऊँ पिय रिसियैहैं ।
काहे के प्रीति लगैातिउँ अस ठग से ॥ २ ॥

(१) माँग का सेँदुर और आँख का काजल दोनों पोछ डाले जायँ। (२) किस के लिये।

अपने पिया के मैं बेगि मनैहौं ।
सो तकसीर होत प्रभु जन से ॥ ३ ॥
सुनि मृदु वचन पिया मुसुकाने ।
पलटूदास पिय मिले बड़े तप से ॥ ४ ॥

(२)

प्रेम बान जोगी मारल हो, कसकै हिया मोर ॥ टेक ॥
जोगिया कै लालि लालि अँखियाँ हो, जस कँवल कै फूल ।
हमरी सुरुख चुनरिया हो, दूनोँ भये तूल[1] ॥ १ ॥
जोगिया कै लेउँ मिर्गछलवा हो, आपन पट चीर ।
दूनौं कै सियब गुदरिया हो, होइ जाबै फकीर ॥ २ ॥
गगना मैं सिंगिया बजाइन्हि हो, ताकिन्हि मोरी ओर ।
चितवन में मन हरि लियो हो, जोगिया बड़ चोर ॥ ३ ॥
गंग जमुन के बिचवाँ हो, बहै झिरहिर नीर ।
तेहि ठैयाँ जोरल सनेहिया हो, हरि लै गयो पीर ॥ ४ ॥
जोगिया अमर मरै नहिं हो, पुजवल मोरी आस ।
करम लिखा बर पावल हो, गावै पलटूदास ॥ ५ ॥

(३)

कुंडलिया

जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देत है प्रान ॥
छोड़ि देत है प्रान जहाँ जल से बिलगावै ।
देइ दूध में डारि रहै ना प्रान गँवावै ॥
जा के। वही अहार ताहि को का लै दीजै ।
रहै ना कोटि उपाय और सुख नाना कीजै ॥

---

(१) तुल्य=बराबर ।

यह लीजै दृष्टान्त सकै सो लेइ बिचारी।
ऐसो करै सनेह ताहि की मैं बलिहारी॥
पलटू ऐसी प्रीति करु जल औ मीन समान।
जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देत है प्रान॥

(४)
कुंडलिया

मेरे तन तन लग गई पिय की मीठी बोल॥
पिय की मीठी बोल सुनत मैं भई दिवानी।
भँवर गुफा के बीच उठत है सोहं बानी॥
देखा पिय का रूप रूप मैं जाय समानी।
जब से भया मिलाप मिले पर ना अलगानी॥
प्रीति पुरानी रही लिया हमने पहिचानी।
मिली जोति मैं जोति सुहागिन सुरति समानी॥
पलटू सब्द के सुनत ही घूँघट डारा खोल।
मेरे तन तन लग गई पिय की मीठी बोल॥

(५)
कुंडलिया

मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कन्थ॥
जब से पाया कन्थ पन्थ सतगुरु बतलाया।
सतगुरु बड़े दयाल करी उन मो पर दाया॥
स्वस्ता[१] मन मैं आइ छुटी मेरी दुचिताई।
सोऊँ कन्थ के साथ अंग से अंग लगाई॥
अभ्यन्तर[२] जागी प्रीत निरन्तर कन्थ से लागी।
दरस परस के करत जगत की भ्रमना भागी॥
पलटू सतगुरु सब्द सुनि हृदय खुला है ग्रन्थ।
मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कन्थ॥

(१) शान्ति। (२) अंतर में।

(६)
कुंडलिया

सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ ॥
जरै पिया के साथ सोई है नारि सयानी ।
रहै चरन चित लाय एक से और न जानी ॥
जगत करै उपहास पिया का संग न छोड़ै ।
प्रेम की सेज बिछाय मेहर की चादर ओढ़ै ॥
ऐसी रहनी रहै तजै जो भोग बिलासा ।
मारै भूख पियास याद सँग चलती स्वासा ॥
रैन दिवस बेहोस पिया के रँग मेँ राती ।
तन की सुधि है नहीं पिया सँग बोलत जाती ॥
पलटू गुरु परसाद तेँ किया पिया को हाथ[१] ।
सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ ॥

(७)
कुंडलिया

आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ॥
जैसे चन्द चकोर पलक से टारत नाहीं ।
चुगै बिरह से आग रहै मन चन्दै माहीं ॥
फिरै जेही दिसि चन्द तेही दिसि को मुख फेरै ।
चन्दा जाय छिपाय आग के भीतर हेरै ॥
मधुकर तजै न पदम[२] जान से जाय बँधावै ।
दीपक मेँ ज्योँ पतँग प्रेम से प्रान गँवावै ॥
पलटू ऐसी प्रीति कर परधन चाहै चोर ।
आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ॥

---

(१) बस मेँ । (२) कँवल ।

(८)
कुंडलिया

सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं ॥
सहज आसिकी नाहिं खाँड़ खाने की नाहीं ।
झूठ आसिकी करै मुलुक में जूती खाही ॥
जीते जी मरि जाय करै ना तन की आसा ।
आसिक को दिन राति रहै सूली पर बासा ॥
मान बड़ाई खोय नींद भरि नाहीं सोना ।
तिल भरि रक्त न माँस नहीं आसिक को रोना ॥
पलटू बड़े बेकूफ वे आसिक होने जाहिं ।
सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं ॥

(९)
झूलना

साहिब के दास कहाय यारो,
जगत की आस न राखिये जी ।
समरथ स्वामी को जब पाया,
जगत से दीन न भाखिये जी ॥
साहिब के घर में कौन कमी,
किस बात को अंते आखिये जी ।
पलटू जो दुख सुख लाख परै,
वहि नाम सुधा रस चाखिये जी ॥

(१०)
झूलना

पहिले संसार से तोरि आवै,
तब बात पिया की पूछिये जी ।

तरवार दोय हैं म्यान एकै,
किस भाँति से वा में कीजिये जी ॥
मीठे प्याले को दूर करौ,
कडु प्रेम पियाला पीजिये जी ।
पलटू जब सीस उतारि धरै,
तब राह पिया की लीजिये जी ॥

॥ सूरमा ॥

समुझि बूझि रन चढ़ना साधो, खूब लड़ाई लड़ना है ॥टेक॥
दम दम कदम परै आगे को, पीछे नाहिं पछरना है ।
तिल तिल घाव लगै जो तन में, खेत सेती क्या टरना है ॥१॥
सवद खैंचि समसेर[1] जेर करि, उन पाँचो को धरना है ।
काम क्रोध मद लोभ कैद करि, मन कर ठौरै मरना है ॥२॥
खड़ा रहै मैदान के ऊपर, उनकी चोट सँभरना है ।
आठ पहर असवार सुरत पर, गाफिल नाहीं परना है ॥३॥
सीस दिहा साहिब के ऊपर, किसकी डेर अब डेरना है ।
पलटू बाना रुंड[2] के ऊपर, अब क्या दूसर करना है ॥४॥

॥ पतिव्रता ॥

कुंडलिया

पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन ॥
सब से रहै अधीन टहल वह सब की करती ।
सास ससुर औ भसुर ननद देवर से डेरती ॥
सब को पोषन करै सभन की सेज बिछावै ।
सब को लेइ सुताय, पास तब पिय के जावै ॥
सूतै पिय के पास सभन को राखै राजी ।
ऐसा भक्त जो होय ताहि की जीती बाजी ॥

(१) शब्द रूपी तलवार। (२) धड़।

पलटू बोलै मीठे बचन भजन मेँ है लौलीन।
पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन ॥

॥ साधु ॥

(१)

कुंडलिया

बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥
सन्तन किया बिचार ज्ञान का दीपक लीन्हा।
देवता तैंतिस कोटि नजर में सब को चीन्हा ॥
सब का खंडन किहा खोजि के तीन निकारा।
तीनोँ मेँ दुइ सही मुक्ति का एकै द्वारा ॥
हरि को लिहा निकारि बहुर तिन मंत्र बिचारा।
हरि हैँ गुन के बीच सन्त हैँ गुन से न्यारा ॥
पलटू प्रथमै सन्त जन दूजे हैँ करतार।
बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥

(२)

कुंडलिया

सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥
तैसे सीतल सन्त जगत की ताप बुझावैँ।
जो कोइ आवै जरत मधुर मुख बचन सुनावैँ ॥
धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी।
कोमल अति मृदु बैन बज्र को करते पानी ॥
रहन चलन मुसकान ज्ञान कै सुगँधि लगावैँ।
तीन ताप मिटि जाय संत के दरसन पावै ॥
पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरन्त।
सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥

(३)
कुंडलिया

संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥
जैसे सहत कपास नाय चरखा मैं ओटै ।
रूई धरि जब तुमै हाथ से दोउ निभोटै[१] ॥
रोम रोम अलगाय पकरि के धुनिया धूनी ।
पिउनो[२] नँह[३] दै कातिं सूत ले जुलहा बूनी ॥
धोबी भट्टी पर धरी कुन्दीगर मुँगरी मारी ।
दरजी टुक टुक[४] फारि जोरि के किया तयारी ॥
पर-स्वारथ के कारने दुख सहै पलटूदास ।
संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥

(४)
झूलना

सील सनेह सीतल बचन,
यही संतन की रीति है जी ।
सुनत बात के जुड़ाय जावै,
सब से करते वे प्रीति हैं जी ॥
चितवनि चलनि मुसकानि नवनि,
नहिं राग द्वेष हार जीत है जी ।
पलटू छिमा संतोष सरल,
तिन कै गावै स्रुति नीति[५] है जी ॥

(५)
झूलना

पूरब पुन्न भये परगट, सतसंगति के बीच परी ।
आनँद भये जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सुभ घरी ॥

(१) नोचै । (२) रुई की मोटी बत्ती जिस से सूत निकालते हैं । (३) नाखून ।
(४) टुकड़े टुकड़े । (५) एक लिपि में "नेत" है ।

दरसन करत त्रय ताप मिटे, बिन कौड़ी दाम मैं जाय तरी।
पलटू आवागवन छूटा, जब चरनन की रज सीस धरी ॥

॥ दुष्ट ॥

कुंडलिया

पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक ॥
सन असंत है एक काट के जल मैं सारै ।
कूँचै खैंचै खाल उपर से मुँगरा मारै ॥
तेकर बटि के भाँजि भाँजि कै बरतै रसरा ।
नर की बाँधै मुसुक बाँधते गउ औ बछरा ॥
अमरजाल फिर होय बझावै जलचर[१] जाई ।
खग मृग जीवा जंतु तेही में बहुत बझाई ॥
जिव दे जिव संतावते पलटू उनकी टेक ।
पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक ॥

॥ ज्ञान ॥

(१)

कुंडलिया

पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय ॥
आपुइ गई हिराय कवन अब कहै सँदेसा ।
जेकर पिय मैं ध्यान भई वह पिय के भेसा ॥
आगि माहिँ जो परै सोऊ अगनी ह्वै जावै ।
भृंगी कीट को भेँटि आपु सम लेइ बनावै ॥
सरिता बहि के गई सिंधु मैं रही समाई ।
सिव सक्ती के मिले नहीं फिर सक्ती आई ॥
पलटू दिवाल कहकहा[२] मत कोउ झाँकन जाय ।
पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय ॥

---

(१) जल के जीव। (२) एक दीवार कहानी की जिसका होना चीन देश में मशहूर है जिस पर चढ़ कर दूसरी ओर झाँकने से परिस्तान दीख पड़ता है और ऐसा हर्ष होता है कि हँसी के मारे देखनेवाला बेइख़्तियार होकर उधर कूद कर ग़ायब हो जाता है।

(२)

कुंडलिया

टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं ॥
ऐना टेढ़ा नाहिं टेढ़ को टेढ़ै सूझै ।
जो कोइ देखै सोझ ताहि को सोझै बूझै ॥
जा को कछु नहिं भेद भावना अपनी दरसै ।
जा को जैसी प्रीति सुरत सो तैसी परसै ॥
दुर्जन के दुर्बुद्धि पाप से अपने जरते ।
सज्जन के है सुमति सुमति से अपने तरते ॥
पलटू ऐना संत हैं सब देखै तेहि माहिं ।
टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं ॥

(३)

अरिल

पहिले हो बैराग भक्ति तब कीजिये ।
सतसंगति के जोग ज्ञान तब लीजिये ॥
ऐसे उपजै ज्ञान भक्ति को पाइ कै ।
अरे हाँ पलटू उपरै लीजै मारि ठीक ठहराइ कै ॥

(४)

कहिबे से क्या भया भाई, जब ज्ञान आपु से होइ ॥टेक॥
अललपच्छ को चेटुका,[१] वा को कौन करै उपदेस ।
उलटि मिलै परिवार मैं, वा से कौन कहै संदेस ॥ १ ॥
ज्यों सिसु[१] होत मराल[२] के, वा को कौन सिखावै ज्ञान ।
नीर कँहै अलगाइ कै, वह छीर करतु है पान ॥ २ ॥
सिंह कै बच्चा गिरि पर्यो, वह खेलत तुरत सिकार ।
वा को कौन सिखावई, वो हस्ती डारत मार ॥ ३ ॥

(१) बच्चा । (२) हंस ।

संत को कौन सिखावता, उन्ह अनुभव भा परकास।
सिखई बुधि केहि काम की, जो हृदय न पलटूदास ॥४॥

॥ सतसंग ॥

(१)

कुंडलिया

पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥
लोहा महँग बिकान छुए से कीमत निकरी।
चंदन के परसंग चँदन भई बन की लकरी ॥
जैसे तिल का तेल फूल सँग महँग बिकाई।
सतसंगति मैं पड़ा संत भा सदन कसाई ॥
गंग में है सुभगंग मिली जो नारा सोती।
सीप बीच जो पड़ै बूंद सो होवै मोती ॥
पलटू हरि के नाम से गनिका चढ़ी बिमान।
पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥

(२)

रेख़ता

बिना सतसंग ना कथा हरिनाम की,
बिना हरिनाम ना मोह भागै।
मोह भागे बिना मुक्ति ना मिलैगी,
मुक्ति बिनु नाहिं अनुराग लागै ॥
बिना अनुराग के भक्ति ना होयगी,
भक्ति बिनु प्रेम उर नाहिं जागै।
प्रेम बिनु राम ना राम बिनु संत ना,
पलटू सतसंग बरदान माँगै ॥

॥ गुप्त ॥

कुंडलिया

जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥
तिन तिन चले छिपाय प्रगट मैं होय हंरकृत ।
भीड़ भाड़ से डेरै भीड़ में नहीं बरक्कत ॥
धनी भया जब आप मिली हीरा की खानी ।
ठग है सब संसार जुगत से चलै अपानी ॥
जो ह्वै रहते गुप्त सदा वह मुक्ति में रहते ।
उन पर आवै खेद प्रगट जो सब से कहते ॥
पलटू कहिये उसी से जो तन मन दै लै जाय ।
जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥

॥ बैराग ॥

(१)

अरिल

आठ पहर की मार बिना तरवार की ।
चूके सो नहिं ठाँव लड़ाई धार की ॥
उस ही से यह बनै सिपाही लाग का ।
अरे हाँ पलटू पड़ै दाग पर दाग पंथ बैराग का ॥

(२)

काम क्रोध बसि किहा नींद औ भूख को ।
लोभ मोह बसि किहा दुक्ख औ सुक्ख को ॥
पल में कोस हजार जाय यह डोलता ।
अरे हाँ पलटू वह ना लागा हाथ जौन यह बोलता ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पड़ा रहु संत के द्वारे, बनत बनत बनि जाय ॥ टेक ॥
तन मन धन सब अरपन करिके, धक्के धनी के खाय ॥१॥

स्वान बिर्ते आवै सोइ पावै[१], रहै चरन लै लाय ॥२॥
मुरदा होय टरै नाहिँ टारे, लाख कहो समुझाय ॥३॥
पलटूदास काम बनि जावै, इतने पर ठहराय ॥४॥

(२)

कुंडलिया

काजर दिये से का भया ताकन के ढब नाहिँ ॥
ताकन के ढब नाहिँ ताकन की गति है न्यारी ।
इकटक लेवै ताकि सोई है पिय की प्यारी ॥
ताकै नैन मिरोरि नहीं चित अंतै टारै ।
बिन-ताके केहि काम लाख कोउ नैन सँवारै ॥
ताके मेँ है फेर फेर काजर मेँ नाहीं ।
भंगि[२] मिली जो नाहिँ नफा क्या जोग के माहीं ॥
पलटू सनकारत[३] रहा पिय के। खिन खिन माहिँ ।
काजर दिये से का भया ताकन के ढब नाहिँ ॥

(३)

रेख़ता

नाचना नाचु तो खोलि घूँघट कँहै[४],
खोलि के नाचु संसार देखै ।
खसम रिझाव तो ओट को छोड़ि दे,
भर्म संसार कैा दूरि फेकै ॥
लाज किसकी करै खसम से काम है,
नाचु भरि पेट फिर कैान छेकै ।
दास पलटू कहै तुहीं सोहागिनी,
सोव सुख सेज तू खसम एकै ॥

(१) खाय । (२) युक्ति । (३) इशारा करना । (४) को ।

(४)

रेख़ता

सुंदरी पिया की पिया को खोजती,
भई बेहोस तू पिया के कै।
बहुत सी पद्मिनी खोजती मरि गईं,
रटत ही पिया पिया एक एकै॥
सती सब होत हैं जरत बिनु आगि से,
कठिन कठोर वह नाहिं झाँकै।
दास पलटू कहै सीस उतारि के,
सीस पर नाचु जो पिया ताकै[१]॥

(५)

झूलना

केतिक जुग गये बीति माला के फेरते।
छाला परि गये जीभ राम के टेरते॥
माला दीजे डारि मनै को फेरना।
अरे हाँ पलटू मुँह के कहे न मिलै दिलै बिच हेरना॥

(६)

अरिल

जीवन है दिन चारि भजन करि लीजिये।
तन मन धन सब वारि संत पर दीजिये॥
संतहि से सब होइ जो चाहै सो करैं।
अरे हाँ पलटू संग लगे भगवान संत से वे डरैं॥

॥ दीनता ॥

(१)

कुंडलिया

दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान॥
भक्ति दई तेहि जान नाम पर पकड़ो मोकहँ।
गिरा परा धन पाय छिपायों मैं ले ओकहँ॥

(१) देखै।

लिखा रहा कुछ आन कर्म में दीन्हा आनै ।
जानौं महीं अकेल कोऊ दूसर नहिं जानै ॥
पाछे भा फिर चेत देय पर नाहीं लीन्हा ।
आखिर बड़े की चूक जोई निकसा सोई कीन्हा ॥
पलटू मैं पापी बड़ा भूल गया भगवान ।
दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान ॥

(२)
कुंडलिया

पतित-पावन बाना धस्यो तुमहिं परी है लाज ॥
तुमहिं परी है लाज बात यह हम ने बूझी ।
जब तुम बाना धस्यो नाहिं तब तुम कहँ सूझी ॥
अब तो तारे बनै नहीं तो बाना उतारो ।
फिर काहे को बड़ा बाच्च जो कहिके हारो ॥
आगहिं तुम गये चूक दोष नहिं दीजै मेरो ।
तुम यह जानत नाहिं पतित होइहैं बहुतेरो ॥
पलटू मैं तो पतित हैाँ कियो असुभ सब काज ।
पतित-पावन बाना धस्यो तुमहिं परी है लाज ॥

॥ दया ॥

(१)
अरिल

माता बालक कँहै राखती प्रान है ।
फनि मनि धरै उतारि ओही पर ध्यान है ॥
माली रच्छा करै सींचता पेड़ ज्यौं ।
अरे हाँ पलटू भक्त संग भगवान गऊ औ बच्छ त्यौं ॥

(२)
अरिल

कैान सकस करि जाय नाहिं कछु खबर है ।
बीच मैं सब के देइ बड़ा वह जबर है ॥

हरि धरि मेरो रूप करै सब काम है ।
अरे हाँ पलटू बीच मँहै इक नाम मोर बदनाम है ॥

॥ निन्दक ॥

(१)

कुंडलिया

निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥
काम हमारा होय बिना कौड़ी कौ चाकर ।
कमर बाँधि के फिरै करै तिहुँ लोक उजागर[१] ॥
उसे हमारी सोच पलक भर नाहिं बिसारी ।
लगी रहै दिन रात प्रेम से देता गारी ॥
भक्त कँहै दृढ़ करै जगत को भरम छुड़ावै ।
निन्दक गुरू हमार नाम से वही मिलावै ॥
सुनि के निन्दक मरि गया पलटू दिया है रोय ।
निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥

(२)

रेख़ता

देखि के निंदकहिँ करौँ परनाम मैँ,
धन्य महराज तुम भक्ति धोया ।
किहा निस्तार तुम आइ संसार मैँ,
भक्त के मैल बिनु दाम खोया ॥
भयो परसिद्ध परताप से आप के,
सकल संसार तुम सुजस बोया ।
दास पलटू कहै निंदक के मुए से,
भया अकाज मैँ बहुत रोया ॥

---

(१) रोशन, मशहूर ।

॥ तीर्थ ब्रत ॥

अरिल

तीरथ ब्रत मेँ फिरै बहुत चित लाइ कै ।
जल पखान को पूजि मुए पछिताइ कै ॥
बस्तु न बूझी जाइ अपाने हाथ मेँ ।
अरे हाँ पलटू जो कुछ मिलै सो मिलै संत के साथ मेँ ॥

॥ मंगल ॥

जनमिउँ दुख की राति, परिउँ भौसागर हो ।
सोइ गइउँ भ्रम माहिँ, कुमति के आगर हो ॥ १ ॥
सतगुरु दिहिनि जगाइ, उठिउँ अकुलाई हो ।
टूटि गइल भ्रम फंद, परम सुख पाई हो ॥ २ ॥
पिय को दिहिनि मिलाइ, हिये मोहिँ लीन्हा हो ।
अपनी दासी जानि, परम पद दीन्हा हो ॥ ३ ॥
सत्त सुकृति कै घैला[1], प्रेम कै लेजुर[2] हो ।
पनियाँ भरैँ डकोरि[3], माँग भरि सेँदुर हो ॥ ४ ॥
सासु मोरि सुतै गजओबरि[4], ननद मोरि अँगना हो ।
हम धन सूतैँ घवराहर[5], पिय सँग जगना हो ॥ ५ ॥
झिरिहिरि बहै बयारि, अमी रस ढरकै हो ।
वरमी[6] नौरँगिया कै डारि, चँदन गछ मरकै[6] हो ॥ ६ ॥
तेहि चढ़ि बोलै हंस, सबद सुनि बाउर हो ।
मंगल पलटूदास, जगति कै नाउर[7] हो ॥ ७ ॥

---

(१) घड़ा । (२) रस्सी । (३) पानी को झकझोर कर जिसमेँ खर कतवार हट जाय । (४) इतना वड़ा कमरा जिस के दरवाज़े मेँ से हाथी चला जाय । (५) ऊपर का कोठा । (६) झुकना । (७) नाऊ जिस के शुभ अवसरोँ पर

॥ मिश्रित ॥

(१)

कुंडलिया

बार बार बिनती करै, पलटूदास न लेइ ॥
पलटू दास न लेइ रहै कर जोरे ठाढ़ी ।
सरनागति मैं रहौं सरन बिनु लागै गाढ़ी[1] ॥
गोड़ दाबि मैं देउँ चरन धै सेवा करिहौं ।
चौका देइहौं लीपि बहुरि मैं पानी भरिहौं ॥
पैंड़ा देउँ बुहारि सबन के जूठ उठावौं ।
जनि दुरियावहु मोहिं रहै मैं इहवाँ पावौं ॥
मुक्ति रहै द्वारे खड़ी लट से झाड़ू देइ ।
बार बार बिनती करै पलटूदास न लेइ ॥

(२)

कुंडलिया

बनिया पूरा सोई है जो तौलै सतनाम ॥
जो तौलै सतनाम छिमा का टाट बिछावै ।
प्रेम तराजू करै बाट बिस्वास बनावै ॥
बिबेक की करै दुकान ज्ञान का लेना देना ।
गादी है संतोष नाम का मारै टेना ॥
लादै उलदै भजन बचन फिर मीठे बोलै ।
कुंजी लावै सुरत सबद का ताला खोलै ॥
पलटू जिसकी बनि परी उसी से मेरा काम ।
बनिया पूरा सोई है जो तौलै सतनाम ॥

---

(१) गाढ़=दुख ।

(३)
कुंडलिया

चिन्ता की लगी आग है जरै सकल संसार ॥
जरै सकल संसार जरत निरपति को देखा।
बादसाह उमराव जरत हैं सैयद सेखा ॥
सुर नर मुनि सब जरैं जती जोगी सन्यासी।
पंडित ज्ञानी चतुर जरैं कनफटा उदासी ॥
जंगम सेवरा जरैं जरैं नागा बैरागी।
कोउ न बचते आगि दुपहरी लागी आगी ॥
पलटू बचते संत जन जिन किया नाम आधार।
चिन्ता की लगी आग है जरै सकल संसार ॥

(४)
अरिल

सब भेँड़ी की राह चले हैं जूटि[१] के।
आसिक बीर अकेल चला है फूटि के ॥
उलटि के खेलै खेल भया मन मगन में।
अरे हाँ पलटू छुटा भुइँचपा जाय एक ठो गगन में ॥

(५)
अरिल

खाला[२] कै घर नाहिं भक्ति है नाम की।
दाल भात है नाहिं खाये के काम की ॥
साहिब का घर दूर सहज ना जानिये।
अरे हाँ पलटू गिरै तो चकनाचूर बचन को मानिये ॥

(६)
अरिल

माया ठगनी बड़ी ठगे यह जात है।
बचै न या से कोऊ लगी दिन रात है ॥
कौड़ी नाहीं संग करोरनि जोरि कै।
अरे हाँ पलटू गये हैं राजा रंक लँगोटो छोरि कै ॥

(१) झुंड के। (२) मौसी।

तुलसी साहिब (हाथरसवाले)

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २२६]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

कोइ सतगुरु देव री बताइ, चरन गहौं ताहि के ॥टेक॥
चहुँ दिसि ढूँढ़ि फिरी कोइ भेदी, पूछत हौं गुहराय।
उन से कहौं बिथा सब अपनी, केहि बिधि जीव जुड़ाय ॥१
जो कोइ सखी सुहागिनि होवै, कहै तन तपन बुझाय।
पिउ की खोलि खबर कहै मो से, मरौं री बिकल करि हाय ॥२
जो न्यामत दुनिया दौलत की, सो सब देउँ बहाय।
बारम्बार वारि तन डारौं, यह कहा मोल बिकाय ॥३॥
बिन स्वामी सिंगार सुहागिनि, लानत तोबा ताय।
पिय बिन सेज बिछावै ऐसी, नारि मरै बिष खाय ॥४॥
सतगुरु बिरहिनि बान कलेजे, रोवै और चिल्लाय।
हाय हाय हिय मैं निसि बासर, हर दम पीर पिराय ॥५॥
यहि झुंड मैं कोइ पाक पियारी, पिया दुलारी आहि[१]।
मैं दुखिया हौं दर्द दिवानी, प्रीतम दरस लखाय ॥६॥
तुलसी प्यास बुझै प्यारे से, चढ़ि घर अधर समाय।
किरपावंत संत समझावैं, और न लगै उपाय ॥ ७ ॥

(२)

जिनके हिरदे गुरु संत नहीं।
उन नर औतार लिया न लिया ॥ टेक ॥
सूरत बिमल बिकल नहिं जा के।
बहु बक ज्ञान किया न किया ॥ १ ॥

---

(१) है।

करम काल बस उद्र[१] निहारा ।
जग बिच मूढ़ जिया न जिया ॥ २ ॥
अगम राह रस रीति न जानी ।
बहु सतसंग किया न किया ॥ ३ ॥
नाम अमल घट घोँटि न पीया ।
अमल अनेक पिया न पिया ॥ ४ ॥
मोटे मात जात जिंदगी मेँ ।
सिर धरि पैर छुवा न छुवा ॥ ५ ॥
तुलसीदास साध नहिँ चीन्हा ।
तन मन धन न दिया न दिया ॥ ६ ॥

(३)
अरिल

संत मता है सार और सब जाल पसारा ।
परमहंस जग भेष बहे सब मन की लारा ॥
संत बिना नहिँ घाट बाट एको नहिँ पावै ।
अरे हाँरे तुलसी भटकि भटकि भ्रमखान संत बिन भव मेँ आवै॥

(४)
अरिल

भव जल अगम अथाह थाह नहिँ मिलै ठिकाना ।
सतगुरु केवट मिलै पार घर अपना जाना ॥
जग रचना जंजाल जीव माया ने घेरा ।
अरे हाँरे तुलसी लोभ मोह बस परे करैँ चैारासी फेरा ॥

॥ चितावनी ॥

(१)
रेख़ता

जगत मद मान मेँ माता । खुदी का खैाफ नहिँ लाता ॥
कजा सिर पर खड़ी द्वारे । फिरिस्ते तीर तकि मारे ॥१॥

---

(१) पेट ।

कमानी काल के हाथा । करै जम जीव की घाता ॥
पड़ा मगरूर[1] क्या सोवै । बहुर फिर सीस धरि रोवै ॥२॥
अगर योँ सोच अपने मैं । गये दिन बीत सुपने मैं ॥
बदन मट्टी पवन पानी । मलामत[2] हाड़ मिल सानी ॥३॥
गंदगी बीच अंदर मैं । बदन बदबोय मंदर मैं ॥
अरे नित क्या अन्हाता है । मैल मन का न जाता है ॥४॥
करेले नीम की भाई । कभी जावै न कड़वाई ॥
अरे दुरगंध का भाँड़ा । निरख कोइ संत ने छाड़ा ॥५॥
खलक दे। दिन तमासा योँ । परख पानी बतासा ज्यौं ॥
अगर योँ जान ज़िंदगानी । अबर ओला घुलै पानी ॥६॥
अवस[3] तन योँ बिनसता है । इधर घर का न रस्ता है ॥
मिर्ग की नाभि कस्तूरी । भटक ढूँढै जो बन मूरी ॥७॥
तेरा महबूब तेरे मैं । वस्तु गइ ढूँढ डेरे मैं ॥
सगुनिया संत से पावै । आप मैं आप दरसावै ॥८॥
करै सतसंग मन टूटै । मलामत बुद्धि की छूटै ॥
गुरू मिल मैल कूँ काढ़ै । ज्ञान की उग्रता[4] बाढ़ै ॥ ९ ॥
सुरत जब सीलता पावै । गगन की राह चढ़ जावै ॥
होय पति प्रीति निरधारा । मिलै तुलसी पदम प्यारा ॥१०॥

(२)

क्या सोवत गाफिल चेत, सिर पर काल खड़ा ॥टेक॥
जोर जुलम की रीति बिचारी, करि माया से हेत ।
जम की जबर खबर नहिं जानी, बाँधि नरक दुख देत ॥१॥
बिनसै बदन अगिन बिच जारैं, खीर खाँड रस लेत ।
फिरि फिरि काल कमान चढ़ावै, मार लेत खुल खेत ॥२॥

(१) अहंकारी । (२) गंदगी । (३) व्यर्थ । (४) तेज़ो ।

बिष रस रंग संग बहु कीन्हा, करि करि बैस बितेत[१] ।
बृद्ध बनाय बूढ़ तन भइया, कारे केस सपेद ॥३॥
सुत दारा आदर अलसाने, बुढ़वा मरै परेत ।
छलबल माया करि गई रे, या दुनिया के हेत ॥४॥
मनी मान से धनी न चीन्हा, चिड़िया चुगि गइ खेत ।
तुलसी चरन सरन सतगुरु बिन, ग्रासत रवि जस केत ॥५॥

॥ विरह ॥

(१)

सखी मोहिं नींद न आवै री । एरी बैरन बिरह जगावै ॥१
सूनी सेज पिया बिन व्याकुल । पीर सतावै री ॥२॥
रैन न चैन दिवस दुख ब्यापै । जग नहिं भावै री ॥३॥
तलफत बदन बिना सुख सइयाँ । सब जरि जावै री ॥४॥
बिषधर[२] लहर डसै नागिन सी । ज्यौं जस खावै री ॥५॥
देवै मौत दई बिरहन को । होते मरि जावै री ॥६॥
कैफ[३] बिना तुलसी तन सूखै । जिय तरसावै री ॥७॥

(२)

पी की मोहिं लहर उठत खुटत रैन नाहीं ।
कहा कहूँ करमन की रेख हिये की दरदाई ॥ १ ॥
अँखियाँ ढुर ढुरत नीर सखियाँ सुख नाहीं ।
पपिहा पिउ पिउ के बोल खोलत खिसियाई ॥ २ ॥
जियरा जरजर पिरात रात रटत साईं ।
लाई सुति चरन सरन हित चित चिन्हवाई ॥ ३ ॥
मेरे मन की मुराद साध संगत चाही ।
खोजै खुल खुल बिसेष लेखै अपनाई ॥ ४ ॥

(१) ख़तम । (२) साँप । (३) नशा ।

तुलसी तत मत विलास पास प्रेम छाई ।
पाई घर धधक धीर रमक सी जनाई ॥ ५ ॥

(३)

मेरे दरद की पीर कसक किस से मैं कहूँ ॥ टेक ॥
ऐसा हकीम होय जोई जान दे दहूँ ।
खटकै कलेजे बीच बान तोर से सहूँ ॥ १ ॥
घायल की समझ सूर चूर घाव मैं रहूँ ।
हीये हवाल हाल गला काटि के लहूँ ॥ २ ॥
जैसे तड़पती मीन नीर पीर ज्यों सहूँ ।
जैसे चकोर चंद चाह चित्त से चहूँ ॥ ३ ॥
सोची सुबह और साम पिया धाम कस गहूँ ।
तुलसी बिना मिलाप छुरी मार मर रहूँ ॥ ४ ॥

(४)

प्यारी पिया पीर खली आधी रतियाँ ॥ टेक ॥
सोवत समझ उठी अपने मैं । क्या कहुँ बरनि बिपतियाँ ॥१
चोली बन्द बदन बिच खटकै । उमँग उमँग फटै छतियाँ ॥२
रोवत रैन चैन नहिं चित मैं । क्रूर करम की बतियाँ ॥३
तुलसी देस ऐस बिन पिय के । सोच लिखूँ कित पतियाँ ॥४

(५)

सावन

पिय बिन सावन सुख नहीं, हिये बिच उठत हिलोर ।
बोल बचन भावै नहीं, तन मन तड़पि अतोल ॥ १ ॥
पिय बिन बिरहन बावरी, जिय जस कसकत हूल ।
सूल उठै पति पीर की, धन संपत सुख धूल ॥ २ ॥
इत बैरी बदरा भये, गरजि घुमरि घनघोर ।
घुमरि घुमरि घर द्वार मैं, कूकै दादुर मोर ॥ ३ ॥

बीज कड़क कस कस करूँ, सुधि बुधि रहत न हाथ ।
साथ मिलै पिया पंथ के, मारग चलूँ दिन रात ॥४॥
सुरति निरति डोरी करूँ, मन मत खंभ गड़ाइ ।
लै की लहर उपर मिली, झूली सुरति चढ़ाइ ॥ ५ ॥
ये सावन तुलसी कहै, खोजे सतसँग माहिँ ।
गाइ गवन सज्जन करै, बूझै सत मति पाइ ॥ ६ ॥

(६)

सावन

पिया बिन बिरहन बावरी, दई[१] दुख दियो री कठोर ।
मोरि खबर सुधि ना लई, ज्योँ बिन चंद चकोर ॥ १ ॥
चकवा चकई बिछोह की, बरनूँ कौन बयान ।
नदिया पार चकवा रहै, चकई वार मिलाप ॥ २ ॥
रैन बिलग सुनती हती, मोरे हिये बरतत आज ।
बिलग पिय से मरिबो भलो, यह दुख सह्यो न जात ॥३॥
सब सिँगार फीका लगै, पिय बिन कछु न सुहाइ ।
हाय हाय तलफत रहूँ, कहो केहि जाइ सुनाइ ॥ ४ ॥
लोग बटाऊ री बिदेस के, नहिँ पर पीर पीछान ।
चरन बिना चहुँ दिसि फिरी, नहिँ कछु जियरा जुड़ान ॥५॥
कल्प[२] कल्प कलपत भये, जुग जुग जोवत बाट ।
कोइ री सुहागिनि ना मिली, पूछूँ पिया घर घाट ॥६॥
नर तन नगर डगर मिलै, कहँ सब संत सुजान ।
फिरि पसु पंछिन मेँ नहीँ, जड़वत[३] जीव भुलान ॥ ७ ॥

(१) दैव, ईश्वर । (२) ब्रह्मा का एक दिन जो एक हज़ार युग या ४३ करोड़ बीस लाख बरस के बराबर होता है और जिस के बीतने पर समस्त सृष्टि का ब्रह्मांड सहित नाश हो जाता है । (३) जड़ खान मेँ ।

बिन सतगुरु ब्याकुल हिये, जियरा धरत न धीर ।
पीर पिया बिन को हरै, तुलसी गगन गँभीर ॥ ८ ॥

(७)

ब्याकुल बिरह दिवानी, झड़ै नित नैनन पानी ॥ टेक ॥
हर दम पीर पिया की खटकै, सुधि बुधि बदन हिरानी ॥१॥
होस हवास नहीं कुछ तन मैं, बेदम जीव भुलानी ॥२॥
बहु तरंग चित चेतन नाहीं, मन मुरदे की बानी ॥३॥
नाड़ी बैद बिथा नहिं जानै, क्योंं औषद दे आनी ॥४॥
हिये मैं दाग जिगर के अंदर, क्या कहि दरद बखानी ॥५॥
सतगुरु बैद बिथा पहिचानैं, बूटी है उनकी जानी ॥६॥
तुलसी यह रोग रोगिया बूझै, जिस को पीर पिरानी ॥७॥

(८)

प्रीतम पीर पिरानी, दरद कोइ बिरले जानी ॥ टेक ॥
डसत भुवंग चढ़त सनननन, जहर लहर लहरानी ॥१॥
घनन घनन घन्नाटी आवै, भावै अन्न न पानी ॥२॥
भँवर चक्र की उठत घुमेरैं, फिरै दसो दिसि आनी ॥३॥
अंदर हाल बिहाल हलावत, दुरगम प्रीति निभानी ॥४॥
आसिक इसक इसक आसिक से, करना मौत निसानी ॥५॥
मुरदा ह्वै करि खाक मिली अब, जब पट अमर लिखानी ॥६॥
पिय को रोग सोग तन मन मैं, सतगुरु सुधि अलगानी ॥७॥
तुलसी यह मारग मुस्किल का, धड़ बिन सीस बिकानी ॥८॥

॥ विनय ॥

कुंडलिया

बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥
सतगुरु चरन निवास बास मोहिं दीन्ह लखाई ।
नित नित करूँ बिलास पास घर अपने आई ॥

मैं अति पत मत हीन दीन देखा मोहिं साईं ।
लीन्हा अंग लगाय कहूँ अस कौन बड़ाई ॥
तुलसी मैं अति हीन हूँ दीन्हा अगम अवास ।
बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥

॥ भेद ॥

(१)

रेख़ता

पैठ मन पैठ दरियाव दर आप में ।
कँवल बिच भ्फाज[१] में कमठ राजै ॥
होत जहँ सोर घनघोर घट में लखै ।
निरख मन मौज अनहद्द बाजै ॥
गगन की गिरा पर सुरत से सैल कर ।
चढ़ै तिल तोड़ घर अगम साजै ॥
दास तुलसी कहै पच्छिम के द्वार पर ।
साहिब घर अद्भुत बिराजै ॥

(२)

कुंडलिया

सुत चढ़ि गई अकास मैं सोर भया ब्रह्मंड ॥
सोर भया ब्रह्मंड अंड मैं धधक चढ़ाई ।
जब फूटा असमान गगन मैं सहज समाई ॥
सुन्न सहर के बीच ब्रह्म से भया मिलापा ।
परमातम पद लेख देख कर भया हुलासा ॥
तुलसी गति मति लखि पड़ी निरखि लखा सब अंड ।
सुत चढ़ि गई अकास मैं सोर भया ब्रह्मंड ॥

(१) जहाज ।

॥ उपदेश ॥

होली

कैसे जल भरत गगरिया, तेरी भौंजी न नेक अँगुरिया ॥टेक

सतगुरु घाट गई बिन जाने, पैरी न चीन्ह पकरिया ।

सागर थाह अथाह अगम को, कोइ भर नहिं जात अनरिया॥१

सासु ननद के अनँद पिया मोरे, डारेंगे फोड़ गगरिया ।

रीती[1] जाति फिरी बिन पानी, मानत नाहिं बहुरिया ॥२॥

सासू ससुर जेठ जुलमाई, साईं ने सोल सँवरिया ।

बीतत दिवस रही अब रजनी, खुलत न प्रेम किवरिया ॥३॥

तुलसी ताव दाव यहि औसर, पिय सँग पैठ नगरिया ।

सूरति साज सजो नभ मंदर, अंदर बीच डगरिया ॥४॥

॥ मूर्त्ति पूजा ॥

(१)

सवैया

नर को यही ठाठ बैराट बनो ।

अस स्रीमत[2] मैं कह्यो ब्यास बखाना ॥ १ ॥

दुतिया असकंध मैं बूझ बिचारि ।

नहीं कह्यो पूजन काठ पषाना ॥ २ ॥

गीता मैं भाखि कहो भगवान ।

सो धरम तजा जिन मोहिं पिछाना ॥ ३ ॥

पूरन ब्रह्म बेदांत कहे ।

तुहो आप अपनपौ आप भुलाना ॥ ४ ॥

पाहन पूजत जन्म गयो ।

कछु सूझि परी नहिं लाभ न हाना ॥ ५ ॥

आसा जाइ बसे जड़ मैं ।

जब अंत समय जेहि माहिं समाना ॥ ६ ॥

(१) खाली । (२) भागवत ।

बेद की प्रीति की रीति करी ।
कर्म कांड रचे भव जन्म सिराना ॥ ७ ॥
यह तत ज्ञान कहै तुलसी ।
तैं पत्थर में परमेसुर जाना ॥ ८ ॥

(२)

तन के तत मंदर को देखौ जाई ।
आतम सा देव जाहि पूजौ भाई ॥
पाहन की मूरत का झूठ पसारा ।
तुलसी पूजै बेहोस जन्म बिगारा ॥

॥ निन्दा ॥

(१)

रेख़ता

निंद्या साध संत को नित्त करै,
काला मुँह कर काल घुमावता है ॥
जुग जुग नरक की खानि पड़ै,
जम जाल जँजीर फिर पावता है ॥
तुलसी कुबास बेहाल मरै,
दर हाल का स्वाल कहावता है ॥

(२)

कवित्त

साध संत से उपाध रहत बेसवा[१] के साथ ।
बड़े कुटिल हैं कुपाथ चलैं पंथ ना निहारि के ॥ १ ॥
कर्मन के मैले और बिष रस के पेले ।
सो ऐसे हरामखोर दोजख में परत हैं ॥ २ ॥
देखत के नीके और करनी के फीके ।
सो काढ़ि काढ़ि टोके उपद्रव के खड़े हैं ॥ ३ ॥

---

(१) कसबी ।

खोट मोट मानी आठो गाँठ के हरामी ।
सो ऐसे कुटिल कामी काम राग हू मेँ भरे हैँ ॥ ४ ॥
देखत के ज्ञानी कूर खान की निसानी ।
अधम ऐसे अभिमानी सो जानि हानि करत हैँ ॥ ५ ॥
साचे संसार लार संतन से फेर फार ।
तुलसी मुख परत छार[१] छली छिद्र भरे हैँ ॥ ६ ॥

अरिल

इंद्री रस सुख स्वाद बाद ले जन्म बिगारा ।
जिभ्या रस बस काज पेट भया बिष्टा सारा ॥
टुक जीवन के काज लाज मन मेँ नहिँ आवै ।
अरे हाँरे तुलसी काल खड़ा सिर उपर घड़ी घड़ियाल बजावै ॥

॥ ब्राह्मण ॥

कुंडलिया

जग जग कहते जुग भये जगा न एकौ बार ॥
जगा न एकौ बार सार कहो कैसे पावै ।
सोवत जुग जुग भये संत बिन कैान जगावै ॥
पड़े भरम के माहिँ बंद से कौन छुड़ावै ।
जो कोइ कहै बिबेक ताहि की नेक न भावै ॥
तुलसी पंडित भेष से सब भूला संसार ।
जग जग कहते जुग भये जगा न एकौ बार ॥

॥ बारहमासा लावनी ॥

आली असाढ़ के मास बिरह उठि बादल घहराने ।
चहुँ दिस चमकै बीज बिकल पिया के बिन हैराने ॥
खबर बिन धीरज नहिँ आवै ।
तन मन बदन बेहाल बिपति मेँ नहिँ कोइ कुछ भावै ॥

---

(१) धूल ।

कहूँ नहिं दिल दारुन अटकै ।
हर दम पिय की पीर दरस बिन मन मोरा भटकै ॥ १ ॥
सखि सावन के मास सोक मैं सुन्दर घबरानी ।
रिमझिम बरसै मेघ मोर दादुर की सुन बानी ॥
जिगर अन्दर जिय लहरावै ।
तड़पै तन के माहिं हाय पिय खोजै कहँ पावै ॥
रही हिये मैं पिय को रट कै । हर दम पिय० ॥ २ ॥
भर भादोँ झड़ मेघ अखंडित बरसै जल धारा ।
आवै पिय की पीर नीर नैनोँ बहै जस धारा ॥
सुरख सब अँखियन में लाली ।
मारै गोसा तानि तीर हिये ज्योँ कसकै भाली ॥
कलेजे अन्दर में खटकै । हर दम पिय० ॥ ३ ॥
ऋतु कुआर के मास आस कागा सँग सुध बिसरी ।
हंस सिरोमनि मूल भूल से तजि मेवा मिसरी ॥
मरम संगत बिन कहँ पाऊँ ।
बिन सतगुरु के बाट घाट घर चढ़ि कैसे जाऊँ ॥
सुरत मन क्योँकरके लटकै । हर दम पिय० ॥ ४ ॥
कातिक तिल के माहिं जाय सोइ सुधि बुधि दरसावै ।
अष्ट कँवल दल द्वार पार पद हद सब समझावै ॥
सरन है सतगुरु की चेली ।
मैली बुद्धि निकारि सार पावै जब लखि हेली ॥
चाँदनी हियरे में छिटकै । हर दम पिय० ॥ ५ ॥
अघ अघहन के मास पाप पुन सब जब जरि जावै ।
निर्मल नीर बनाय जाय सोइ तिरबेनी न्हावै ॥

करम का भोग भरम छूटै ।
बिन बेनी असनान पकड़ जम घर घर के लूटै ॥
बचै नहिँ कोइ सब के पटकै । हर दम पिय० ॥ ६ ॥
पूस पुरुष की आस बास बिन नहिँ जिव निस्तारा।
सतगुरु केवट गैल गवन करि जब जावै पारा ॥
मिलै जब पिउ परसै प्यारी ।
सुन्दर सेज बिछाय पिया सँग सोवै कर यारी ॥
अरज करि प्रीतम से हटकै । हर दम पिय० ॥ ७ ॥
माघ मनोरथ प्रीति परम पद की सुधि संम्हारी ।
ऐसी है कोइ नारि जगत तजि तन मन से न्यारी ॥
सुरत की डोरी लै लावै ।
मूल मुकर[१] की राह दाव करि सहजहिं चढ़ि जावै ॥
कुमति कुनबे की बुधि झटकै । हर दम पिय० ॥ ८ ॥
फागुन फरक निकारि यार सँग खेलै खुल होली ।
आस अबीर उड़ाय गुनन की भर मारै झोली ॥
अरगजा घिसि चन्दन लेपै ।
नील सिखर की राह सुरत चढ़ि सुन्दर में चेपै[२] ॥
चरन में हित चित से गठि कै । हर दम पिय० ॥ ९ ॥
चतुर सहेली चेत हेत हियरे से मन लावै ।
पल पल पालै प्रीति रीति पिया के जो रस चावै ॥
अमल करि होवै मतवारी ।
नसा नैन के माहिँ बिसरि गइ सुधि बुधि सब सारी ॥
गरक[३] डोरी बाँधै बटि कै । हर दम पिय० ॥ १० ॥

(१) दर्पन । (२) चिपक जाय । (३) डूबी हुई, मतवाली ।

बुन्द बैसाख की साख सिन्ध गति सन्तन ने गाई ।
सुनि के सज्जन होय समक्ष करि छोड़ै चतुराई ॥
दीन दिल दुरमत को छोड़ै ।
मन मकरन्द[1] को जानि मानि तन मन को सब तोड़ै ॥
लहर सतसँग की जब चटकै । हर दम पिय० ॥११॥
जबर जेठ की रीति करै कोइ किंकर जब होवै ।
मन के बिषम बिकार काढ़ि के तुलसी सब धोवै ॥
भरम तजि भक्ति भजन करना ।
मन मूरख को बाँधि पकड़ कर जीवतही मरना ॥
निकल घट न्यारी है फटकै ।
हर दम पिय की पीर दरस बिन मन मेरा भटकै ॥१२॥

काष्ठ जिह्वास्वामी (देव)

जीवन समय—सं० १८३४ से १६०६ तक। जन्म स्थान—काशी। सतसंग स्थान—काशी और रामनगर। जाति—सरजूपारी ब्राह्मण भीटी मिश्र शाखा के।

इन का विवाह काशी ही में हो गया था परंतु वैराग्य उपजने पर गृहस्थ आश्रम को त्याग कर सन्यास ले लिया और देवतीर्थ स्वामी नाम हुआ।

आप बड़े पंडित थे और एक बार अपने गुरू से विवाद किया जिस के प्रायश्चित में अपनी जीभ पर काठ की खोल चढ़ा कर सदा को बोलना बंद कर दिया और तख्ती पर लिख कर बात चीत करने लगे। यह केवल साग पात खाते थे। महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायणसिंह काशिराज के आप दीक्षा-गुरु थे। लगभग ७५ बरस की अवस्था में कुआर बदी १२ सम्वत १६०६ को चोला छोड़ा। इन्हों ने विनयामृत और कई छोटे छोटे ग्रंथ लिखे हैं।

॥ प्रेम ॥

(१)

बसौ यह सिय रघुबर को ध्यान ।
स्यामल गौर किसोर बयस[2] दोउ, जे जानहुँ की जान ॥१॥

(१) भँवरा। (२) युवा अवस्था।

लटकत लट लहरत स्रुति कुन्डल, गहनन की झमकान ।
आपुस मैं हँसि हँसि कै दोऊ, खात खियावत पान ॥२॥
जहँ बसंत नित महमह महकत, लहरत लता बितान[१] ।
बिहरत दोउ तेहि सुमन बाग मैं, अलि कोकिल कर गान॥३॥
ओहि रहस्य सुख रस को कैसे, जानि सकै अज्ञान ।
देवहु की जहँ मति पहुंचत नाहिं, थकि गये बेद पुरान ॥४॥

(२)

चीखि चीखि चसकन से राम सुधा पीजिये ।
राम चरित सागर मैं रोम रोम भींजिये ॥ १ ॥
राग द्वेस जग बढ़ाइ काहे को छीजिये ।
परदुक्खन देखत हौं आप सैाँ पसीजिये ॥ २ ॥
तोरि तारि खैंचि खाँचि स्रुति के नाहिँ गींजिये ।
जा मेँ रस बनो रहै वही अर्थ कीजिये ॥ ३ ॥
बहुत काल सन्तन के दोऊ चरन मींजिये ।
देव दृष्टि पाइ बिमल जुग जुग लैाँ जीजिये ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

मैं तो मन ही मन पछिताय रह्यौ ॥ टेक ॥
साज समाज सरस पायहु के, कर से रतन गँवाय रह्यौ ॥१॥
यह नर तन यह काया उत्तम, बिन सतसंग नसाय रह्यौ ॥२॥
पढ्यौ गुन्यौ सिखयौ औरन को, आप बिषय लपटाय रह्यौ३
चित्र बिचित्र करम को धागा, जनम जनम अरुझाय रह्यौ॥४
काहे को कबहूँ यह सुरझहि, दिन दिन अधिक फँसाय रह्यौ५
सदा मुक्ति को ज्ञान अगम लखि, गले हार पहिराय रह्यौ ॥६
जिव को सूत सिवहि से अरुझै, बिनती देव सुनाय रह्यौ ॥७

(१) मंडप ।

॥ उपदेश ॥

(१)

कोई सफा न देखा दिल का, साँचा बना झिलमिल का॥टेक
कोइ बिल्ली कोइ बगुला देखा, पहिरे फकीरी खिलका[१]।
बाहर मुख से ज्ञान छाँटते, भीतर कोरा छिलका ॥ १ ॥
भजन करन मेँ गजब आलसी, जैसे थका मँजिल का ।
औरन के पीसन मेँ सुरमा, जैसे बट्टा सिल का ॥ २ ॥
पढ़े लिखे कुछ ऐसेहि वैसे, बड़ा घमंड अकिल का ।
जहरी बचन योँ मुख से निकलेँ, साँप निकलता बिलका ॥३
भजन बिना सब जप तप झूठा, झूठ तवक्का फजल[२] का ।
क्या कहिये गुरुदेव न पाया, महरम[३] आँख के तिल का ॥४

(२)

समुझ बूझ जिय मेँ बन्दे, क्या करना है क्या करता है ।
गुन का मालिक आपै बनता, अरु दोष राम पर धरता है ॥१
अपना धरम छोड़ि औरौँ के, ओछे धरम पकरता है ।
अजब नसे की गफलत आई, साहिब को नहिँ डरता है ॥२॥
जिनके खातिर जान माल से, बहि बहि के तू मरता है ।
वे क्या तेरे काम पड़ैँगे, उनका लहना भरता है ॥ ३ ॥
देव धरम चाहे सो करि ले, आवागमन न टरता है ।
प्यारे केवल राम नाम से, तेरा मतलब सरता है ॥ ४ ॥

फुटकर

कबित्त

काहू के अधार सेवा बनिज ब्योपार को है,
काहू के अधार थित बित खेत गाम को ॥

(१) खिरका=गदड़ी । (२) बड़ाई की आशा । (३) भेदी ।

काहू के अधार तन सार भ्रात बंधुन को,
काहू के अधार प्रिय सार निज नाम को ॥
काहू के अधार विद्या बुद्धि अरु बल को है,
काहू के अधार हाथी घोड़ा धन धाम को ॥
मैं तो निराधार मेरी हरिहि करैंगे सार,
मेरे तो अधार एक जानो हरि नाम को ॥

कवित्त

कब को पुकारत हौं सुनौ नहीं एको बात,
एहो नँदलाल तुम कैसे प्रतिपाल हौ ॥
कहैं हू दयाल सो तो दया हू न देखियत,
मेरी मति ऐसी ओछी नीके पसुपाल हौ ॥
धस्यो हो नृसिंह रूप तबहीं प्रह्लाद काज,
अब तो न लाज कछू गोधन मैं ग्वाल हौ ॥
डास्यो तेल कान मैं कि बस्यो जाय कानन[1] मैं,
सेस सेज लेटि कि धौं पौंढ़े जा पताल हौ ॥

सवैया

आईं सबै ब्रज गोप लली, ठिठकीं ह्वै गली जमुना जल न्हाने १
औचक आय मिले रसखान, बजावत बेनु सुनावत तानैं ॥२
हाहा [illegible] सिसकीं सिगरी, मति मैन[2] हरी हियरा हुलसाने ३
घूम दिमाने[3] अमाने चकोर से, ओर से दोऊ चलैं दृग बानैं॥४

सवैया

सुनिये सब की कहिये न कछू, रहिये इमि या भव बागर[4] मैं १
करिये ब्रत नेम सचाई लिये, जिन तैं तरिये भव सागर मैं ॥२
मिलिये सब सों दुरभाव बिना, रहिये सतसंग उजागर मैं ३
रसखान गुबिंदहि योँ भजिये, जिमि नागरि[5] को चित गागर मैं॥४

(१) बन। (२) कामदेव। (३) दीवाने। (४) झाड़ी। (५) चतुर स्त्री।

सवैया

वह साँवरो नन्द को छैल अली, अब तो अति ही इतरान लगो१
नित घाटन बाटन कुंजन मैं, मोहिं देखत ही नियरान लगो२
रस खान बखान कहा कहिये, तकि सैनन सों मुसकान लगो३
तिरछी बरछी सम मारत है, दृग बान कमान सु का

शब्द

कहूँ गये प्यारे, झलक दिखा के ॥ टेक ॥
हिरदे बसी माधुरी मूरत, कस जाव प्रीतम खूँट छुड़
बिरह अगिन ने तन मन फूँका, हिया जुड़ावो अमी
भई बावरी इत उत डोलौं, तन मन की सब सुद्धि
मैं तो हौं पतितन को नायक, कैसे बचिहौ पन[1] बिर
अब तो कर मैं लीन्ह सिंधौरा, तुम से मिलिहौं देह ज
बाँह गहे की लाज तुम्हीं को, का पै जावौं तुम्हरो क
प्रेम प्रसाद देहु निज स्वामी, मो को दासनदास बना

रुबाई

ख़ाक आप को समझना, इकसीर[2] है तो यह है
इख़लाक़[3] सब से रखना, तसख़ीर है तो यह
सब काम अपना करना, तक़दीर[5] के हवाले ।
नज़दीक आरिफ़ों[6] के, तदबीर है तो यह है ॥

रुबाई

वीराँ किया जब आप को बस्ती नज़र पड़ी
जब आप नेस्त हम हुए हस्ती नज़र पड़ी ॥
देखा तो ख़ाकसारी ही आली मुक़ाम है ।
ज्यौं ज्यौं बलंद हम हुए पस्ती नज़र पड़ी ॥

॥ इति ॥

(१) पतित-पावन होने का प्रण। (२) रसायन। (३) आदर
(४) बशी करन। (५) मौज। (६) साधों।

शुद्धि पत्र

शब्द संग्रह

पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	बिछुड़	बिछुड़ै
१५	गरीवा	गरीवी
५	भाँड़े	भाँड़ो
६	फाँसी	फाँसी
५	कारति	कीरति
४ (जीवन-चरित्र की)	भाजराज	भोजराज
१६	पड़ा	पड़ी
,,	राग	रोग
८	बिहारा	बिहारी
१२	तेर	तेरे
५	उघाड़े	उघाड़ो
१० (जीवन चरित्र की)	लख	लिख
१ (नोट की)	अथ	अर्थ
३ (नोट की)	सम्बन्धा	सम्बन्धी
४	इद्रिन	इंद्रिन
२	कैस	कैसैं
१८	मँ	मैं
३	म	मैं
१३	लान्ह्या	लीन्ह्यो
नोट	हु	हूँ
६	रँग	रंग
१७	ह	हैं
२०	श्रयौ	आयौ

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	[illegible]
१६६	नोट	फिर मोन (चुप)	फिर मौन
		साधकर बैठे आर	साध क
		धन दोलत	और धन
१७३	नोट	खान	
,,	,,	मे	
१७४	४	अ ठौ	
१७६	४ (चरनदास की)	पडित	
१८:	७ (नोट की)	ह	
२०७	नोट	वग़र	
२५०	१७	वयोँ	
२५४	नोट	गदड़ी	
२५५	६	ह	
२५६	१४	तसख़ीर	